स्मृति किरण

डॉ० प्रभाकर उनियाल

एक समर्पण, एक प्रेरणा...

स्मृति किरण

डॉ0 प्रभाकर उनियाल

प्रस्तावना

स्वर्गीय डॉ. प्रभाकर उनियाल कई रूपो में हमारे बीच रहे। प्रमुख सामाजिक कार्यकर्ता, चर्चित छात्रनेता, अग्रणी आन्दोलनकारी, स्थापित ट्रेड यूनियनिस्ट, सुयोग्य अधिकारी, कुशल प्रबन्धक, अनुभवी राजनीतिज्ञ, पत्रकार, सम्पादक, लेखक, कहानीकार, कवि, गीतकार व टीवी वार्ताकार जैसी बहुत सी भूमिकाओं में हमें उनका सान्निध्य प्राप्त हुआ।

विलक्षण एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. प्रभाकर उनियाल जी की लेखन में विशेष रूचि थी। अध्ययन, भ्रमण और बागवानी के शौकीन प्रभाकर जी का समय सामाजिक कार्यों के साथ लेखन एवं चर्चा/वार्ता आदि बौद्धिक व रचनात्मक गतिविधियों में बीतता।

उन्होंने महिला कल्याण, राजनीति, समाज की आर्थिक उन्नति, आध्यात्मिकता, पर्यटन, गढ़वालियों के उत्पन्न का इतिहास, यात्रा, कथानक, बच्चों की कहानियाँ, कविताएँ, और समाचार पत्रिकाओं और प्रसिद्ध मैगज़ीनों में लेखन किया। एक संपादक और अतिथि लेखक दोनों के रूप में उन्होंने **'आलू का झोल'** और **'रास का एहसास'** जैसे कहानी संग्रह अपने सुधी पाठको को दिए।

उनकी लेखनी ने हमें नई दिशाएँ दिखाई, समाज के मुद्दों पर विचार करने की प्रेरणा दी और हमें अधिक समृद्ध और समर्पित जीवन जीने की ओर प्रोत्साहित किया। उनकी यादें हमें सदैव याद रहेंगी।

यह पुस्तक डॉ. प्रभाकर उनियाल द्वारा लिखे गए कुछ लेखों, कहानियों, कविताओं, शोध और विचारों का संगम है। यह पुस्तक एक स्मरण है, एक श्रद्धांजलि है डॉ. प्रभाकर जी को जो सिद्धान्तों को व्यवहार में उतारने में विश्वास करते थे, इस ओर लाभ-हानि की दृष्टि से विचार ना करते हुए कुछ हटकर करने का साहस रखते और प्रतिकूल परिणाम के भय से अपने सही निर्णयों को नहीं पलटते। 'मनस्येकं वचस्येकं' को अपने कर्म में अपनाते व अकेले पड़ने पर भी धैर्य नहीं छोड़ते थे, यह उनके लेखन में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

उनियाल परिवार एवं विश्व संवाद केन्द्र

श्रद्धांजलि

वे बार-बार याद आते हैं

– विजय कुमार
सुमन नगर, देहरादून

आना और जाना प्रकृति का अटल सत्य है; पर कुछ लोग जाने के बाद भी बार-बार याद आते हैं, उनमें से ही एक थे प्रभाकर जी।

1989 में डॉ. जी के जन्मशती वर्ष मैं देहरादून आया था। यहाँ का काम स्वयं संचालित होता था। इसमें दयाचंद जी की बड़ी भूमिका थी। यद्यपि कुछ समस्याएं भी थीं। डा. नित्यानंद जी मोती बाजार कार्यालय पर ही रहते थे। उनके निर्देश पर अगले कुछ साल में जो टोली बनी, प्रभाकर जी उसके एक महत्वपूर्ण स्तम्भ थे।

देहरादून एक सर्विस क्लास शहर है। इसलिए यहाँ जो नयी टोली बनी, उसमें नीरज जी, हरीश जी, प्रभाकर जी, ऋषिराज जी, नरेश बंसल, नंदकिशोर जी आदि सब सरकारी नौकरी वाले थे। किसी भी कार्यक्रम आदि के समय ये सब दफ्तर से सीधे संघ कार्यालय आकर काम बांट लेते थे। इससे मुझे शेष जिले और विभाग में काम का समय मिल जाता था।

प्रभाकर जी की प्रतिभा बौद्धिक क्षेत्र में अधिक थी। विभिन्न पत्रक या बौद्धिक के बिन्दु आदि वहीं बनाते थे। 1998 में मेरठ प्रांत का महाशिविर था। उसमें बौद्धिक, प्रचार आदि की जिम्मेदारी देहरादून वालों पर थी। अत: मेरे साथ प्रभाकर जी, डॉ. विजयपाल जी और लक्ष्मीप्रसाद जी एक सप्ताह पहले ही वहाँ पहुँच गये थे। एक टैंट में निवास तथा दूसरे में हमारा कार्यालय था। इस टीम के सुव्यवस्थित काम की सबने प्रशंसा की।

उनकी इस प्रतिभा का उपयोग फिर विश्व संवाद केन्द्र ने किया। जब देहरादून से **'राष्ट्रदेव'** का प्रकाशन शुरू हुआ, तब वे ही उसके संपादक बने। फिर पत्रिका का नाम और कार्यालय बदलने से संपादक भी बदल गये।

डॉ. नित्यानंद जी के प्रति प्रभाकर जी के मन में बहुत श्रद्धा थी। जब उनका विवाह हुआ, तो डॉ. साहब जेल में थे; पर वे उनका आशीर्वाद लेने सपत्नीक जेल में गये। 09.02.2016 को डॉ. साहब की 90वीं वर्षगांठ को उनके श्रद्धालुओं ने उल्लास से मनाने का निश्चय किया। एक स्मारिका प्रकाशित करने की योजना बनी और उसके संपादन की जिम्मेदारी प्रभाकर जी को दी गयी।

पर कार्यक्रम से पहले ही डॉ. साहब का देहांत हो गया। ऐसे में उनकी बरसी पर स्मारिका के प्रकाशन का निर्णय हुआ। प्रभाकर जी ने इसके लिए सौ से भी अधिक लोगों से पत्र, फोन या ईमेल से संपर्क किया। कई लोगों से फोन पर ही साक्षात्कार लिये गये। स्मारिका के लिए प्रभाकर जी ने बहुत परिश्रम किया। लेख, संस्मरण और चित्रों का संयोजन बहुत सुंदर था। तकनीकप्रिय होने के कारण उन्होंने स्मारिका का 90 प्रतिशत काम अपने लेपटॉप पर ही कर लिया था। आठ जनवरी, 2017 को बहुत ही यादगार कार्यक्रम हुआ। उसमें वह स्मारिका सबको नि:शुल्क दी गयी। अधिकांश लोगों के पास आज भी वह सुरक्षित है।

विश्व संवाद केन्द्र की पत्रिका **'हिमालय हुंकार'** के हर विशेषांक में उनके लेख होते ही थे। चुनाव के बाद उनका विश्लेषण बहुत सटीक होता था। अनेक विशेषांकों का संपादन भी उन्होंने किया। देहांत से कुछ समय पूर्व ही डॉ. नित्यानंद जी से संबंधित एक पुस्तक का संयोजन और संपादन उन्होंने किया था। उसके लोकार्पण में उनका उद्‌बोधन बहुत ही भावपूर्ण था। यदि वे काम को स्वीकार कर लेते थे, तो हर हाल में पूरा करते थे।

प्रभाकर जी को उनकी कहानियों के लिए भी याद किया जाएगा। वे एक मासिक लघु पत्रिका **'गगरी'** निकालते थे। उसमें उनकी एक कहानी होती ही थी। पाठक सबसे पहले उसे ही पढ़ते थे। उनकी गैराज में स्थित गगरी का कार्यालय अति व्यवस्थित था। संभवत: बैंक की उनकी ट्रेनिंग यहाँ भी काम आयी थी।

मेरा उनके परिवार से बहुत लगाव था। उनके तीनों बच्चों के विवाह में मैं शामिल हुआ था। संघ का काम करते हुए सैकड़ों लोगों से संपर्क और निकट संबंध बनते हैं; पर मित्रता कम ही लोगों से हो पाती है। प्रभाकर जी मेरे मित्र थे। हम अपने मन की बातें भी साझा कर लेते थे; पर न जाने क्यों, अचानक ही वे चले गये। शाम को टहलते हुए कई बार मैं मोथरोवाला रोड पर निकल जाता हूँ, तो पैर अनायास उनके घर की ओर मुड़ने लगते हैं; पर अब वहाँ वे नहीं, उनकी यादें ही बाकी हैं।

न हाथ थाम सके, न पकड़ सके दामन
बड़े करीब से उठकर चला गया कोई।।

श्रद्धांजलि

साहित्यकार डॉ. प्रभाकर उनियाल अपने साहित्य में जीवित

डॉ0 अतुल शर्मा
जैन प्लॉट, वाणी विहार
अधोईवाला, देहरादून

स्मृति शेष बड़े भाई साहब प्रभाकर उनियाल जी की कहानियाँ सार्थक संदेश देने वाली व रोचक लगीं। तो हुआ ये कि उन कहानियों का एक संग्रह आलू का झोल तैयार करने का विचार बन गया। उनियाल जी ने मुझसे उस संग्रह की भूमिका लिखने का आग्रह किया। तो मैने एक बार फिर से पूरी कहानियाँ पढ़कर भूमिका लिख दी। वह छप भी गयी। अब उसके विमोचन की चर्चा हुई तो उन्होंने आदेश दिया कि आप मंच पर होंगे और कुछ और लोग भी। विमोचन रीजेंट होटल में हुआ। बहुत अच्छा कहानी संग्रह था यह। साहित्य में एक महत्वपूर्ण पदचिह्न की तरह गहरा और प्रखर। वहाँ मुझे कुछ विचार रखने के लिए कहा गया। मैने उस संग्रह के विषय में कहा पर प्रभाकर उनियाल जी से अपने पारिवारिक परिचय के विषय में कुछ बातें कहीं।

हमारा परिचय उनसे आपातकाल के दौरान हुआ। लोकनायक जयप्रकाश नारायण के आह्वान पर देशभर के बहुत युवाओं ने आपातकाल का विरोध किया और भूमिगत बैठकों का दौर चला। एक पदयात्रा भी इतिहास बो गयी। जो दिल्ली में लाल किले से शुरू होकर बोट क्लब तक चली। देशभर से आन्दोलनकारी उसमे शामिल हुए। उनियाल जी कुर्ता पाजामा पहने उस यात्रा में पूरे आत्मविश्वास के साथ चल रहे थे। हमारी दीदी कहानी कार रेखा शर्मा व कवयित्री रंजना शर्मा के साथ दीदी रीता शर्मा भी इस मार्च में शामिल थे। देहरादून से बहुत से लोग शामिल रहे। राजेन्द्र प्रसाद डोभाल, सुशीला डोभाल, रंजना डोभाल, विजय स्नेही, हमारी माता जी रमा शर्मा व अन्य लोग शामिल रहे। उनियाल भाई साहब नारे लगाते हुए चल रहे थे। **अभी तो ये अंगड़ाई है आगे बड़ी लड़ाई है।** यह जय प्रकाश का बिगुल बजा तो जाग उठी तरुणाई है।

भाई प्रभाकर उनियाल जी प्रतिबद्ध विचारों के साथ आन्दोलन में शामिल रहे। उनका जीवन इसी संघर्ष में बीता। जो उनके साहित्य में भी दिखा। परिपक्व सोच के धनी रहे। आपातकाल के दौरान वे मंचो पर एक गीत बहुत जोश में गाते थे। **जय प्रकाश का बिगुल बजा तो जाग उठी तरुणाई है, तिलक लगाने क्रांति द्वार पर आयी है।** लोगों में जोश भर जाता। उसके बहुत वर्ष बाद उनकी कविता और कहानियाँ पढ़ने का मौका मिला। उस समय हम अजबपुर में श्री कुशल पाल सिंह जी के घर पर रहते थे। और वही अजबपुर में प्रभाकर उनियाल जी और श्रीमती विनोद उनियाल जी परिवार के साथ रहते थे। श्रीमती विनोद उनियाल जी बहुत सक्रिय समाजसेवी वह सक्रिय राजनीति में शामिल रहीं। तब वे हमारे परिवार के साथ बैठकर बातें करते और अपनी सशक्त पत्रिका गगरी भी देते। हर अंक में उनकी कहानियाँ छपती और लोग उन्हें चाव से पढ़ते और प्रतीक्षा करते।

वहीं कहानी संग्रह छापने का विचार बना। यह उन्होंने अपने संग्रह के विमोचन के अवसर पर कहा था कि भाई डॉ. अतुल शर्मा ने बार बार कहा तब मेरा मन कहानियाँ छपवाने का बना। यह उनकी विनम्रता थी। गलत का विरोध करना उनका स्वभाव था। सीधा सरल व गहरा जीवन जिया उन्होंने। कई बार हमने घर पर भी उनसे गीत सुने। आदरणीय भाभी जी को हमारी अम्मा जी बहुत स्नेह करती थीं। कवि कहानीकार प्रभाकर उनियाल जी की कहानियाँ संवेदनशील और जनप्रतिबद्ध विषय को लेकर ही होतीं। आसपास का वातावरण बनता। मेरे संपादन में 'वाह रे बचपन' पुस्तक सीरीज में डॉ. प्रभाकर उनियाल जी का बचपन का रोचक संस्मरण छपा है। श्रीमती विनोद उनियाल जी का भी। जो बहुत पसंद किया गया है। वे कलम के धनी रहे। जब भाई प्रभाकर उनियाल जी के असमय निधन का समाचार मिला तो हम भावुक हो उठे कि हमारे पारिवारिक साहित्यकार हमसे बिछुड़ गये। उनका साहित्य हमेशा प्रेरणा देता रहेगा। उनको शत्-शत् नमन।

श्रध्दांजलि

सौम्य की प्रतिमूर्ति हैं प्रभाकर उनियाल

रोशन लाल अग्रवाल
राष्ट्रीय संगठन मंत्री
अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन

शब्द विनम्र मित्रवत व्यवहार
अक्षोम गगन से, संबल विचार।
सकल प्रभावित, मधुर व्यवहार
सद्भावना, कर्म- शील के भंडार।

ऐसा व्यक्तित्व जिनका संपूर्ण जीवन प्रेरणा का पुंज रहा। सरल उदार हृदय, मृदभाषी, सहयोगी वृति, मिलनसार, अपनत्व का भाव आकर्षक व्यक्तित्व के धनी जिससे मिलते उसको अपना बना लेते थे। सन् 1971-72 जब हम श्री गुरु रामराय डिग्री कालेज में बीए के विद्यार्थी थे उसी समय मेरी और मेरे अभिन्न मित्र डॉ. तारा चंद की भेंट श्री प्रभाकर उनियाल जी से हुई। प्रथम भेंट में उनके व्यक्तित्व एवं व्यवहार से प्रभावित होकर हम उनके हो गए।

प्रारंभिक जीवन कट्टर कांग्रेसी विचारधारा से प्रभावित रहा। परंतु प्रभाकर जी ने कभी भी विचार को लेकर विरोध नही किया। एक अच्छा शिल्पकार होने के नाते कैसा भी मेटीरियल हो उसमें अच्छी आकृति देने का गुण होता है। संघ में मेरा प्रवेश कराने का श्रेय किसी का है-वो श्री प्रभाकर जी का है। प्रभाकर जी केवल मेरे मित्र ही नहीं मेरे आदर्श भी रहे। समय-समय पर उनका मार्गदर्शन मुझे सदा मिलता रहा। वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के आदर्श स्वयंसेवक रहे। न जाने कितने लोगों को इस पावन धारा से जोड़ा।

इसी विचार को लेकर 1973 में डीएवी कालेज में विद्यार्थी परिषद् का काम खड़ा होना चाहिए श्री विजय स्नेही व प्रभाकर जी हम सभी को विद्यार्थी परिषद् का सदस्य बनाया। विद्यार्थी परिषद के बैनर से अध्यक्ष पद पर चुनाव भी लड़ा। चुनाव चुनौतियों से भरा था। परंतु इरादे बहुत मजबूत थे । प्रश्न हार-जीत

का नहीं था। कालेज में में एक राष्ट्रीय विचार को स्थापित करना था। कार्यकर्ताओं की टोली को खड़ा करना था। ये हम सभी के लिए गर्व का विषय है उस समय के सभी कार्यकर्ता आज भी विभिन्न क्षेत्रों में आज भी पथ पर उसी विचार को पुष्ट कर रहे हैं।

श्री प्रभाकर जी बहुत ही सामान्य परिवार से संबंधित रहे। अपनी विशिष्ट योग्यता से बैंक में उच्चस्थ पदों को सुशोभित किया। उन्होंने सदैव संघ कार्य को प्राथमिकता दी। जीवन में कभी डिगे नहीं, हटे नहीं कितनी भी कठिनाइयाँ, चुनौतीयाँ आई ये अपने ध्येय के प्रति अटल रहे। 1975 में इमरजेंसी के समय न जाने कितने कष्टों को सहन किया। बैंक सर्विस भी दांव पर थी। विपक्षी खेमें ने इन पर जानलेवा आक्रमण भी किया। बुरी तरह घायल हुए परंतु वे भारत माता के इस सपूत को डिगा नहीं पाए।

प्रभाकर जी एक अच्छे वक्ता ही नहीं बहुत बड़े विद्वान थे। अनेक सामाजिक विषयों पर अपने विचार व्यक्त करते थे। अनेक विचार गोष्ठियों, टीवी डिबेट में बेबाक अपने विचार व्यक्त करते थे। उनकी भाषा शैली पर बहुत पकड़ थी। बडी शालीनता से प्रभावित ढंग से अपने विषय को प्रतिवादित करना उनकी विशेषता का गुण था। प्रभाकर जी एक अच्छे साहित्य के पुरोधा थे। वे साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर थे। उन्होंने सेवानिवृति के पश्चात स्वयं अपने प्रयासों से अंतिम समय तक 'गगरी' पत्रिका निकालते थे उसमे समायिकी विषयों पर जन चेतना जागृत हो लेख लिखते थे।

'दीन सहचर को भी संग बिठाते'
'चिरकालिक से ये प्रीत निभाते'
'सोच हो जैसे व्योम समान'
'राष्ट्र प्रगति सेवा का मार्ग बताते'

ऐसे साहित्य रत्न, कलम के धनी, प्रखर वक्ता, समासेवी हम सब के प्रिय प्रभाकर जी का असमय गोलोक प्रस्थान करना समाज के लिए बहुत बड़ी क्षति है। जो अपूरणीय है। यूं तो लोग इस जहाँ में आते हैं और चले जाते हैं। पर ऐसे भी कुछ लोग हैं जो जाकर भी नहीं जाते वो हमारे दिलों में रह जाते हैं।

श्रध्दांजलि

संघ के निष्ठावान, सौम्य स्वभाव एवं मृदुभाषी स्वयं सेवक प्रभाकर जी

धर्मवीर सिंह जी
वरिष्ठ प्रचारक
राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ।

सन् 1975 में आपातकाल के समय राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ पर प्रतिबंध लगने के बाद माननीय प्रोफेसर राजेन्द्र सिंह उपाख्य रज्जू भय्या द्वारा मुझे गढ़वाल मण्डल के चारों जिलों चमोली, पौड़ी, टिहरी एवं उत्तकाशी के संघ कार्य का दायित्व दिया गया था। तब प्रभाकर उनियाल जी भारतीय स्टेट बैंक, नरेन्द्र नगर जिला-टिहरी गढ़वाल (उत्तराखण्ड) में सेवारत थे।

उन दिनों चमोली जिले से मेरा गिरतारी वारन्ट था। गढ़वाल मण्डल का पुलिस-प्रशासन बड़ी तत्परता के साथ मुझे खोज रहा था।

मैं गढ़वाल मण्डल के चारों जिलों का प्रवास करते हुए माह में दो बार उनसे संपर्क करता था। उन दिनों मैं आधे पृष्ठ का एक साईकिलो स्टाइल 'गढ़वालटाईम्स' तैयार कराकर सम्पूर्ण गढ़वाल मण्डल में अपने स्वयं सेवकों तक पहुँचाता था। उसी गढ़वाल टाईम्स के माध्यम से मैं प्रभाकर उनियाल जी से भी स्टेट बैंक, नरेन्द्रनगर में संपर्क करता था। आपातकाल पर्यन्त उनसे मेरा संपर्क बना रहा। परन्तु प्रभाकर जी ने सतर्क रहकर संपर्क रखा, जिससे अन्य किसी को मेरे सम्बन्ध में कोई आभास भी नहीं हो सके। उन दिनों मैं गढ़वाल मण्डल का एकमेव प्रचारक शेष बचा था। मेरे गिरतार होते ही गढ़वाल मण्डल का संघ कार्य प्रभावित हो जाता। आपातकाल पर्यन्त मेरा उनसे संपर्क बना रहा।

आपातकाल के 30 वर्ष बाद मेरा उनसे पुनःसंपर्क हुआ। तब प्रभाकर उनियाल जी देहरादून रहते थे। उन दिनो मैं उत्तराखण्ड का प्रान्त सेवा प्रमुख था। कई बार मैं रात्रि में उनके देहरादून स्थित निवास पर भी रात्रि में रहा था। उनके हृदय में मेरे लिए बहुत बड़ा स्थान था। वे मेरा बहुत सम्मान करते थे। उनके परलोकवासी होने का समाचार सुनकर मुझे लगा कि मैंने कुछ खो दिया है।

श्रध्दांजलि

बहुमुखी प्रतिभा के धनी
डॉ. प्रभाकर उनियाल

डॉ. एम.आर. सकलानी
54/1 कृष्णनगर, देहरादून

बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. प्रभाकर उनियाल जहाँ एक और एक साहित्यकार व पत्रकार थे, वहीं दूसरी और एक समाज सेवी व बुद्धिजीवी थे।

उनका जन्म 30 दिसम्बर 1950 को ग्राम के मरी गाँव पट्टी बमुण्ड, जिला टिहरी गढ़वाल में हुआ। आपके पिता स्व. मनोहर लाल उनियाल एक वैद्यक व ज्योतिषी थे। जो अपने वैद्यक कार्य व बच्चों की पढाई के लिए देहरादून भो गये। बालक प्रभाकर ने देहरादन में ही शिक्षा गहण की और मेधावी छात्र के रूप में हाईस्कूल परीक्षा प्रथम श्रेणी में प्राप्त की और इण्टरमीडिएट करने के दौरान प्रान्तीय शिक्षा दल (पी.एस.डी.) के डिस्ट्रिक्ट सीनियर अण्डर ऑफिसर रहे। गुरू राम राय कॉलेज में बी.ए. करते हुए छात्र संघ के सचिव रहे। तत्पश्चात एम.ए. की पढ़ाई के दौरान डीएवी (पी.जी.) कॉलेज में छात्र संघ महासचिव का भी चुनाव लड़ा। इस प्रकार आप एक मेधावी छात्र के साथ छात्र राजनीति में सक्रिय रहें। आप राजनैतिक और सामाजिक कार्यकर्ता के साथ एक साहित्यकार भी रहे। साहित्य के क्षेत्र में 'आलू का झोल' नामक कहानी संग्रह काफी उत्कृष्ट और चर्चित रही। आपका एक और कहानी संग्रह 'रास का एहसास' आपके स्वर्गवास के बाद आपकी पत्नी श्रीमती विनोद उनियाल ने प्रकाशित किया जिसमें बेहतरीन कहानियाँ है। आप एक कहानीकार के साथ एक कवि भी रहे, जिन्हे आपने देहरादून के विभिन्न मंचों पर प्रस्तुत किया। सामाजिक, सांस्कृतिक और समसामयिक विषयों पर आपके अनेकों लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुये तथा आकाशवाणी, दूरदर्शन देहरादून से समसामयिक विषयों पर आपने कई परिचर्चाओं और वार्ताओं में सहभागिता की।

एक वरिष्ठ पत्रकार के रूप में आपने अपनी विशेष छवि बनाई। आप 'गगरी' नामक मासिक पत्रिका के कार्यकारी सम्पादक रहे और इस पत्रिका को ऊँचाई तक पहुँचाया। इसे अपने गम्भीर व विद्वततापूर्ण सम्पादन से सजाये रखा।

आप उत्तरांचल साप्ताहिक पत्र से भी लगातार जुड़े रहे तथा संवाद समिति के प्रमुख के तौर पर एक पत्रकार की भूमिका बड़ी कुशलता से निभाई। आपने हिन्दोस्तान समाचार के 'उत्तरांचल विशेषांक, राष्ट्र देव के 'विजय दिवस' विशेषांक तथा 'कर्मयोगी डॉ. नित्यानन्द' पुस्तक का सम्पादन किया। आप एक पत्रकार व साहित्यकार के साथ एक कुशल वक्ता के रूप में भी जाने जाते हैं। जिससे कई सेमिनारों और गोष्ठियों में विषय विशेषज्ञ के रुप में आपको आमंत्रित किया जाता था।

अपनी मेहनत, लगन और निष्ठा से भारतीय स्टेट बैंक, ऑफ इण्डिया में एक लिपिक के पद से पदोन्नत होकर मुख्य प्रबन्धक (कार्यालय प्रशासन) और मुख्य प्रबन्धक (राजभाषा) के महत्वपूर्ण पद पर पहुँचे और वर्ष 2007 में आपने बैंक से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ली। भारतीय स्टेट बैंक में भी आप स्टॉफ एसोसिएशन के सचिव और अधिकारी संघ के केन्द्रीय समिति के सदस्य रहे। बैंक में राजभाषा हिन्दी के विकास में आपका योगदान रहा।

आपके साथ मेरा 1975 से सम्पर्क रहा जब आप भारतीय स्टेट बैंक नरेन्द्रनगर में कार्यरत रहे भौर तब से हम बराबर मिलते रहे, आपकी विद्ववता व व्यक्तित्व से मैं काफी प्रभावित रहा और तब से और भी आत्मीयता बढ़ी, जब से आपका रिश्ता मेरी बुआ की पुत्री विनोद बहुगुणा से हुआ। तत्पश्चात आपसे व्यक्तिगत व पारिवारिक मैत्री व संवाद कायम रहा।

आप, किशोरावस्था में ही कई रचनात्मक और सामाजिक संगठनों से जुड़ गये थे। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद और जय प्रकाश नीत सम्पूर्ण सम्पूर्ण क्रान्ति आन्दोलन के आप उ.प्र. स्तर के युवा नेता रहे। सामाजिक संगठनों में अनेक दायित्वों का निर्वहन करते हुए आप 'उत्तरांचल संवाद' समिति के प्रदेश प्रमुख और 'देवभूमि विचार मंच' के प्रान्तीय समन्वयक भी रहे।

आप हिन्दी, अंग्रेजी विषयों के साथ संस्कृत भाषा और ज्योतिष के एक अच्छे ज्ञाता रहे। ज्योतिष की विद्या तो आपको अपने पिता से विरासत में मिली। प्रबन्धक (राजभाषा) के रूप में आपने स्टेट बैंक में भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। अगले बैंक में कई हिन्दी कार्यशालाएं, हिन्दी दिवस और हिन्दी गोष्टियों का सफल आयोजन किया मुझे भी सहायक निदेशक (राजभाषा) आयकर विभाग के रूप में कई हिन्दी कार्यशालाओं

में स्टेट बैंक में व्याख्यान देने की आपके साथ सुअवसर प्रान्त हुआ।

आप राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से काफी नजदीकी से जुड़े रहे और द्वितीय वर्ष तक शिक्षित रहे। आपने संघ में कई महत्वपूर्ण दायित्व संभाले। राम जन्मभूमि आन्दोलन के दौरान संघ के वैचारिक प्रभाव के विस्तार में गठित उत्तरांचल संवाद समिति के पाँच वर्ष तक प्रान्त प्रमुख रहे।

आप एक विचारवान राजनैतिक विश्लेषण भी रहे। जिससे विभिन टी.वी. चैनलों द्वारा आपको समय-समय पर परिचर्चा/वार्ता हेतु आमंत्रित किया जाता रहा। अध्ययनशीलता के कारण आपको विषयों की गंभीर जानकारी रहती थी, जिससे आपके विचार/भाषण काफी प्रभावशाली रहते थे। भारतीय संस्कृति, मानवीय जीवन मूल्य और भारतीय परम्परायें आपके रूचि के विषय रहते थे।

आप एक सक्रिय व्यक्ति जीवनभर रहे। नये-नये स्थानों का भ्रमण करना, आपका शौक था, एक धार्मिक व आध्यात्मिक व्यक्ति के रुप में भारत और नेपाल के बड़े-बड़े शक्तिपीठों, तीर्थस्थलों भगवान राम से सम्बन्धित सभी स्थानों का भ्रमण किया। पहाड़ों के प्रति आपका विशेष लगाव रहा और अपने गाँव के प्रति लगाव होने के कारण बराबर गाँव जाते रहे।

ऐसी बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति डॉ. प्रभाकर जी इस दुनिया को छोड़कर बहुत जल्दी चले गये जिससे साहित्य, पत्रकारिता, भाषा और समाज सेवा के क्षेत्र का काफी नुकसान हुआ। यद्यपि इस अपार क्षति की पूर्ति मुश्किल है, तथापि उनके सिद्धान्त और विचार हमारे मानस पटल पर हमेशा जीवित रहेंगे। ऐसी विलक्षण विभूति को विनम्र श्रद्धांजलि व शत-शत नमन।

Remembering... My Dear Friend Prabhakar!

Ravi Juyal
School friend

An early morning quick scan of my social media posts shockingly informed me of passing away of our dear friend for fifty years. He was not at all suited to leave us so suddenly when we had regathered and rekindled our childhood friendship. Now we were all retired and all the time to pursue our passions, hobbies and things which we loved but could not follow up due to hectic commitments.

I called up another classmate. He too could not believe it.

Prabhakar and me studied in late seventies in the same school and class before he passed Intermediate and shifted to a bigger platform. He joined DAV college and became more active in RSS & ABVP activities.

But how can I forget his " jonoon" for wearing uniform getting it starched and "kadak" ironed. He was our cadet captain who was sort of in charge of the provincial cadet training (equivalent to NCC) .Always commanding the parade on top of highest pitch of voice. He led all from the front giving instructions for distribution of uniforms to after parade biscuits and snacks.

One fine day I saw his posters pasted in prominent places in Dehradun. He was ABVP candidate for union presidentship.

That was the era when students having communist leanings such as SFI mainly from Punjab had total domination. Reason being, they were wards of big Agriculturist having deep pockets. Our own Prabhakar had no money to fight. He was an ordinary soul from a family of priests having high morals and no flush money. We students often went home via Hanuman chowk (mandir) to receive big bounty of prasad whenever Prabhakar was doing the duties of the Hanuman Mandir priest. He did it often to be a stopgap priest to fill the position briefly whenever his uncle went away to do some other duties. Tuesdays were often done that way.

He joined SBI as a direct recruit, being first class throughout his school days; to help the family and continue his thirst for knowledge. Those days first division holders were offered direct recruitment in Banks.

I came to know that he could not pursue his passion to join IMA as an officer.

But then he devoted himself to his profession with utmost sincerity and perfected it so well to rise fast and also be liked by all his colleagues in the Bank.

We remained so proud of him.

I shifted to do my Bachelor's degree in Engineering and subsequently got commissioned into Indian Navy.

Life was very harsh on him. Political rivalries, especially during emergency saw him going underground and injured severely by the goons of opposition party. What was his fault? Why?

Because my friend never compromised on his principles.

We are so proud of him and his values.

We picked up threads again on 2007when I migrated back to Dehradun. We often talked, exchanged notes, talked about his books, passion for writing.

Magazine 'गगरी' kept him happy and contended while Mrs. Vinod

Uniyal was pursuing her social and political passions.

They remained so contended and a happy couple.

I must confess that he was not given his due in politics. When last assembly elections demanded him to appear on TV debates as political analyst; he did it with grace and serious explaining without hurting anyone. Then one episode of AAP party editing his statement was the most hurting phase of his life.

He felt humiliated. Yes!

Then few old friends, who swore by his ideals of 50-55 years surrounded and gathered around him.

We offered to march with him for his fight for principles and truth.

श्रध्दांजलि

प्रिय विनोद,

प्रिय उनियाल जी का शरीरिक रूप से हम सबसे विदा होना अत्यंत कष्टदायक सदमा है। लेकिन विधि द्वारा निर्धारित तिथि को कोई भी बदल नहीं सकता, ये मानकर अपने को संभालना पड़ता है।

उस आत्मा के निर्जला एकादशी को इस शरीर से विदा होकर अनंत में प्रभु के चरणों में पहुंचने का सौभाग्य पाया होगा, ऐसा मैं मानती हूं।

पता नहीं क्यों कल रात स्वप्न में मैंने तुम्हारे चाचा जी के साथ प्रभाकर जी को देखा और मैं कह रही हूँ उनियाल जी आपके साथ हैं। इन्हें देख कर मैं निश्चिंत हो गई हूं, फिर मेरी नींद खुल गई। ये मेरे मन का भ्रम होगा, लगातार उनका ध्यान आने से ऐसा हुआ होगा।

तुम्हारे लिए वे सामाजिक क्षेत्र में बहुत पहचान बना गए हैं। शरीर को भूलकर उनकी आत्मा की संतुष्टि के लिए अपनी प्रतिभा और शक्ति का उपयोग करो। शारीरिक रूप से असमर्थता के कारण तुम्हारे पास न होने की पर मन से भगवान से प्रार्थना करती हूं वह तुम्हे व परिवार को इस विषाद से उबरने की शक्ति दे, तुम्हारे बच्चे योग्य हैं, तुम्हें अच्छी तरह से संभाल लेंगे ऐसा विश्वास है।

तुम्हारी चाची

विमला

श्रध्दांजलि

किसकी गगरी रीती

श्रीमती कमला पंत
108 विवेकानंद ग्राम, फेज-1, लेन- 1,
जोगीवाला, हरिद्वार रोड, देहरादून।

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग भारत सरकार द्वारा 10 से 17 वर्ष तक के बच्चों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करने और उनमें शोध और अनुसंधान की प्रवृत्ति जगाने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष आयोजित होने वाली सबसे बड़ी गतिविधि राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के उत्तरांचल राज्य की राज्य समन्वयक संस्था-पीपुल्स एसोशिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स ;पहलद्ध की अध्यक्ष होने के नाते भारत सरकार द्वारा उस वर्ष के केन्द्रीय विषय- Bio diversity: Nutrure the nature for our future का अपने राज्य के बच्चों की सुविधा के लिए जैव विविधता: प्रकृति बचायें, भविष्य संवारे शीर्षक से हिन्दी अनुवाद की मार्गदर्शिका को प्रिंट कराने के लिए तब फालतू लेन देहरादून स्थित सरस्वती प्रेस की एक कुर्सी पर यूं ही बैठी थी कि सामने की मेज पर इधर-उधर बिखरी कुछ किताबों और पत्रिकाओं के बीच एक पतली सी पत्रिका के आसमानी आवरण ने मेरा ध्यान अपनी ओर खींचा और मैंने वह पत्रिका उठा ली। हाथ में आते ही पत्रिका के नाम ने मुझे आहलादित किया-'गगरी' जिज्ञासा और बढ़ी। मैंने पृष्ठ पलटने शुरू किये तो पढ़ती ही चली गई और 23 पृष्ठ पढ़ने के बाद 'सेवा का आभूषण' शीर्षक से जो कहानी पढ़ी उसने मुझे झकझोर दिया। मुझे लगा कि कौन हो सकता है यह व्यक्ति? जो लिखता है सेवा का आभूषण त्याग है, भोग नहीं। यह कहानी कोई भुक्तभोगी ही लिख सकता है। लेखक का नाम फिर से देखा- प्रभाकर उनियाल। प्रेस के मालिक आदेश भाई से पूछा। उन्होंने कहा-बैंक में काम करते हैं शायद। तब से उस लेखक को खोज रही थी जिनको उनकी पत्नी श्रीमती विनोद उनियाल से परिचय के बाद ही पा सकी। प्रथम परिचय में ही मैंने गगरी की सदस्यता ग्रहण कर ली। तब से हाल तक गगरी के हर अंक में प्रकाशित उनकी छोटी-बड़ी कहानियों, कविताओं और आलेखों को पढ़ने का मोह संवरण नहीं कर पाती हूँ।

श्रीमती विनोद जी से परिचय के बाद उनके घर आने-जाने का क्रम शुरू हुआ तो डाक्टर प्रभाकर जी से बात-चीत व सम सामयिक विषयों पर चर्चा होती रहती थी। चूंकि मेरा कार्यक्षेत्र विज्ञान लोकप्रियकरण, संवेदीकरण व संचारीकरण है और उनका राजनीति, आध्यात्म, ज्योतिष और आयुर्वेद। अत: हमारे विमर्श का विषय ही उनके वैज्ञानिक पक्ष को लेकर होता था। वे लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार थे और मैं एक सामान्य पाठक, फिर भी मेरे सारे तर्क, कुतर्को पर विराम लगाने की जो अद्‌भुत क्षमता उनमें थी वह दुर्लभ है। उनके लेखन से भी अधिक प्रभावित करती थी उनकी अपने यात्रा वृतान्तों को बताने की शैली। लगता था जैसे मैं भी उनके साथ-साथ चल रही हूँ और वे सारे परिदृश्य साकार हो रहे हैं। 2013 में प्रकाशित उनकी छोटी-छोटी कहानियों का संग्रह 'आलू का झोल' तो मेरे भतीर इस कदर समाया हुआ है कि जब भी शाम की सब्जी बनाने की कोई दुविधा पैदा होती है उसका केवल एक ही समाधान होता है-आलू का झोल।

ज्योतिष को लेकर समाज में कई तरह के भ्रम फैले हैं। कुछ का सारा जीवन चक्र ही ज्योतिष की सहायता के चलता है और कुछ ऐसे भी हैं जो इस विद्या पर विश्वास ही नहीं करते। हमारी संस्था पहल ने 2018 में जब मध्य हिमालयी संस्कृति में ज्ञान, विज्ञान और पराविज्ञान पर एक ग्रंथ के प्रकाशन की योजना बनाई तब 'ज्योतिष की वैज्ञानिकता' शीर्षक आलेख से डाक्टर प्रभाकर उनियाल के ज्योतिष विषयक ज्ञान ने वैज्ञानिकों को भी अभिभूत कर दिया। मैं उस आलेख के कुछ अंश यहाँ उद्‌घृत कर रही हूँ- 'ज्योतिष सामान्यत: सौर मण्डल के ग्रहों, की गति, स्थिति एवं प्रभाव का शास्त्र है। प्रचलित अर्थ में ज्योतिष को भविष्य कथन का विषय माना जाता है, यह विश्वभर में अनेक रूपों में प्रचलित है। भविष्य जानने की जिज्ञासा सभी में होती है अत: यह काफी लोकप्रिय विषय है और कई लोगों की आजीविका का भी माध्यम बन गया है। भविष्य विषयक कथन के लिए कई तरीके अपनाये जाते हैं, ग्रह गणना के अतिरिक्त हस्तरेखा, स्वप्न ज्योतिष, शकुन विचार, अंक ज्योतिष, टेरो पद्धति और पशु वर्ष आधारित चीनी तिब्बती पद्धति सहित अनेकों पद्धतियां प्रचलन में है और लाखों-करोड़ो लोग इन पर विश्वास करते हैं।

भारत में ज्योतिष का इतिहास बहुत पुराना है ज्योतिष को पांचवां देव भी कहा जाता है, ऋग्वेद संहिता में द्वादश चक्र की चर्चा है। पंचागों में आज भी

पूर्णमासी, संक्रांति व चन्द्रसूर्य ग्रहणों की गणना प्राचीन पद्धतियों से होती है जो आज भी एकदम सटीक मानी जाती है। ध्यान देने योग्य बात है कि पश्चिमी देशों में सौर मास का चलन होता है और मध्यपूर्व के मुस्लिम देशों में चन्द्रमास को माना जाता है जबकि भारतीय पद्धति में दोनों को अपनाया गया है। मध्य हिमालय के गढ़वाल कुमाऊं में तो ज्योतिष जनजीवन में रची बसी है। यह इतने सरल रीति से हुआ है कि पुराने ज्योतिष उंगलियों पर गणना करके ही कुण्डली बना देने थे। पुराने जमाने में, जब घड़ियां नहीं होती थीं, ज्योतिषी लोग समय की गणना ठीक ठीक कर लेते थे। हम अपने बचपन में देखते थे कि हथेली को नाक के सामने ले जाकर कैसे वे लोग श्वास का वेग देखते थे, लगभग दो घंटे की लग्न की अवधि में, पहले भाग में दायीं नासिका का वेग तेज होता है जबकि दूसरे भाग में बायीं का, लग्न सन्धि की स्थिति वास्तविक लग्न तक करने में यह तरीका बहुत कारगर होता था। लग्न का महत्व इस बात से जाना जा सकता है- नाक चलने (श्वास) की प्रक्रिया इससे जुड़ी है। दिन में परछाई की दिशा व लम्बाई देखकर तथा रात्रि में चन्द्रमा एवं तारों की स्थिति से समय का सटीक आंकलन कर लेते थे। घरों में प्रत्येक संक्रांति को रोट (पकवान) बनाकर देवता को चढ़ाये जाते थे। इससे सामान्य जन को भी माह तथा ऋतु का ध्यान रहता था। दिशाशूल का प्रावधान, लोक मान्यताओं यथा मंगलवार के मिलन व शनिवार के विछोह की सावधानी तथा साप्ताहिक व्रत रखना आदि वार को ध्यान में रखने की व्यवस्थायें थीं। पूर्णमासी को व्रत-कथा, अमावस्या को दान-पुण्य तथा एकादशी व प्रदोष आदि पर व्रत-तीर्थ जैसी व्यवस्थायें तिथियों को स्मरण रखने के तरीके भी थे। नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, भूमि पूजन, गृहप्रवेश तथा विवाह आदि विभिन्न संस्कारों एवं कार्यों के लिए मुहूर्त निकालने में ग्रह, नक्षत्र तथा राशि का विचार होता था, अत: ज्योतिषियों के साथ ही आम लोगों को इनका ध्यान रहना भी अपेक्षित होता था। भारतीय पद्धति में तो ज्योतिष को जनजीवन से जोड़ा ही गया है, गढ़वाल तथा कुमाऊं में तो जीवन की दैनिक गतिविधियां तक इसके अधीन रखी गई हैं। यह विश्वास ज्योतिष की वैज्ञानिकता तथा प्रमाणिकता के कारण हैं।

डा0 प्रभाकर उनियाल के महाप्रयाण से तीन दिन पहले ही तो मैं उनसे उनके घर पर मिली थी बातचीत का विषय था-'उत्तराखण्ड के लोक जीवन में निहित विज्ञान'। तीसरे दिन मैंने उन्हें फोन पर अपने आने की सूचना देनी चाही तो

फोन श्रीमती विनोद जी ने उठाया और बताया कि हम लोग तो (सीएमआई हॉस्पिटल) में हैं, डाक्टर साहब की तबीयत ठीक नहीं है। सुनकर चित्त विचलित तो हुआ पर लगा-वे जल्दी ठीक हो जायेंगे, फिर उनसे मिलने घर पर ही चली जाउंगी। पर यह क्या? डाक्टर साहब के निधन की सूचना ने हतप्रभ कर दिया-

सबसे करीब थे जो, कल खो दिया हमने।
जब कुछ नहीं बचता, शर्दें शेष रहती हैं।

इन्हीं शेष यादों को उनकी अर्द्धांगिनी ने समेटा रास का एहसास में। संकलन की भूमिका में स्वयं डाक्टर साहब ने लिखा है- इन कहानियों का लक्ष्य विशुद्ध मनोरंजन है जिनमें रोचक संयोगों व घटनाक्रमों के साथ यात्रा प्रसंग आगे बढ़ते हैं। इन कहानियों की विशेषता यह है कि एक बार आरम्भ करने के बाद इन्हें पूरा पढ़े बगैर छोड़ा नहीं जा सकता। इनके कथानक इस तरह गुंथे हुये हैं कि सौंदर्य के प्रति आकर्षण अैर उसके प्रभाव से बचने की चेष्टा के बीच द्वन्द निरन्तर जारी रहता है। यह अनश्चितता रहस्य का ऐसा वातावरण बनानती है कि कहानियां भावुक बनाने से लेकर मीठी गुद्‌गुदी तक पैदा कर देती हैं।

रास शब्द सामान्य पाठक को मनोरंजन औ गुद्‌गुदी पैदा करने वाला लग सकता है पर प्रबुद्ध पाठक इस संकलन को दिये गये रास शब्द को बूझने का प्रयत्न करता है तो पाता है कि रास केवल भौतिक आकर्षण नहीं। रास एक आध्यात्मिक, अलौकिक और अद्‌भुत स्वर्णिम डोर है जो आत्मा को अपनी ओर खीचंती है। जिस व्यक्ति को इस रास का एहसास हो जाता है, इस अलौकिक आकर्षण की अनुभूति हो जाती है वह पूर्णकाम हो जाता है। आप तो पूर्णकाम हुये प्रभाकर! और हमारी गगरी रीती ही रह गई।

Sweet Remembrance

GEM IS ALWAYS A GEM

G. S Raina

School Friend.

Late Dr Prabhakar Uniyal ji, one of my close friend is always in my heart. We both joined Shri Laxman Vidhalaya in 1967 in class eleven.

He was a bright student and a well discipline, trained CADET of NCC. He was holding the BATON of Under- Officer on Dist. N.C.C.

His ambition was to be an ARMY-OFFICER but destiny provided him the field of Banking to serve people & nation. He joined State Bank of India & my self, Punjab & Sindh Bank.

He was a self made person, from school times to college, the RSS worker to a leader, he always enjoyed his dignity. He was a "GIVER NOT A TAKÉR" in all means.

His name Prabhakar, a synonym of SUN, he was a leader with all qualities of sun, i.e., disciplined, warm, shining, source of light & energy for all his near and dears I will miss him till my last breath. Dear Prabhakar, you were GREAT by all means.

श्रद्धांजलि

बी.पी. ममगाईं
सचिव
एस.बी.आई. पेन्शनर्स एसोसिएशन,
देहरादून इकाई

सर्वप्रथम मैं श्रीमती विनोद उनियाल जी व उनके परिवारजनों का हृदय से धन्यवाद करना चाहूँगा कि उन्होंने अपने पति स्व0 श्री प्रभाकर उनियाल जी हमारे बड़े भाई की प्रथम पुण्य तिथि पर स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया पेंशनर्स एसोसिएशन देहरादून इकाई की ओर से स्व0 पुण्य आत्मा को हृदय से अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।
स्व0 श्री प्रभाकर उनियाल जी प्रखर वक्ता, स्पष्टवादी ट्रेडयूनियनिस्ट आध्यात्मिक व उच्च विचारों के धनी व्यक्ति थे। उन्होंने बैंक सेवा कार्यकाल में अवार्ड स्टाफ के पद पर रहते हुए यूनियन की गतिविधियों में संगठन की मजबूती के लिए अपना योगदान दिया। देहरादून में संगठन को आगे बढ़ाने में निरन्तर संघर्ष करते रहे। अपने कर्मचारियों के कल्याण व उनकी माँगों के लिए सतत् संघर्ष करते रहे। सेवा के दौरान जब अधिकारी के रूप में प्रोन्नत हुए तो अपनी मेहनत व लग्न से बैंक में एक अच्छे अधिकारी की छवि बनाई। अधिकारी होने के पश्चात भी यूनियन कार्यविधि में उनकी हमेशा रूचि रही है। देहरादून परिक्षेत्र की विभिन्न शाखाओं में कार्यरत रहते हुए अपनी लोकप्रियता भी बढ़ाई। बैंक में उन्हें एक कर्मठ व ईमानदार व्यक्ति के नाम से जाना जाता है। वे आर.एस.एस. से भी जुड़े हुए थे। वहाँ भी संगठन के लिए कार्य किए। उन्होंने ''गगरी'' नाम की पत्रिका का भी सम्पादन किया जिसे समाज के सभी वर्गों ने सराहा है।
हमारा उनसे पारिवारिक रिश्ता रहा साथ ही मेरे लिए बड़े भाई की तरह रहे। हमें भी सेवा के दौरान मार्गदर्शन करवाते रहे। उनको ज्योतिष के साथ-साथ आध्यात्मिक लगन भी बहुत अच्छा था। सेवानिवृत्ति के पश्चात टी.वी. चैनलों पर समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाते हुए डिबेट में भी भाग लेते रहे व अच्छे को अच्छा व बुरे को बुरा कहने में निसंकोच अपनी बात रखते थे। आज वे हमारे बीच नहीं हैं, किन्त उनकी यादें हमारे साथ हमेशा रहेंगी। हम पेन्शनर्स एसोसिएशन व अपनी ओर से उन्हें श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं व परिवार की सुखद रहने की कामना ईश्वर से करते हैं उनका आशीर्वाद परिवार के ऊपर बना रहे, परिवार उन्नति की राह पर अग्रसित रहे।

सादर, सप्रेम
भवनिष्ठ
(बी.पी. मंमगाई)

Beyond "Nana and Dada": An Unwavering Embrace of Love and Strength

Junnyali Panthri
Grand Daughter

The winding roads of Dehradun would blur past the car window, each turn bringing us closer to our vacation home. But the moment the familiar red lights of Ajabpur flickered into view, a collective cheer would erupt in the backseat. "Nadaji ka ghar!" the grandkids would yell, a chorus of anticipation for the haven that awaited.

Nadaji's house wasn't just a place; it was a living, breathing extension of him. From the warm greetings at the gate to the ever-evolving beauty of his beloved gardens, every summer held a new adventure. We'd plant our favourite flowers, nurture budding plants, and learn the secrets of fragrant herbs. We even helped build a tranquil pahadi and pond amidst the garden where every blade of grass is a testament to his dedication.

"The office" was a wonderland for curious little minds. Stepping through its threshold, the temperature dipped slightly, creating a distinct atmosphere. This was his domain, filled with towering bookshelves overflowing with stories, and intriguing relics of a bygone technological age. Here, many of us had our first encounters with video games, Sanskrit scriptures, and the sheer joy of limitless staplers & paperweights. It was a portal to a different world - Nadaji's world.

His love for life was infectious. He'd make surprise visits for birthdays and important milestones, his presence a source of warmth and security. We'd watch him shave, our mundane chitchat punctuated by the rhythmic scrape of the blade and gentle warnings to stay clear. The scent of Old Spice would forever be linked to those mornings. More importantly, Nadaji instilled in us the values he held dear. He taught us the art of prayer, the intricacies of reading kundalis, & jamnpatris, and the power of carefully chosen shlokas from his vast collection of scriptures.

His smile, embrace, and unwavering strength are the memories that live on in each of us. Nadaji may be gone, but his spirit continues to bloom within us, just like the flowers in his garden. He is deeply missed, but never forgotten. For the ever-present Nadaji, lovingly called nana and dada by his grandchildren.

अनुक्रमणिका

अन्दर के पृष्ठों में...

1.	डॉ0 प्रभाकर उनियाल-परिचय एक दृष्टि में	24-47
2.	कविता संग्रह	
•	परम क्या है साध्य! क्या सत्य है!	48-49
•	लालसा है सत्य की	50
•	पाँच महा कारक प्रकृति के	51
•	आतंक का सर्वस्व मुझ को नष्ट है करना	52
•	गढ़वाली बाँद	53
•	मानवी किस रूप को मानूं तुम्हारे	54
•	मौन मुखरित हो उठा अभिनव युवा संघर्ष में	55
3.	स्वर्गीय डॉ0 नित्यानन्द जी: स्मरणांजलि	56-60
4.	हाशिये पर महिलायें	61-62
5.	द्वादश ज्योतिर्लिंग यात्रा	63-71
6.	ज्योतिष की वैज्ञानिकता	72-78
7.	राष्ट्रवाद का जयनिनाद	79-84
8.	राज्यधर्म से धर्मराज्य तक	85-87
9.	वाह रे बचपन-गथ के परांठे (कहानी)	88-94
10.	उनियालों का मिथिला से गढ़वाल आगमन: एक अध्ययन	95-101
11.	हिन्दी साहित्य में पर्यावरण चेतना के विविध आयाम	102-106
12.	जल संकट: समस्या और समाधान	107-111
13.	परिवार का साथ (कहानी)	112-114
14.	राष्ट्र निर्माण में युवाओं की भूमिका	115-120
15.	उत्तराखण्ड का आर्थिक परिदृश्य एवं बैंकिंग व्यवस्था	121-126
16.	जय भोले नाथ! जय हो प्रभु!	127-130
17.	श्रीदेव सुमन का सुरम्य चम्मा	131-135
18.	पर्यटन का बदलता स्वरूप	136-139
19.	उत्तराखण्ड का भविष्य है फलोद्यान	140-144

डॉ० प्रभाकर उनियाल : परिचय एक दृष्टि में

(श्रीमती विनोद उनियाल)

प्रमुख सामाजिक कार्यकर्ता, चर्चित छात्रनेता, अग्रणी आन्दोलनकारी, स्थापित ट्रेड यूनियनिस्ट, सुयोग्य अधिकारी, कुशल प्रबन्धक, अनुभवी राजनीतिज्ञ, पत्रकार, सम्पादक, लेखक, कहानीकार, कवि, गीतकार व टीवी वार्ताकार जैसी बहुत सी भूमिकाओं में रहते आये विलक्षण एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी श्री प्रभाकर उनियाल का जन्म 30 दिसंबर 1950 को टिहरी गढ़वाल जिले की बमुंड पट्टी के अंतर्गत छोटे पहाड़ी गांव 'केमरीगांव' में हुआ था।

प्रभाकर जी के स्वर्गीय दादा जी ज्योतिष व कर्मकाण्ड की पारिवारिक परम्परा के साथ ही इलाके के जाने-माने वैद्य थे, जो असाध्य रोगों की चिकित्सा में भी पारंगत माने जाते थे। आपके स्वर्गीय पिता भी ज्योतिष व कर्मकाण्ड गहन ज्ञाता होने के साथ विद्वान एवं अध्ययन प्रिय थे और उनके अमूल्य संग्रह में हस्तलिखित पुस्तकों सहित वेद, उपनिषद, पुराण, स्मृति व सहिंताओं सहित अनेकों प्राचीन ग्रन्थ उपलब्ध हैं जिनसे आप समाज को लाभान्वित कराते रहते हैं। विभिन्न वैदिक, पौराणिक, ज्योतिष व वैद्य आदि से लेकर आधुनिक तकनीकी ज्ञान की पुस्तकें इस संग्रह का भाग हैं।

नाम मात्र की खेती और अल्प आय वाले बड़े परिवार में रहते हुए पशु पालन व खेती में काम बटाने के साथ आपकी आरम्भिक शिक्षा गाँव में ही हुई थी। पहली कक्षा के बाद 6 वर्ष की आयु में आप देहरादून नगर में आ गये थे। नगर के बीच बहने वाले नाले के किनारे दो छोटे कमरों के किराये के मकान में रहते हुए आपने सिटी बोर्ड स्कूल से बेसिक एवं मिडिल तक की पढ़ाई की। एक वर्ष तक संस्कृत विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करने के उपरान्त नवीं कक्षा में प्रवेश लिया और फिर उत्तर प्रदेश बोर्ड की हाई स्कूल परीक्षा विद्यालय में टॉप रह कर प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और उसी कॉलेज से इण्टरमीडिएट किया। पूजा-पाठ, कथा-वार्ता व यज्ञ-अनुष्ठान आदि के अलावा ट्यूशन पढ़ा कर आपने आगे की शिक्षा संघर्ष के साथ जारी रखी। स्नातक की पहले वर्ष कर परीक्षा करते ही आपका चयन बैंक सेवा में हो गया और ग्रेजुएशन नौकरी के साथ ही पूरा हुआ। छात्र राजनीति में उतरने के लिए पी.जी. कक्षा में प्रवेश लेकर आपने एम.ए. परीक्षा उत्तीर्ण की और डॉक्टरेट उपाधि बैंक से सेवा निवृत्ति के बाद प्राप्त की।

प्रमुख छात्र नेता :

हाईस्कूल स्तर पर प्रभाकर जी ए.सी.सी. (एन.सी.सी. का जूनियर विंग) के कैडेट रहे तथा साथ ही में भारत स्काउट एण्ड गाइड के सदस्य भी रहे। इण्टरमीडियेट के दौरान आप पी.एस.डी. (एन.सी.सी. जैसे छात्र-सैनिक संगठन) में आल राउण्ड बेस्ट कैडेट रहने के साथ डिस्ट्रिक्ट सीनियर अण्डर आफिसर भी रहे। इसके साथ ही एसोसिएशन विभिन्न विषयों की एसोसिएशन के पदाधिकारी रहे और आपने कालेज व अन्त कालेज नाट्य प्रतियोगिताओं में भी भागीदारी की। 1971-72 के दौरान श्री गुरु राम राय (पी.जी) कॉलेज देहरादून में स्नातक शिक्षा के दौरान हुए छात्र यूनियन आन्दोलन में समझौते के बाद गठित 'स्टूडेन्ट वेलफेयर कमेटी' सचिव के रूप में आपकी भूमिका काफी महत्वपूर्ण रही।

स्नातकोत्तर शिक्षा लेते हुए आप गढ़वाल मण्डल के प्रमुख छात्र नेता के रूप में चर्चित रहे। उत्तराखण्ड के सबसे बड़े शिक्षा संस्थान, डी.ए.वी. (पी.जी.) कॉलेज में 1973-75 के छात्र संघ चुनावों में आप अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद की ओर से अध्यक्ष पद के प्रत्याशी भी रहे। स्वयं सेवक के रूप में संघ योजना से आपको अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद संगठन में भेजा गया, जहाँ आप परिषद के देहरादून जिला संयोजक व गढ़वाल के प्रमुख रहे। इसी के साथ 1973 से 1975 तक आप परिषद की उत्तर प्रदेश (उस समय संयुक्त) कार्यकारिणी के सदस्य भी रहे।

विद्यार्थी परिषद की ओर से प्रभाकर जी को देहरादून को केन्द्र मान कर 'जय प्रकाश नारायण नीत सम्पूर्ण क्रान्ति आन्दोलन' में भेजा गया, जहाँ 'छात्र युवा संघर्ष समिति' के जिला संयोजक रहने के बाद आप गढ़वाल मण्डल के संयोजक भी रहे। इस दौरान आप गढ़वाल में आन्दोलन के सबसे बड़े नेता के रूप में चर्चित रहे। 1974 में लखनऊ विश्वविद्यालय में आयोजित छात्र-युवा सम्मेलन में मंच संचालन में विशेष व अग्रणी भूमिका निभाने के कारण आपको 'उत्तर प्रदेश छात्र युवा संघर्ष समिति' का भी सदस्य बनाया गया, जिसके अन्य सदस्य प्रदेश के आवासीय विश्वविद्यालयों छात्र संघ अध्यक्षों व राज्यव्यापी व प्रमुख छात्र संगठनों के प्रदेश अध्यक्ष व महामंत्री ही बनाये गये थे।

अग्रणी आन्दोलनकारी

1973–75 के दौरान चले छात्र एवं युवा आन्दोलन में प्रभाकर जी गढ़वाल, विशेषकर देहरादून में इसकी मुख्य धुरी थे। पूरे आन्दोलन को आपके नेतृत्व में ही निरन्तरता के साथ गति मिली और इसने व्यापक विस्तार पाया। छात्र एवं युवा आन्दोलन के दौरान दिखाये गये जुझारूपन, निरन्तर संघर्ष, नेतृत्व कौशल व संगठन क्षमता के चलते आपकी गिनती उत्तर प्रदेश के अग्रणी छात्र नेताओं में होने लगी थी। आपके संयोजन में

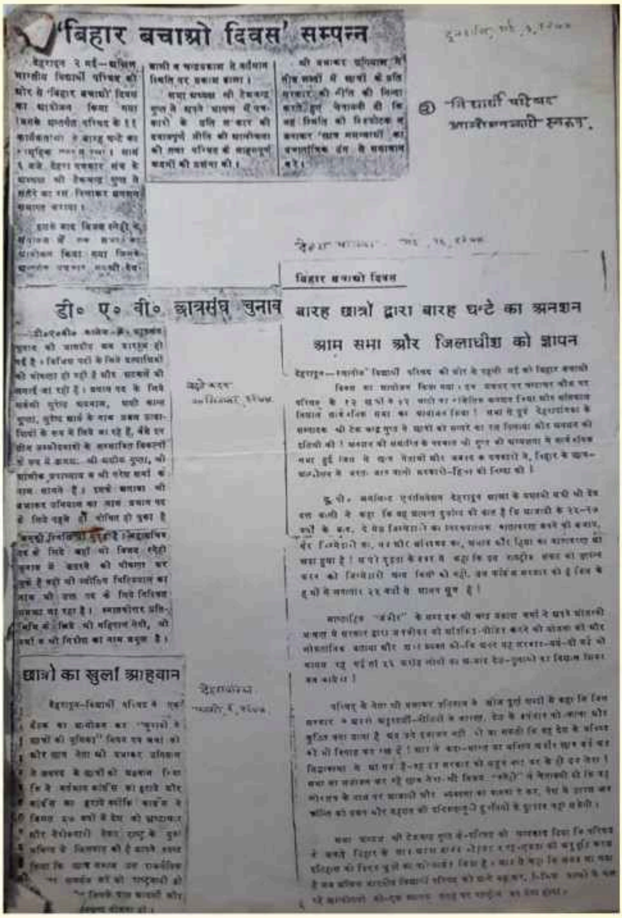

'बिहार बचाओ दिवस' सम्पन्न

डी० ए० वी० छात्रसंघ चुनाव

छात्रों का खुला आह्वान

बिहार बचाओ दिवस

बारह छात्रों द्वारा बारह घन्टे का अनशन

आम सभा और जिलाधीश को ज्ञापन

अनेकों सफल अभियान चलाये गये जिसमें 'बिहार बचाओ दिवस' तथा दिल्ली और लखनऊ में आयोजित बड़ी रैलियाँ सम्मिलित थीं।

प्रभाकर जी के संयोजन में आन्दोलन के तीव्र व प्रभावी होने से तत्कालीन कांग्रेस सरकार और संगठन द्वारा कुपित हो गये। मार्च 1975 में आपके ऊपर प्राण घातक हमला करवाया गया, जिसमें मरणासन्न स्थिति के साथ आपको 11 गम्भीर चोटें आईं और आरोपियों पर धारा 308 व 325 के अन्तर्गत मुकदमा कायम कर कार्यवाही प्रारम्भ हुई। इस प्रकरण पर उ.प्र. विधान परिषद में हंगामे के बाद राज्य

सरकार द्वारा पुलिस इंस्पेक्टर एस.एन. सेंगर को जाँच सौंपी गई तथा उ.प्र. छात्र-युवा संघर्ष समिति द्वारा भी सर्वोदय के युवा संगठन 'तरुण शान्ति सेना' के तत्कालीन प्रदेश अध्यक्ष राम दत्त पाठक और ओल्ड कांग्रेस के छात्र संगठन 'इण्डियन नेशनल स्टूडेन्ट आर्गनाइजेशन' के तत्कालीन अध्यक्ष (बाद में लोकसभा सदस्य रहे) चन्द्रमोहन सिंह नेगी के नेतृत्व में जाँच दल का गठन किया गया। हिंसा के विरोध में स्थानीय बाजार भी बन्द रखे गये।

विद्यार्थी संघर्ष और देहरादून की विस्फोटक स्थिति

एक तरफा कार्यवाही बगावत को हवा देगी !

अनेक संस्थाओं द्वारा निन्दा प्रस्ताव पारित !

(विशेष प्रतिनिधि)

छात्र नेता रहते हुए प्रभाकर जी भारतीय स्टेट बैंक की सेवा में भी थे। प्रशासन द्वारा आपको देहरादून जिले की सीमा के अन्दर न रहने देने की जिद के चलते उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा आपको मई 1975 में बैंक को बाध्य कर देहरादून जिले से बाहर स्थानान्तरित करवा दिया गया। गम्भीर चोटों के कारण हुई समस्या तथा पुन: हमले की आंशका के चलते संघ भी आपको देहरादून में बनाये रखने के पक्ष में नहीं था अत: आपको नरेन्द्रनगर भेज दिया गया। जून 1975 में आपातकाल की घोषणा होने पर आपका नाम पहले दौर में ही मीसा (मेन्टेनेन्स ऑफ इन्टरनल सेकुरिटी एक्ट) के अन्तर्गत वांछित करार दिया गया था और आप कुछ समय तक भूमिगत भी रहे। गढ़वाल के चर्चित समाजसेवी स्वामी मंथन भी आपातकाल के दौरान कुछ दिनों तक आपके साथ रहे थे।

संघनिष्ठ कार्यकर्ता

बाल्यकाल से ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुड़कर दायित्ववान कार्यकर्ता के रूप में प्रभाकर जी शाखा एवं मण्डल स्तर पर कार्यवाह के दायित्व में रहे। आपने 1966 में पहली बार संघ शाखा में जाने के बाद 1972 से निरन्तर दायित्ववान कार्यकर्ता के रूप में कार्य किया। द्वितीय वर्ष संघ शिक्षा वर्ग करने के साथ अलग-अलग समय पर प्रतिज्ञित स्वयंसेवक के तौर पर आपने विभिन्न स्थानों पर मुख्य शिक्षक, तहसील कार्यवाह तथा जिला व्यवस्था प्रमुख आदि प्रत्यक्ष दायित्वों का निर्वाह किया। आपातकाल के दौरान आपके पास टिहरी गढ़वाल व उत्तरकाशी जिलों के दूरस्थ क्षेत्रों में आपातकाल विरोधी विशेष साहित्य पहुँचाने का दायित्व रहा। आपने बड़े सांस्कृतिक संगठन 'संस्कार भारती' के संरक्षक रहे बाबा योगेन्द्र जी द्वारा आपातकाल के दौरान हुए जनता पर अत्याचारो को लेकर आपातकाल के तुरन्त बाद निर्मित प्रदर्शिनी की व्यवस्था भी संभाली। आपने नगर बौद्धिक प्रमुख तथा जिला प्रचार प्रमुख का दायित्व भी संभाला। नगर बौद्धिक प्रमुख के रूप में अपनी अच्छी वक्तव्य शैली के चलते आपको प्रखर वक्ता के तौर पर काफी सराहना मिली। 1991-92 के दौरान 'मानव कल्याण केन्द्र' तथा 'टैगोर कल्चरल सोसाइटी' सहित कुछ संस्थाओं द्वारा आपके भाषणों की विशेष श्रृंखला भी आयोजित की गई। अध्ययन प्रिय होने के कारण कई विषयों की अच्छी जानकारी होने के चलते संघ के कार्यक्रमों में 'बौद्धिक' तथा गोष्ठियो आदि में मुख्य वक्ता के तौर पर आपको विशेष रूप से आमंत्रित किया जाता रहा है।

प्रमुख संघ कार्यकर्ता के रूप में प्रभाकर जी के आवास पर संघ के अखिल भारतीय, क्षेत्रीय, प्रान्तीय एवं अन्य बड़े अधिकारियों के साथ अन्य प्रचारको का भी नियमित रूप से आगमन होता रहा है। संघ तथा संघ प्रेरित संस्थाओं के वरिष्ठ पदाधिकारियों के साथ आपका निरन्तर सम्पर्क रहता आया है। संघ से सम्बन्धित राज्य स्तर के एक प्रमुख न्यास का सदस्य रहे होने के अलावा प्रचार विभाग तथा विश्व संवाद केन्द्र के कार्यों में नियमित एवं सक्रिय भागीदारी रही।

इसके 'स्तम्भ लेखक आयाम' का प्रमुख रहने के अलावा वर्तमान में प्रचार विभाग की प्रान्तीय टोली सदस्य के रूप में उनकी सक्रियता है। मार्च 2023 में उत्तरांचल उत्थान परिषद द्वारा प्रान्तीय स्तर पर आयोजित एक बड़े कार्यक्रम में आपको मुख्य अतिथि बना कर सम्मानित किया गया।

ध्येय यात्रा के पथिक

1991 में उत्तरकाशी में आये भयंकर भूकम्प के दौरान कर्मयोगी डॉ. नित्यानन्द जी के निकट सहयोगी के रूप में प्रभाकर जी ने 'उत्तरांचल दैवी पीड़ित आपदा सहायता समिति' के लिए सहायता एवं मीडिया समन्वय में योगदान किया। श्री राम जन्मभूमि आन्दोलन के चरम पर संघ की ओर से आप राम कार सेवा समिति के नगर प्रमुख भी रहे। आपने लखनऊ में क्षेत्रीय स्तर पर आयोजित राज्य के संगठन प्रमुखों के कार्यक्रम में 'उत्तरांचल संवाद समिति' के प्रमुख के तौर पर, प्रचार विभाग के मुम्बई सम्मेलन, नोएडा व मेरठ कार्यशालाओं तथा विश्व संवाद केन्द्र के लखनऊ सम्मेलन में विभिन्न दायित्वों के अधीन भाग लिया। बाबरी ढाँचे के विध्वंस के बाद प्रतिबन्धकाल के दौरान संघ के तत्कालीन सह सरकार्यवाह मा. सुदर्शन जी के साथ आपने तीन दिन तक सात उत्तरी राज्यों के प्रमुख स्वयंसेवक

पत्रकारों की बैठक में भागीदारी की। मनेरी में आयोजित प्रशिक्षण वर्ग में आपने शिशु मन्दिर व विद्या मन्दिर के आचार्यों को पत्रकारिता का प्रशिक्षण भी दिया तथा मेरठ में आयोजित समरसता महाशिविर, जिसमें उत्तर प्रदेश के पर्वतीय भागों के 51,000 स्वयंसेवकों ने भाग लिया था, उसकी बौद्धिक व्यवस्था में कई दिनों रह कर प्रत्यक्ष भूमिका निभाई।

संघ की योजना से बनी संस्था 'उत्तरांचल संवाद समिति' के जिला, विभाग तथा प्रान्त प्रमुख के तौर पर एक संगठनकर्ता, विचारक व अच्छे पत्रकार की भूमिका प्रभाकर जी ने काफी कुशलता से निभाई। संघ क्षेत्रों में आपकी पहचान एक प्रतिष्ठित पत्रकार के रूप में बन गई थी। बैंक अधिकारी के रूप में प्रभावी प्रदर्शन के साथ-साथ समिति को पर्याप्त समय देने की आपकी क्षमता सभी को चमत्कृत करती थी। संघ के तत्कालीन सरसंघचालक श्री राजेन्द्र सिंह जी (रज्जू भैया) समिति के यशस्वी कार्यों की चर्चा देश भर में करते थे। समिति के केन्द्रीय कार्यालय का उद्घाटन संघ के तत्कालीन क्षेत्र प्रचारक श्री ओम प्रकाश जी द्वारा किये जाने के बाद समिति समाचार संकलन के साथ नियमित बुलेटिन जारी करने के साथ सर्वे और साक्षात्कार भी कराती थी। यह सफल प्रयोग बाद में विश्व संवाद केन्द्र के रूप में पूरे देश में आगे बढ़ा। आप राष्ट्रीय स्तर पर चलने वाली बौद्धिक संस्था 'प्रज्ञा प्रवाह' के अन्तर्गत उत्तराखण्ड में सक्रिय 'देवभूमि विचार मंच' के प्रान्त समन्वयक भी रहे तथा प्रज्ञा प्रवाह द्वारा 'जनसांख्यिकीय परिवर्तन' पर आयोजित दिल्ली सेमिनार में भी भाग लिया।

पत्रकार, लेखक एवं कहानीकार

प्रभाकर जी 1969-71 के दौरान 'उत्तरांचल' साप्ताहिक समाचार पत्र के साथ जुडे रहे। आप 2010 से 2012 तक संघ के उत्तराखण्ड राज्य के जागरण पत्र प्रमुख तथा नियमित व निर्धारित समय पर प्रकाशित होने वाले पाक्षिक समाचार पत्र 'राष्ट्रदेव' के सम्पादक भी रहे। आप चार वर्षों तक 'हिन्दुस्तान समाचार' की राज्य स्तरीय प्रवर समिति के सहसंयोजक भी रहे। अतिथि सम्पादक के तौर पर आपने हिन्दुस्थान समाचार की 'स्वर्ण महोत्सव स्मारिका', राष्ट्रदेव के 'विजय दिवस विशेषांक' तथा 'हिमालय हुंकार' के 'दीपावली विशेषांक' का सम्पादन भी किया है। संघ के बड़े अधिकारी रहे डॉ. नित्यानन्द जी पर प्रकाशित दों पुस्तकों, 'कर्मयोगी डॉ. नित्यानन्द' तथा 'कर्मयोगी के शिवसंकल्प' के लेखन व सम्पादन भी आपने किया है।

महाराष्ट्र की प्रतिष्ठित पत्रिका 'विवेक' सहित 'हिमांजलि', 'देवकमल', तथा 'सुमन सौरभ' जैसी कई चर्चित पत्रिकाओं के अलावा उत्तराखण्ड में संघ प्रेरित संस्थाओं के प्रकाशनों में भी आपके लेख प्राय: प्रकाशित होते आये है। सघ के उत्तराखण्ड प्रदेश के जागरण पत्र 'हिमालय हुंकार' के प्राय: सभी विशेषांको में आपके लेख आते रहते थे। यूजीसी द्वारा प्रायोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी के प्रकाशन में 'धरती उगलेगी लावा, बादल तरसेंगे बूंदों को' शीर्षक से साहित्य पर तथा पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) के 'मध्य हिमालयी संस्कृति में ज्ञान, विज्ञान एवं पराविज्ञान' विशेषांक में 'ज्योतिष की वैज्ञानिकता' शीर्षक से ज्योतिष पर तथा 'वाह रे बचपन' पुस्तक श्रृंखला में भी आपके लेख प्रकाशित हुए हैं। हिन्दी मासिक पत्रिका 'गगरी' में आपके लेख पन्द्रह वर्षो तक निरन्तर प्रकाशित होते रहे हैं। लगभग 200 लेखों के साथ व्यंग्य तथा अनेकों कविताओं के अलावा आपकी 135 से अधिक कहानियां सामने आयी हैं। 2013 में आपका 32 कहानियों का संग्रह 'आलू का झोल' भी प्रकाशित हो चुका है।

प्रभाकर जी ने छोटी-बड़ी मिलाकर सौ के लगभग कवितायें लिखी हैं। डीएवी.(पी.जी) कालेज, देहरादून की गृह पत्रिका 'जिज्ञासा' के 2011-12 तथा 2015-16 के दो अंकों में पहले पृष्ठ पर आपकी गढ़वाली-हिन्दी मिश्रित कविताएँ विशेष रूप से छपी हैं। उत्तरांचल संवाद समिति के लिए 'संवाद गीत' तथा टिहरी स्मृति एवं विस्थापित एकता मंच के लिए 'टिहरी स्मृति गीत' सहित कुछ गीतों व थोड़े से संस्कृत श्लोकों की रचना भी आपके द्वारा की गई है।

टीम नेता एवं प्रखर वार्ताकार

1973 में प्रभाकर जी के नेतृत्व में देहरादून में बनी विद्यार्थी परिषद की टीम संगठन के अन्दर बहुत सक्षम व प्रभावी टोली के रूप में जानी जाती रही है और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में इस टीम को काफी महत्व मिलता रहा है। यह टीम सतत रूप से एकजुट व सक्रिय रहती आयी है और इसके सदस्य संघ एवं संघ प्रेरित अन्याय संगठनों/संस्थाओं में प्रमुख दायित्व निभा रहे हैं। विद्यार्थी परिषद भी लम्बे समय तक इस टीम के योगदान के योगदान से लाभान्वित होती रही है।

विचार-परिवार के संगठनों के साथ ही राजनीति में भी जनसंघ के समय व भाजपा के आरम्भिक दिनों में इस टीम का बहुत बड़ा सहारा था। उत्तर प्रदेश संगठन के लोग इस टीम के निरन्तर सम्पर्क में रहते थे और महत्वपूर्ण मामलों में इस टीम से ही परामर्श करते थे। भाजपा ने 1996 तक आते-आते व्यापक विस्तार के साथ अपना प्रभावी तंत्र विकसित कर लिया था किन्तु इस टीम पर निर्भरता कम

होते जाने के बावजूद इसके निरन्तर सम्पर्क में रहती आयी है। इस टीम के सदस्य बड़ी आयु के होने पर भी सतत एवं प्रभावी रूप से आज भी सक्रिय हैं और उपयोगी भूमिकाओं में हैं।

प्रभाकर जी काफी समय से टीवी डिबेट्स में भाग लेते आ रहे थे। टीवी चैनलों में सामाजिक चिन्तक, राष्ट्रवादी विचारक व स्वतंत्र समीक्षक के तौर पर सैकड़ों वार्ताओं से अपनी विशेष पहचान बनाने के बाद 2019 के लोकसभा चुनावों में भाजपा के आगह पर पार्टी की ओर से पैनलिस्ट की भूमिका में भी ने आपने बहुत सारी चर्चा-वार्ताओं व साक्षात्कारों आदि में भी भाग लिया था। आपकी 450 से अधिक टीवी वार्ताओं के अतिरिक्त साक्षात्कार व फोन बाइट्स प्रसारित हो चुकी हैं। नये लोगों को अवसर देने की दृष्टि से आप राजनीतिज्ञ के रूप में प्रस्तुत होने के स्थान पर वर्तमान में स्वतंत्र राजनीतिक समीक्षक के तौर पर टीवी वार्ताओं में भागीदारी करते थे। आपके विषद् अनुभव, ज्ञान एवं तर्क पूर्ण व तथ्यपरक विश्लेषण को प्राय: सराहना मिलती थी।

प्रभावी राजनीतिज्ञ

प्रभाकर जी राजनीति में सक्रिय एवं महत्वपूर्ण भागीदारी करते आये। भारतीय जनसंघ के समय उत्तर प्रदेश विधानसभा के 1974 के चुनावों में आप पार्टी प्रत्याशी श्री देवेन्द्र शास्त्री के चुनाव प्रचार प्रमुख रहे और दूसरे प्रत्याशी श्री नित्यानन्द स्वामी के चुनाव अभियान में छात्र नेता के तौर पर सक्रिय भागीदारी की। आप उत्तर प्रदेश के उन नौ बड़े छात्र नेताओं में सम्मिलित रहे जनके लिए छात्र युवा संघर्ष समिति ने 1977 के लोकसभा टिकट की मांग की थी किन्तु टिहरी गढ़वाल लोकसभा के सीट जनता पार्टी के टिकट बँटवारे में जनसंघ के स्थान पर ओल्ड कांग्रेस के कोटे में आ जाने के कारण आप स्वयं ही दौड़ से हट गय थे। 1980 में भी देहरादून नगर विधान सभा सीट से भाजपा आप को पार्टी प्रत्याशी बनाने को तैयार थी किन्तु आप सहमत नहीं हुए। 1984 के विधानसभा चुनाव में भारतीय जनता पार्टी के लिए देहरादून नगर में प्रत्याशी चयन से लेकर चुनाव संचालन तक में आप अग्रणी भूमिका में रहे और 1989 और इसके बाद के चुनावों में पार्टी प्रत्याशी श्री हरबंस कपूर की सफलता में आपकी टीम ने बहुत महत्वपूर्ण योगदान किया।

1991 के लोकसभा चुनावों में भाजपा तत्कालीन उत्तर प्रदेश की पर्वतीय क्षेत्र की पाँच में से अपनी दो सीटें समझौते में उत्तराखण्ड क्रान्ति दल के लिए छोड़ने को तत्पर थी किन्तु आप और साथियों के द्वारा दिल्ली जाकर नेतृत्व के समक्ष वास्तविक आधार पर तथ्यों के साथ किये गये पुरजोर विरोध के चलते ऐसा नहीं हो पाया और भाजपा न केवल उस समय पाँचों सीटें जीतने, अपितु भविष्य के लिए भी पुष्ट आधार बनाने में सफल रही। टिहरी गढ़वाल लोकसभा सीट के लिए भाजपा की देहरादून जिला कार्यकारिणी ने आपका नाम पार्टी प्रत्याशी पैनल में सम्मिलित किया था और उत्तर प्रदेश में राज्य स्तर पर आपके नाम पर सहमति भी बन गई थी किन्तु महाराजा टिहरी गढ़वाल के भाजपा में सम्मिलित होकर चुनाव लड़ने की इच्छा को देखते हुए पार्टी हित में आपने स्वयं न लड़ कर उनका साथ देना उचित समझा। आप सदैव विचारों की विजय के लिए समर्पित रहते आये और राजनीति आपके लिए कभी भी अन्तिम लक्ष्य नहीं रही।

अध्ययन, विशेषज्ञता एवं विश्लेषण

2017 के राज्य विधान सभा चुनावों के लिए सूर्या फाउण्डेशन से भाजपा का सहयोग करने आयी इंजीनियरिंग ग्रेजुएट्स की टीम को प्रभाकर जी द्वारा ही माइक्रो मैनेजमेन्ट का प्रशिक्षण दिया गया था जिसे पार्टी के राष्ट्रीय महामत्री (संगठन) की सराहना मिलने के साथ अन्य राज्यों में भी अपनाया गया। पार्टी के प्रदेश महामंत्री (संगठन) के अनुरोध पर (मिस्ड कॉल के आधार पर राष्ट्रीय स्तर की 10.50 करोड़ में से प्रदेश में हुई 15 लाख सदस्यता के सत्यापन हेतु आपने विशेष प्रोग्राम (एक्सेल) बनाकर एक वरिष्ठ कार्यकर्ता को प्रशिक्षित किया जिसके चलते उस समय सदस्यता सत्यापन आरम्भ कर पाने वाला उत्तराखण्ड एक मात्र राज्य बना। उस कार्यकर्ता ने अन्य राज्यों में भी जाकर प्रशिक्षण दिया। प्रभाकर जी फ्रेन्ड्स ऑफ बीजेपी के उत्तराखण्ड राज्य समन्वयक तथा 2019 के दौरान भाजपा के राज्य प्रवक्ता के तौर पर भी अपनी सेवायें दे चुके हैं।

प्रभाकर जी प्राचीन भारतीय शास्त्रों, धार्मिक प्रक्रियाओं (कर्मकाण्ड) तथा ज्योतिष के भी अच्छे जानकार थे जो इन्हें अपनी पारिवारिक परम्परा से प्राप्त हुए आप बाल्यकाल से ही कथा-वार्ताओं तथा यज्ञों आदि आयोजनों में भाग लेते रहे विशेष अध्ययन के चलते 'श्रीयंत्र' एवं 'श्री दुर्गा सप्तशती' पर आपके कुछ अच्छे आलेख आये। 'उनियाल जाति के मिथिला से गढ़वाल आगमन' पर भी खोजपूर्ण लेख प्रकाशित हुए हैं जिनकी चर्चा व उल्लेख अब कई बार उनियाल जाति के अधिकृत दस्तावेज के रूप में होता है। आपने 'उनियाल गाँव' से लेकर 'केमरी गाँव' तक की उनियाल जाति की ग्यारह पीढ़ियों की वंशावली भी तैयार की है। इसके अलावा सामाजिक विषयों और विभिन्न चुनावों पर आपके द्वारा प्रस्तुत कई सारी समीक्षायें, विश्लेषण एवं अध्ययन भी प्रकाशित हुए हैं। सारिणियों के माध्यम से सामने आये आपके अनेकों तथ्यपूर्ण सर्वेक्षणों व तर्कपूर्ण विश्लेषणों को काफी सराहना मिली और इनका संदर्भ के लिए भी उपयोग होता है।

ट्रेड यूनियनिस्ट

नेतृत्व के स्वाभाविक गुणों के कारण श्री गुरु राम राय कॉलेज में जुझारु छात्र नेता के तौर चर्चित होने के चलते 1972 में भारतीय स्टेट बैंक की सेवा में आने के बाद प्रोबेशन के छः माह पूरे होते ही 1973 में आपको बैंक की देहरादून मुख्य शाखा में एवार्ड स्टाफ (लिपिकीय एवं अधीनस्थ कर्मचारी) की मान्यता प्राप्त एसोसिएशन का सचिव चुन लिया गया। स्थानान्तरण पर बाहर रहने के बाद देहरादून वापिस आने पर 1979 में लोकप्रियता के कारण आपको सर्वसम्मति के साथ पुनः एकीकृत एवार्ड स्टाफ एसोसिएशन का सचिव चुन लिया गया। 1981 में आँचलिक कार्यालय बनने से पूर्व देहरादून मुख्य शाखा का सचिव ही गढ़वाल में स्टेट बैंक कर्मियों का सबसे बड़ा नेता होता था। 1980 में अधिकारी के रूप में पदोन्नत होने तक आप वहाँ सचिव बने रहे।

एसबीआई स्टाफ एसो. की प्लैटिनम जुबली पर सांस्कृतिक कार्यक्रम

स्टेट बैंक का प्लेटिनम जुबली समारोह संपन्न

प्रोमोशन के बाद आप ने अधिकारी संघ में भी सक्रिय भूमिका निभाई और आपको स्टेट बैंक के अधिकारी ऐसोसियेशन की क्षेत्रीय समिति का सदस्य बनाया गया। इसके बाद हुए अधिकारी संघ के चुनाव में आपको केन्द्रीय समिति का सदस्य चुना गया। कर्मचारी व अधिकारी संघ के अग्रणी नेता के तौर पर आपकी रचनात्मक भूमिका को व्यापक सराहना मिली और आपको अधिकारी संघ के दिल्ली मण्डल के महासचिव जैसे बड़े नेताओं का घनिष्ठ सहयोगी माना जाता था।

नरेन्द्रनगर में शाखा प्रबन्धक रहने के दौरान वहाँ की एसबीआईएसए इकाई ने प्रभाकर जी को मुख्य अतिथि बना कर धूमधाम के साथ एसोसिएशन का प्लेटिनम जुबली समारोह मनाया, जिसमें कर्मचारी व अधिकारी संघों के आँचलिक स्तर के लगभग सभी पदाधिकारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। दिल्ली मण्डल में यह कार्यक्रम केवल उच्च प्रेरणा प्राप्त स्टाफ के चलते नरेन्द्र नगर में ही सम्पन्न हो पाया था। कर्मचारी एवं अधिकारी संघों में आप की भूमिका काफी प्रभावशाली रही। अवार्ड स्टाफ एसोसिएशन के बाद के चुनावों में भी आपके समर्थन का काफी महत्व रहा। अधिकारी संघ के 1996 के चुनावों में पैनल से बाहर केवल आपके द्वारा समर्थित प्रत्याशी ही विजयी हुआ। इसी प्रकार वर्ष 2000 के चुनाव में भी आपके द्वारा समर्थित दो प्रत्याशियों को जीत मिली।

नेतृत्व, प्रबन्धन एवं प्रशासन

छात्र सैनिक पृष्ठभूमि के चलते आप सैन्य अधिकारी बन कर देश सेवा करना चाहते थे और प्रीलिमिनरी परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद आप बैंगलौर में सर्विस सलेक्शन बोर्ड में भी सम्मिलित हुए किन्तु सलेक्शन न हो पाने पर आप 1972 में भारतीय स्टेट बैंक की सेवा में आ गये।

शाखा प्रबन्धक नरेन्द्र नगर के रूप में आपके नेतृत्व में शाखा को प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी रह कर नये मानदण्ड स्थापित करने वाली आदर्श शाखा घोषित किया गया। व्यवसाय वृद्धि, लाभप्रदता, आन्तरिक गृह व्यवस्था, औद्योगिक सम्बन्ध, नवोन्मेशी बैंकिंग में शाखा द्वारा अनेकों कीर्तिमान स्थापित किये गये। गुणवत्ता मण्डल और क्विज़ कॉम्पीटीशन में शाखा मण्डल स्तर पर भी पहुँची। शाखा को दक्षता में न केवल सर्वोत्कृष्ट आँका गया, बल्कि बैंक की पत्र-पत्रिकाओं में भी विशेष स्थान मिला और यह सब आपके नेतृत्व के चलते ही हुआ।

नरेन्द्रनगर से आपकी बिदाई वहाँ के टाउनहाल में नागरिक अभिनन्दन के साथ हुई थी। कई वर्षो तक उत्तराखण्ड, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, राजस्थान, हरियाणा, पंजाब व हिमाचल प्रदेश राज्यों में प्रबन्धक (लेखा परीक्षा एवं निरीक्षण) के रूप में आपकी गणना बैंक के सुयोग्य एवं दक्ष अधिकारियों में होती रही। इस दौरान आपने 400 के लगभग स्थानों पर कार्यालयों एवं शाखाओं के लेखापरीक्षण तथा निरीक्षण का कार्य किया।

उत्कृष्ट अधिकारी के रूप में प्रभाकर जी को कई उपलब्धियाँ प्राप्त हुई जिनमें स्टेट बैंक की विश्व में सबसे बड़ी शाखा 'नई दिल्ली मुख्य शाखा' के (मैनुअल से मशीन पर आने का) कन्वर्जन ऑडिट का नेतृत्व तथा दिल्ली सर्किल के सभी पाँचों अँचलों (दिल्ली, मेरठ, आगरा, जयपुर व देहरादून) का स्पेशल ऑडिट भी सम्मिलित है। अपने विशेष आग्रह के चलते अपनी रिपोर्ट्स हमेशा हिन्दी में देने के कारण इनका अपने विभाग में विशिष्ट स्थान बन गया था। अपनी विश्लेषणात्मक क्षमताओं के चलते आप विशेष रिपोर्ट्स बनाने और प्रजंटेशन देने के अलावा पेचीदा मामलों की इन्वेस्टिगेशन्स तथा विभागीय जाँच आदि के लिए भी चर्चित रहे।

प्रतिभा, परिश्रम एवं पहल

आपके जिला समन्वयक रहते हुए देहरादून के परेड ग्राउण्ड में लगातार दो वर्ष स्वयं सहायता समूहों के प्रदेश स्तर के मेले आयोजित हुए। देहरादून के अलावा आपकी सेवायें उत्तरकाशी व हरिद्वार जिलो में भी ली गईं। डोईवाला, विकासनगर, नौगाँव व उत्तरकाशी में कई कृषक गोष्ठियाँ व मेले आपके सहयोग से सफलतापूर्वक आयोजित करवाये गये। इस भूमिका में जिला विकास कार्यालय, उद्योग, कृषि तथा पर्यटन जैसे सरकारी विभागों के लिए आप बैंकिंग के रिसोर्स अधिकारी रहे। उद्योग विभाग ने अनेक अवसरों पर अपने कार्यक्रमों में आपको विशेष वक्ता के तौर पर सम्मिलित किया। प्रधानमंत्री रोजगार योजना तथा वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली पर्यटन स्वरोजगार योजना में आपके प्रभावी योगदान को बहुत अधिक सराहना मिली। जिला समन्वयक रहने के साथ ही आप मुख्य प्रबन्धक (राजभाषा) भी रहे, जहाँ राजभाषा मास के दौरान आपकी विशेष प्रतिभा ने सभी को प्रभावित किया।

अधिकारी के तौर पर प्रभाकर जी की पोस्टिंग कई पदों पर तथा अनेकों स्थानों पर हुई तथा आपका प्रदर्शन प्राय: सभी भूमिकाओं में उत्कृष्ट आँका गया। आँचलिक कार्यालय, जहाँ ऑफिसियेटिंग का चलन नहीं होता और सामान्य पोस्टिंग तीन वर्ष से अधिक नहीं रहती, वहाँ 1989 से 1993 तक कार्यालय प्रशासन विभाग में सहायक प्रबन्धक के तौर पर तीन वर्ष रहकर, वहीं दो वर्ष उप प्रबन्धक और फिर लगभग पाँच-छ: माह आप मुख्य प्रबन्धक के पद पर भी रहे, जहाँ कॉस्ट इफेक्टिवनेस के लिए आपने विशेष पहचान बनाई। 1989-1993 में भारतीय स्टेट बैंक की आन्तरिक पत्रिका 'द्रोण भारती' में भी आप सम्पादकीय मण्डल के सदस्य रहे। विभिन्न भूमिकाओं में श्रेष्ठ व प्रभावी परिणाम देने के कारण आपको कई बार हार्ड टास्क मास्टर भी कहा जाता था। अनेक पदों पर 34 वर्ष 8 माह की बैंक सेवा के उपरान्त, निर्धारित समय से चार वर्ष पूर्व आपने 2007 के आरम्भ में (संघ के क्षेत्र प्रचारक के आग्रह पर) सामाजिक कार्यों में योगदान करने के लिए स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति ले ली थी। कुछ नया सीखते रहने के प्रति अपने आग्रह के चलते लेखन के लिए कम्प्यूटर पर हिन्दी व अंग्रेजी टाइपिंग करते हुए एम. एस.वर्ड, पावर प्वाइंट व एक्सेल के साथ ही पेज़मेकर, फोटोशॉप व कोरल ड्रा तक में आपने काफी दक्षता प्राप्त कर ली। नियमित लेखन के चलते आपने हिन्दी में 'डॉक्टरेट' की एक्रीटेड उपाधि भी प्राप्त की।

परिवार एवं परिवेश

प्रभाकर जी के विलक्षण व्यक्तित्व को देखते हुए टिहरी गढ़वाल जिले के उच्च प्रतिष्ठित परिवार से आने वाली विनोद बहुगुणा ने इन्हें अपना जीवनसाथी चुना। एम.ए., बी.एड. कर चुकी श्रीमती विनोद उनियाल उत्तर प्रदेश के उप शिक्षा निदेशक रहे स्व0 गोपाल राम बहुगुणा की पुत्री और सुप्रसिद्ध पर्यावरणविद् पद्म विभूषण स्व0 सुन्दर लाल बहुगुणा की भतीजी हैं। उनके दादा जी भी टिहरी गढ़वाल राज्य में पुलिस व फॉरेस्ट विभाग के राज्य प्रमुख थे और अमर शहीद श्रीदेव सुमन की छोटी बहिन उनकी सगी मामी थीं। आदर्शवादी होने के कारण प्रभाकर जी का विवाह बिना बैण्ड-बाजे व दहेज आदि के, अत्यन्त सादगी से सम्पन्न हुआ, जिसके स्नेह भोज का निमंत्रण पत्र संस्कृत भाषा में छापा गया था। विवाह के दूसरे ही दिन आपातकाल में बन्द कार्यकर्ताओं से मिलने आपकी पत्नी आपके साथ जेल में चली आईं।

प्रभाकर जी के गृहस्थ जीवन की यात्रा उनकी योग्य पत्नी के सहयोग से निर्बाध चलती रही और आवश्यक सुविधायें जुट जाने के बाद व्यवस्थित भी हो गई। उनकी उच्च शिक्षित सहधर्मिणी के अलावा परिवार में दो पुत्रियाँ तथा एक पुत्र है। आपने बच्चों को शिक्षा महंगे अंग्रेजी स्कूलों में न दिलवा कर सरस्वती शिशु मन्दिर और केन्द्रीय विद्यालय में पढ़ा कर संस्कारक्षम बनाया। बड़ी बेटी के पति भारतीय वायुसेना में अधिकारी (ग्रुप कैप्टेन) और बेटी (एम.ए.) उनकी पोस्टिंग के स्थानों पर अध्यापन करती रही हैं, कुछ समय पहले तक वे देहरादून के 'कॉन्वेन्ट ऑफ जीज़स एण्ड मैरी' में अध्यापिका थीं। बेटा (सी-डेक, एम.सी.ए.) एक बड़ी मल्टीनेशनल कम्पनी में सीनियर डाइरेक्टर है और पुत्रवधू (बी.बी.ए.,बी.एड्.) भी अध्यापिका रह चुकी हैं। छोटी बेटी के पति एक सरकारी प्रतिष्ठान में अधिकारी हैं और बेटी (एम.ए., बी.एड्. एन.टी.टी. व डिप्लोमा इन इन्टीरियर डिजाइनिंग) एक प्रतिष्ठित संस्था के विद्यालय में प्रधानाध्यापिका हैं। नातिन (बड़ी बेटी की बेटी) भी एक नामी वित्तीय प्रतिष्ठान में प्रबन्धक हैं। प्रभाकर जी ने अपने कार्यकर्ता भाव को कभी नहीं छोड़ा, आपके आचरण में अधिकारी की अकड़ नहीं, सिद्धान्तप्रिय व आदर्शवादी व्यक्ति के सरल व्यवहार की ही छाप रही है। स्थानीय समाज में आपका परिचय सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में ही अधिक रहा। सामाजिक कार्यों के लिये आप सदैव उपलब्ध रहे हैं और आपके परिवार को एक संघनिष्ठ परिवार के तौर पर ही देखा जाता है।

सार्थक दाम्पत्य

श्रीमती विनोद उनियाल स्वयं भी बाल्यकाल से ही सामाजिक रूप से सक्रिय रही हैं। आचार्य विनोबा भावे द्वारा चलाये गये भूदान आन्दोलन में सक्रिय भागीदारी के साथ वे राजकीय बालिका इण्टर कालेज में छात्र संघ की अध्यक्षा रहीं तथा मण्डल स्तर पर आयोजित वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में प्रथम स्थान प्राप्त किया। वे राज्य प्राप्ति के भाजपा के अभियानों के साथ 1994 आन्दोलन में भी बहुत सक्रिय रहीं। विश्व संवाद केन्द्र के महिला विभाग, विद्योत्तमा विचार मंच की प्रमुख रहने के बाद वे विश्व संवाद केन्द्र, उत्तराखंड की ट्रस्टी तथा दीनदयाल सेवा प्रतिष्ठान की प्रादेशिक कार्यकारी अध्यक्ष हैं। देहरादून स्थित श्री गोवर्धन सरस्वती विद्या मन्दिर इण्टर कॉलेज, प्रबंधन समिति की सदस्या, टिहरी स्मृति एवं विस्थापित एकता मंच की अध्यक्षा, दूर्वा (दूनघाटी रक्षण वामा अभियान) की अध्यक्षा, उत्तराखंड प्रेस क्लब, देहरादून की एसोसिएट सदस्य, तथा उत्तराखंड शोध संस्थान और हिन्दी साहित्य समिति, देहरादून की सदस्य रहने के अलावा वे अखिल गढ़वाल सभा की भी सदस्य हैं। वे 'गगरी' मासिक पत्रिका की सम्पादक तथा भारतीय जनता पार्टी उत्तराखण्ड के प्रकाशन विभाग की प्रमुख व मुखपत्र 'देवकमल' की प्रबन्ध सम्पादक हैं।

श्रीमती विनोद उनियाल 35 से अधिक वर्षो से भारतीय जनता पार्टी में सक्रिय हैं तथा वर्ष 2003 में भाजपा प्रत्याशी के रूप में देहरादून नगर निगम में मेयर का चुनाव लड़ चुकी हैं। राज्य में तत्कालीन सरकार के द्वारा मतगणना में धांधली करवाये जाने के चलते परिणाम की घोषणा कांग्रेस पार्टी की प्रतिद्वंद्वी प्रत्याशी के पक्ष में होने को उनके द्वारा जिला न्यायालय में चुनौती देकर निरस्त करवा दिया गया था, यद्यपि उच्च न्यायालय द्वारा इस निर्णय पर स्थगन दे दिये जाने के कारण यह कार्यान्वित नहीं हो सका। वे भारतीय जनता पार्टी में प्रदेश उपाध्यक्ष तथा महिला मोर्चा में प्रदेश महामंत्री सहित कई पदों पर कार्य करने के साथ वे पार्टी में जिला प्रभारी पुरोला और पछवादून, सदस्य राज्य सक्रिय सदस्यता सत्यापन समिति, सदस्य राज्य स्तरीय घोषणा पत्र समिति, सदस्य राज्य अनुशासन समिति जैसे विभिन्न दायित्वों का निर्वहन भी कर चुकी हैं। उनकी गणना पार्टी के वरिष्ठ एवं अनुभवी नेताओं में होती है।

आस्था पथ यात्राएँ

देश-विदेश के कई स्थानों पर भूगोल व संस्कृति तथा विविधता के दर्शन का सौभाग्य भी प्रभाकर जी को मिला। इनमें देश के चारों बड़े धामों (श्री बद्रीनाथ, श्री जगन्नाथ पुरी, श्री रामेश्वरम् व द्वारिका), चारों कुम्भ क्षेत्रों, सातों मोक्ष तीर्थों, सभी बारह (द्वादश) ज्योतिर्लिंगों के अतिरिक्त श्रीकालहस्ति (तमिलनाडु), पशुपतिनाथ (नेपाल) तथा गोकर्ण महाबलेश्वर (कर्नाटक) के बड़े शिवतीर्थ तथा कामाख्या (असम), वैष्णोदेवी (जम्मू-कश्मीर), तारापीठ (प.बंगाल), छिन्नमस्ता (झारखण्ड), काली (दरभंगा, बिहार), थावे (गोपालगंज, बिहार), विन्ध्यवासिनी (उत्तर प्रदेश), मीनाक्षी (मदुरै, तमिलनाडु), चण्डिकेश्वरी (मैसूरु, कर्नाटक) जैसे प्रमुख शक्तिपीठ सम्मिलित हैं। आपने भगवान राम के पूरे परिपथ तथा सम्बन्धित स्थानों, अयोध्या एवं चित्रकूट (उत्तर प्रदेश), सीतामढ़ी (बिहार), जनकपुर धाम (नेपाल) और रामेश्वरम् (तमिलनाडु) की यात्रायें भी की हैं। भगवान कृष्ण से सम्बन्धित स्थानों मथुरा, वुन्दावन, द्वारिका तथा वेट द्वारिका के पुण्य दर्शनों का सौभाग्य भी आपको मिला।

प्रभाकर जी ने देश के कई प्रमुख तीर्थ स्थलों, श्री तिरुपति बालाजी (आंध्र प्रदेश), श्री सिद्धि विनायक मन्दिर (मुम्बई), श्री रघुनाथ मंदिर (जम्मू) और विष्णुपद मंदिर (गया, बिहार) का भी भ्रमण किया। आपने पूरे बौद्ध परिपथ, जन्मस्थान (लुम्बिनि, नेपाल), वे जिस राज्य के राजकुमार थे (कपिलवस्तु, नेपाल), बोधिसत्व प्राप्त होने के स्थान (बोधगया, बिहार), शिष्यों को पहला उपदेश देने के स्थान (सारनाथ, उत्तर प्रदेश), चातुर्मास के निवास (राजगीर, बिहार) और परिनिर्वाण स्थल (कुशीनगर, उत्तर प्रदेश) का प्रवास भी किया है। आपने प्रमुख जैन मन्दिरों (भगवान महावीर की जन्मस्थली वैशाली और सम्मेद शिखर पारसनाथ, बिहार) तथा रणकपुर (राजस्थान) का भ्रमण भी किया है। सिखों सबसे बड़े तीर्थ स्थान अमृतसर के श्री हरमन्दिर साहिब के अलावा राजस्थान के प्रसिद्ध करणीदेवी (चूहों के) मन्दिर और विवेकानन्द शिलास्मारक, कन्याकुमारी की यात्रा भी आपने की। बोधगया में बोधिवृक्ष तथा उत्तर प्रदेश के हमीरपुर और उत्तराखण्ड के पाताल भुवनेश्वर में कल्पवृक्ष के अलावा थाईलैण्ड के बैंकाक में आपने भगवान बुद्ध की परिनिर्वाण मुद्रा के दर्शन भी किये। दरगाह शरीफ अजमेर व सेन्ट जेवियर चर्च गोवा में भी आपका जाना हुआ।

पुण्यदर्शन एवं प्रवास

प्रभाकर जी राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, मुम्बई, कोलकोता, बंगलुरू, हैदराबाद, चेन्नई, जयपुर, बीकानेर तथा लखनऊ, पटना व आगरा जैसे बड़े नगरों के अलावा खजुराहो, पंचमढ़ी, कोणार्क (उड़ीसा) नालन्दा (बिहार), गोलकुण्डा फोर्ट (तेलंगाना), ऊटी व कोडाईकोनाल (तमिलनाडु), दार्जिलिंग (प.बंगाल), अहमदाबाद व पोरबंदर (गुजरात), कोचीन (केरल), पंजिम, वास्को-डी-गामा, मडगांव (गोवा), दीव (दमन और दीव) तथा अण्डमान व निकोबार, हिमाचल प्रदेश के कुल्लू, मनाली, रामपुर बुशहर व शिमला, राजस्थान के पुष्कर जी व परशुराम मन्दिर तथा पाकिस्तान की सीमा पर बाघा बार्डर (अटारी, पंजाब) तथा फाजिल्का (हरियाणा) आदि बड़े ऐतिहासिक एवं पर्यटन स्थलों की यात्रा कर चुके हैं।

प्रभाकर जी ने गढ़वाल में श्रीबद्रीनाथजी, श्रीकेदारनाथ, गंगोत्री, यमुनोत्री, गोमुख, सुरकण्डा, चन्द्रबदनी, कुंजापुरी, ज्वालपादेवी, राजराजेश्वरी, विश्वनाथ (उत्तरकाशी), धारी देवी, सेम-मुखेम, महासू देवता हनोल, लाखामण्डल, हरिद्वार व ऋषिकेश आदि तथा कुमाऊं में अल्मोड़ा की नन्दा देवी, गोलू देवता चितई, मनीला देवी, जागेश्वर मंदिर, बैजनाथ, नैना देवी, पातालभुवनेश्वर तथा कांडा मंदिर जैसे धार्मिक स्थलों में दर्शन किये हैं। प्रमुख पर्यटक केन्द्रों में मसूरी, चकराता, नागथात, लाखा मण्डल, त्यूणी, लैन्सडाउन, चम्मा, टिहरी, श्रीनगर, पौड़ी, कोटद्वार, गोपेश्वर, चोपता, गैरसैण, हर्षिल व माणा, नैनीताल, अल्मोड़ा, रानीखेत, कौसानी, पिथौरागढ, बागेश्वर, मुनस्यारी व धारचूला के अलावा भटवाड़ी, मनेरी, धौंतरी, चिन्यालीसौड़, बड़ेथी व बनचौरा तथा बड़कोट, पुरोला, मोरी, नैटवाड़, सांकरी, आराकोट, राजगढ़ी, डाम्टा व नैनबाग, देवप्रयाग, चामियाला, घनसाली, लम्बगांव, भागीरथीपुरम, गजा, नकोट, फकोट, चाकीसैण, परसुण्डाखाल, कोट, द्वारीखाल, सिलोगी, नैनीडांडा, डाडामण्डी, मोलेखाल, पैसिया, ध्याड़ी, दन्या, लमगड़ा, देवलथल, नाकोट, बेरीनाग व घोरपट्टा और काण्डा सहित अनेकों स्थानों पर आपका रहना हुआ।

प्रभाकर जी का सुदूर दक्षिण पूर्व के देशों में इण्डोनेशिया के जकार्ता व पलाऊ प्रमुका द्वीप तथा थाईलैण्ड के बैंकॉक व पटाया में जाना हुआ है। पड़ोसी देश नेपाल की आपने कई बार यात्रा की है, काठमाण्डू, पोखरा, विराट नगर, बीरगंज, भैरहवा, बुटवल, बीरपुर, जयनगर, कृष्णनगर तथा तानसेन आदि स्थानों पर आपका खूब भ्रमण हुआ। इनके अलावा ठहराव के तौर पर आपका दुबई तथा सिंगापुर भी जाना हुआ। ये विविध यात्रायें आपकी कई रोचक कहानियों का विषय भी बनी हैं।

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रभाकर जी साहसी एवं निडर व्यक्ति के तौर पर जाने जाते रहे हैं। छात्र राजनीति, समग्र क्रान्ति आन्दोलन व कर्मचारी-अधिकारी संघों में अग्रणी रहना नेतृत्व के आपके स्वाभाविक गुण का प्रमाण थे। सत्ता प्रतिष्ठान को चुनौती देने में आप कभी पीछे नहीं रहे और आपका मानना है कि चुपचाप सह लेने से ही अन्याय बढ़ता है, इस पर पर मौन रहना कायरता है और यह कि संघ से आपने कायर नहीं, निर्भीक बनना सीखा है। देहरादून नगर निगम के मेयर के पद को अनारक्षित करने के सरकार निर्णय को षडयंत्रपूर्ण अन्याय ही नहीं, अवैध, अनैतिक व अनावश्यक मानते हुए तत्कालीन मुख्यमंत्री से वार्ता तक आप पाँच दिनों तक उपवास पर बैठे रहे। आपके कद का अनुमान इस बात से ही लगाया जा सकता है कि इस दौरान आपसे मिलने संघ अधिकारी, राज्य के मंत्रीगण तथा पार्टी के प्रदेश अध्यक्ष रह चुके प्रमुख लोगों के साथ विधायक, पदाधिकारी तथा अन्य राजनीतिक दलों के नेता भी सम्मिलित थे। संवाद माध्यमों में भी विषय को प्रमुखता से स्थान मिला और तत्कालीन मुख्यमंत्री को भी बातचीत के लिए विवश होना पड़ा था।

प्रभाकर जी विविधताओं का आदर करते और नये विचारों व व्यक्तियों के साथ शीघ्र तादात्म्य बनाते हुए नयी खोजों व नवोन्मेषी उपक्रमों का स्वागत कर रचनात्मक दृष्टिकोण के साथ इन्हें अपनाते भी थे। आप चुनौती को स्वीकार कर इसके लिए स्वयं को सक्षम बनाने का भी प्रयास करते। देहरादून मेयर के चुनाव परिणामों को मतगणना में धांधली द्वारा उलट दिये जाने का मामला न्यायालय में आपके गहन अध्ययन व विश्लेषण के चलते ही तार्किक परिणिति तक पहुँचा और निर्वाचित घोषित किये गये विपक्षी प्रत्याशी का चुनाव निरस्त हुआ था। इसके लिए आपने माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल का गहन प्रशिक्षण लिया और न्यायालय के समक्ष प्रभावी रीति से योग्य अधिवक्ता के माध्यम से तथ्य सिद्ध किये। भाजपा के लिए माइक्रो मैनेजमेन्ट के प्रशिक्षण देते समय आपने एक्सेल में अपनी विशेषज्ञता से इसे प्रभावी व उपयोगी बनाते हुए नया आयाम जोड़ा। बैंक सेवा में भी इस विशेष योग्यता के द्वारा आपने अपनी भूमिकाओं को बहुत अधिक प्रभावी बनाया और कई सारे अध्ययन प्रस्तुत किये।

चरित्र एवं चिन्तन

प्रभाकर जी सिद्धान्तों को व्यवहार में उतारने में विश्वास करते थे, इस ओर लाभ-हानि की दृष्टि से विचार नहीं करते, लीक से हटकर कुछ करने का साहस रखते और प्रतिकूल परिणाम के भय से अपने सही निर्णयों को नहीं पलटते। 'मनस्येकं वचस्येकं' को आप कर्म में अपनाते और अकेले पड़ने पर भी धैर्य नहीं छोड़ते।

प्रभाकर जी धार्मिक व सामाजिक परम्पराओं का सम्मान करते थे, यथासम्भव मर्यादाओं का पालन करते, प्राचीन रीति-रिवाजों में विश्वास रखते तथा आस्था के प्रतीकों के प्रति श्रद्धा रखते हैं लेकिन आडम्बर और अंधविश्वासों का खुल कर विरोध भी करते थे। सत्य भाषण व प्रपंचरहित पारदर्शी लोक व्यवहार के प्रति आपका विशेष आग्रह रहता और इसे मुखरता के साथ व्यक्त करते थे। मित्र तथा परिचित आपके प्रति विशेष स्नेह व आदर का भाव रखते। साथी कार्यकर्ताओं, सहकर्मियों व मित्रों-परिचितों से आपके दशकों पुराने सम्बन्ध आत्मीय व मधुर ही नहीं, सदैव सद्य बने हुए थे। बहुमुखी व्यक्तित्व होने के कारण आप सदैव एक भूमिका में ही बंधे नहीं रहते थे और 'चरैवेती' में विश्वास करते हुए विविध क्षेत्रों में योगदान करते थे। ईर्ष्यालु व विरोधी लोगों को भी आपकी प्रशंसा करने को विवश होना ही पड़ता। प्राय: कई विषयों पर लोग आप से मार्गदर्शन, प्रेरणा व परामर्श भी लेते।

अध्ययन, भ्रमण और बागवानी के शौकीन प्रभाकर जी का समय सामाजिक कार्यों के साथ लेखन एवं चर्चा-वार्ता आदि बौद्धिक व रचनात्मक गतिविधियों में बीतता। पूर्वजों द्वारा कुलदेवी माँ भगवती राजराजेश्वरी एवं माता सुरकण्डा देवी के गांव में स्थापित दुर्गा स्वरूप तथा इष्टदेवता बटुक भैरव के दर्शनों एवं पूजा आदि के लिए प्राय: वर्ष में एक-दो बार आप अपने पैतृक गांव में जाते और बचपन की अपनी यादें ताजा करते। आपके परिवार के सदस्य भी इन यात्राओं में उत्साहपूर्वक साथ देते।

परम क्या है साध्य! क्या सत्य है!

सत्य ही इस सृष्टि का, कोई नहीं है पार
है कहाँ से आदि, और क्या कहाँ आधार
कब बनी, किसने बनायी, और कैसे चल रही
इस अनन्ताकाश में, विस्तार है कितना !

कैसे नियन्ता ने रचे हैं, ये सभी शाश्वत, नियम
चलित जिनसे सब चलाचल तत्व हैं
परमाणु से ग्रह पिण्ड तक, गतिमान हैं सारे
पर परिधि की रेख है, सीमा सभी की।

स्थूल नियमों तक, प्रकृति जड़ पिण्ड के
क्यों नहीं सीमित रहा, जगती का नियन्ता
जीव के संसार और विस्तार की चिन्ता
क्यों कर बनी, कारक समूची सृष्टि की।

बांधता सौन्दर्य क्यों, मोह के अनूठे पाश से
बालपन भी क्यों लुभाता, सृजक पालक वृन्द को
क्यों है सुख की लालसा, तन मन जगाती
परम क्या है साध्य! क्या सत्य है! जाना कहाँ है!

जीजीविशा क्यों प्रबल हो, आगे बढ़ाती
विविध बाधा रोकती, क्यों राह हैं!
क्यों चुनौती मिल रही, जीवन जगत को
प्रगति और विस्तार फिर भी, क्यों है निरन्तर!

क्यों सतत् संघर्ष, सनातन द्वित्व क्यों है
असत् का सत् से, दिवस का रात्रि से
प्रकाश तम का साथ है, तो बैर क्यों है
जगति के विस्तार में भी,
मरण अन्तिम सत्य क्यों है।

क्यों हैं सारे चक्र और क्यों है माया चाल
जन्म का क्यों मृत्यु से, है सतत् रहता साथ
नष्ट ही होना है जिसको, आकार क्यों लेता
क्यों है पाता बृद्धि, विस्तार क्यों करता?

है कहाँ उत्तर, प्रकृति के इस सत्य का
सृष्टि की सीमा नहीं, क्यों है अनन्ताकार
लघुत्तम के मूल में भी, शून्य का विस्तार!
सत्य है क्या शून्य, जो कुछ भी नहीं है!

जो कुछ नहीं, सब कुछ वही है?
मिथ्या क्या यह, सब चराचर सृष्टि!
जा नहीं सकता, मस्तिष्क और आगे
हो गया क्यों ज्ञान है, आधीन मन के!

क्यों बना मस्तिष्क, उसमें कल्पनाएँ
कैसे रचा मन, ले असीमित भावनाएँ
कब सजा तन, पाले नवेली कामनाएँ
क्या मनुज ही से, हैं सभी सम्भावनाएँ!

जड प्रकृति जो, जीव का आधार है
नष्ट होती सतत्, फिर भी जीव से ही
जीव को भी आपदाओं से है कहाँ मुक्ति
प्रकृति का यों जीव से संघर्ष नित है!

जीव का ही द्वित्व होकर जीव है शत्रु
अस्तित्व का अभिमान का और स्वत्व का संघर्ष
कल्याण का ले भाव जग में, द्वन्दरत दैवत्व है
कष्ट दे दानव अहं से महामद हो अन्ध है

सृष्टिरूपा हो प्रकृति क्या संघर्ष का आधार!
जननि भी क्या पुत्र की होती कभी है शत्रु
व्यथित होती कष्ट से पर रुष्ट होती है कहाँ
चैतन्य जग पालित सदा ही सृष्टि से।

चैतन्य जड़ जब एक हैं सब ओर
क्यों है दिखता यह सतत् संघर्ष
नहीं प्रकृति यह जीव का ही दम्भ है
पीड़ित सदा करता समूची सृष्टि को

दम्भ से ही देवता दानव बना है
कुछ नहीं यह मनुज का ही द्वित्व है
द्वित्व होकर जीव ही है जीव का शत्रु
संघर्श है अस्तित्व और अभिमान का

अस्तित्व भी कब सम्भव है एकाकी
अस्तित्व का अस्तित्व है संघर्ष से
शीत का ज्यों उष्ण से या घृणा का प्रेम से
विलोम ही सार्थक बनाता सत्य को।

अस्तित्व का क्यों दर्प इस अनन्ताकाश में
है ये कैसा दम्भ जो व्यर्थ में हुँकारता है
कुछ न हो सर्वस्व सा अभिमान
दानवों की आसुरी है यह प्रथा।

लिप्त है दानव सदा से भोग में
है भोग ही आधार उनके आनन्द का
भोग के विस्तार की लिप्सा
उत्तेजना बन क्रूरता का बीज बोती

अन्य को पीड़ा दानवों का मंत्र है
दैवत्व को धिक्कार है जयघोष
तीव्रतर कर वासना और कामनाएं
अनैतिक उपभोग करते छल व बल से

शक्ति सत्तामत्त मद है ध्येय जिनका
लोक मंगल सत्य सेवा धर्म उनको हेय है
सरलता सन्मार्ग तज स्वेच्छाचार रत् जो
दानवों की वृत्ति का विस्तार ही हैं

पतन की ही ओर जाती दानवों की हर दिशा
मूर्ख हैं पर अहं करते दंभ भरते
भोग लिला क्रूर क्रीड़ा मानते सुख वीरता
दुष्टमति दानव सदा संहार पाते अंत में

दानवों के कृत्य से ही त्रस्त हैं सब
जड़ जीव हो या सनातन सृष्टि
दैवत्व से है वैर दानव का सदा से
देवता निष्काम पर दृढता से खड़ा है

निर्लिप्तता, पर दैवत्व का दुख: है
क्यों नहीं है कामनाएं ज्वार लातीं
क्यों नहीं मन होता है तरंगित
रहता स्थिर क्यों है चित्त चंचल

देवता है शान्त कोई गति नहीं है
न कहीं है तर्क कोई मति नहीं है
एक रस दैवत्व विविधता है कहाँ
सब दिशायें एक तब जाना कहाँ है

नहीं है नहीं दैवत्व का यह अर्थ
दैवत्व तो है धारणा गुण धर्म की
सर्वत्र ही है सर्वहित का कर्म
दैवत्व से ही सृष्टि रक्षित है सनातन

देवता है शीर्ष इसकी उर्ध्वगति है
पूज्य है और लोक मंगल है सतत् मति
सब रसों का सार है देवत्व में
सत्य की ही प्राप्ति दैवत्व की है दिशा

कल्याण का ले भाव जग में, द्वन्द्वरत दैवत्व है
कष्ट दे दानव अहं से महामद हो अन्ध है

लालसा है सत्य की!

सत्य का संघर्ष से होता है सदा ही सामना
पाप से भी छल-कपट और दंभ से भी।
हार भी जाए यह सत्य, पर कभी मिटता नहीं है
सत्य ही इस सृष्टि का शाश्वत बना आधार है।

विश्वास का आधार भी तो सत्य ही है,
स्वत: श्रद्धा प्राप्त होती सदा सत्याचरण से।
सत्य से बनती व्यवस्था, मिलता सम्यक न्याय भी,
स्थापित मर्यादाए सभी होती निरन्तर सत्य से।

हर पल कसौटी पर कसा जाता है सत्य,
सत्य की यह वेदना भी निश्चय सत्य है।
सत्य पथ की राह में बिछे कांटे भी बहुत हैं,
बनकर शूल जो प्राय: व्यथित मन को हैं करते।

सत्य की यह लालसा फिर भी कम नहीं होती
पुष्ट होता आत्मबल पा नित्य संबल सत्य का।
सत्य ही पावन, वाहक सतत शुभ कीर्ति का,
सद्चारित्र्य का संकल्प, कारक मानव धर्म का।

आचरण व्यवहार का व्यापार सारा सत्य हो,
धर्म का और न्याय का संसार सारा सत्य हो।
सत्य का जयघोष हो और स्थापित सत्य हो,
सत्य का ही हो वरण, सब प्रार्थनाएं सत्य हों।

पाँच महा कारक प्रकृति के!

है अग्नि यह जीवन, ताप ऊर्जा तन में बनी जिससे,
है इसे वांछित वह ईंधन, मधुकोश जिसका स्रोत है।
इस मधुस्रोत के भंडार से, भीतर ज्वाला है धधकती,
प्रकृति के इस चक्र में, अग्नि प्रमुख कारक तत्व है।

ईंधन शिराओं में बहे, इसको होना होगा तरल,
तरलता का गुण है स्वाभाविक सदा जलसूत्र में।
दौड़ता यह रक्त जिससे, सतत वाहक शक्ति का,
रक्त मज्जा मांस में उपस्थित जल महान कारक तत्व है।

जल यह रहे जीवित और अग्नि भी हो प्रज्ज्वलित,
कोशिकाओं को वायु का आधार आवश्यक है सदा।
वायु का भंडार तन को विस्तार है देता निरंतर,
हर सांस में चढ़ती उतरती वायु बड़ा कारक तत्व है।

रत्नगर्भा है धरा जिसमें प्रकृति के तत्व हैं सारे,
सर्वत्र सुलभा यह मृदा पोषक भरक और संचिका है।
आकार लेने स्थूल तन का, जो बनता सतत आधार,
पृथ्वी ही वह तत्व, जो कारक प्रथम माना गया है।

जो कहीं भी नहीं दिखता, है वही सब कुछ,
होकर सभी कुछ, वह कहीं कुछ भी नहीं है।
वह न हो तो, किसी का भी नहीं अस्तित्व,
प्राण ही वह तत्व जो कारण कारक सार है।

आतंक का सर्वस्व मुझ को नष्ट है करना!

चढ़ चुका है अब धनुष पर चाप
गूंजती टंकार बन घनघोर गर्जन
आ डटा है वीर समर प्रांगण में समुद्यत
है कहाँ आतंक इसको पोसने वाले!

बुद्ध का यह देश, देकर शांति का संदेश,
युग-युग से रहा अक्षय ज्ञान का भंडार,
जो मानता परिवार पूरे विश्व को
हिंसा तुम्हारी क्यों कर टिके सामने उसके?

त्याग का, बलिदान का, संकल्प का भी,
शौर्य का, चारिष्य का, इतिहास है उज्वल,
आजाद, बिस्मिल, भगत, सुखदेव जैसे
राजगुरु, ऊधम सभी पुंज हैं इस प्रेरणा के।

ले शिवा का तेज, महाराणा का पराक्रम,
रानी झांसी का साहस, गुरु गोविंद का बाना,
इन शिराओं में रक्त है जब खौलता,
शत्रु का सम्पूर्ण संहार होता है सुनिश्चित!

मैं राम का हूँ अंश, श्रीकृष्ण का उद्घोष
विष्णु से ले सुदर्शन चक्र, पिनाकिन से त्रिशूल,
खड्ग-खप्पर देवी से, गदा श्री हनुमान से,
आतंक का सर्वस्व मुझ को नष्ट है करना।

हिम निर्झरों वन पर्वतों और प्रकृति की माला
माता प्रसूता वीर की ने राष्ट्रव्रत के साथ पाला
एक भी शत्रु इस देश का बचने न पाये
करने सिद्ध यह संकल्प रणक्षेत्र में मैं आ डटा हूँ।

गढ़वाली बाँद

नाक में नथ, होंठों पर झलकती है बुलाक
मुरखलियाँ लटकी हैं कई, कानों को झुकाये
साफे से ढ़के सिर की है शोभा स्यूंद पाटी
घने बालों से गुंथी पीछे है सुन्दर दीर्घ चोटी।

सूत धागे का बना फोंदा बंधा चोटी को बढ़ाये
जिसके सिरे पर चांदी की चिमटी नुकीली नकचुण्डी
शरीर पर झगुला, काली सदरी से ढ़का बिन बांह की
जेब में जिसके काला दुमुंहा काष्ट का कंघा छिपा है।

माथे पर सिन्दूरी तेज, बड़ी सी लौंग लम्बी नाक पर
गले में झिलमिल तिमणिया लाल और गलाबन्द स्वर्ण का
पौंछी गोल दानों से बनीं, बंध कर सजी हाथ में दोनों
पीछे चूड़ियों की पंक्तियां बजती खनकतीं साथ में।

चटख हल्के रंग ले धोती बनी जो साड़ी सी
सुन्दर करीने ढंग से तन-मन पर है लिपटी
बटे रस्सी से उससे कमर भी कस कर बंधी है
इस कमर में खोंस दी हथियार सी पैनी दराती।

पांव है नंगे लेकिन धुले और साफ सुथरे
उन पर फब रहीं पाजेब संग छोटे घुंघरुओं के
पांव के आगे उंगलियों पर बिछुए भी निखरते
थिरकती एड़ियों पर मधुमास यौवन का है आया।

मानवी किस रूप को मानूं तुम्हारे,

मानवी किस रूप को मानू तुम्हारे,
हैं कई आयाम व बहुत से नाम सारे,
जननी से पुत्री, भगिनी, सखि, भोग्या तुम्हीं हो,
हो प्रेयसी और प्रेरणा, ममता, करुणा, दया भी।

गृहिणी, धर्मिणि, गर्भिणी, पयधारिणी भी,
स्नेह से पूरित, पालनहार माता भी तुम्हीं हो,
वात्सल्य से सन्तान पालन करती कष्ट सह भी,
चलता तुम्हीं से वंश और आगे बढ़ रहा संसार है।

हो तुम ही तो लक्ष्य और कारण सदा रसराज की,
स्रोत हो उल्लास की, उत्सव व मोहक काम की,
मनमोहिनी माया प्रकृति का शुभ सार हो तुम,
देवता दानव मनुज का, हो सभी का प्यार भी।

ले खड्ग अपने हाथ में बन दुर्गा भवानी,
दुष्ट दुर्जन दानवों की दुर्गति करती सदा ही,
देवत्व की शुभ शक्ति को सहज निज में समेटे,
होता सतत मंगल सभी, देवी तुम्हारे नाम से।

देवी! वंदे मातरम, यह राष्ट्र की संकल्पना है,
विजय है संघर्ष में, और प्रेरणा सुख-शांति की,
कामना कल्याण की, सारी प्रकृति और संसार की,
परिवार घर की केंद्र नारी, इस सृष्टि का आधार है।

मौन मुखरित हो उठा अभिनव युवा संघर्ष में
(देश के युवाओं को समर्पित कविता)

राजपथ की चहकती बीथियों पर,
अचानक बड़ा सैलाब है उमड़ा।
हर कंठ से होने लगा, चीत्कार क्रंदन,
धधकती ज्वाला बनी है दीपमाला।

बेटियाँ-बहिनें, संजोकर स्नेह बन्धन,
संकल्प दृढ़ के साथ, आगे आ डटी हैं।
अब नहीं सहना, किसी भी वेदना को,
शक्ति से अन्याय का प्रतिकार है करना।

मौन मुखरित हो उठा, अभिनव युवा संघर्ष में,
बन्द मुठ्ठी तन हवा में, आक्रोश से फुंकारती।
बेटी किसी मां की, पिता की या चहेती,
अब न हो पीड़ित किसी व्याभिचार से।

कांपते होठों से फूटी, वेदना ध्वनि,
पिघले लौह सी, कानों में पड़ती।
गूंजे नहीं यों अब कभी, चीत्कार ऐसी,
हर दिशा से एक, यह समवेत स्वर है।

प्रेरणा सी बन, करोड़ों के हृदय में,
पथ नया संघर्ष का तुमने गढ़ा है।
एकजुट हो बाल, युवती, नारियां,
स्वत्व के संघर्ष का नवगीत गायें।

बन गई वाणी हो, हर उस पीड़िता की,
दंश जिसने इस तरह भोगा, सहा है।
गर्जना-हुंकार सी तुम, चेतना प्रतिरोध की,
युग लेख की शीर्षक बनी सम्मान से।

कौन हो तुम, नाम क्या है, रूप कैसा,
कौन हैं माता-पिता, कुल-गोत्र-बान्धव।
छोड़ पीछे व्यक्तिगत सब आवरण,
लाडली बिटिया बनी हो देश की।

कल्पना स्वप्निल, सलोनी और सुमधुर
तैरती होगी तुम्हारे मस्तिक मन में।
योजना पग-पग नये आयाम की,
अभिनव, सुखद, मंगलमय पलों की।

हाय बज्राघात सहसा हो गया,
खण्डित हो, सब कुछ तिरोहित हो चला।
सन्न मानवता, जगत, युग और जन-गण,
पल-पल समय का आज ज्यों ठहरा गया हैं।

दानव, पशु या दैत्य, जो भी दुष्ट मन हैं,
दण्ड पायेंगे कुकर्मी, यह तो है सुनिश्चित।
पर वीरता संघर्षयुत गाथा तुम्हारी,
होगी अमिट जन-जन की गिरा पर।

स्वर्गीय डॉ. नित्यानन्द स्वामी जी : स्मरणांजलि

बात साठ के दशक की है। देहरादून शहर उन दिनों काफी छोटा था, शहर की पुरानी आबादी दरबार साहिब (झण्डा जी) के आस-पास और नयी आबादी घंटाघर के इर्द-गिर्द सिमटी हुई थी। नगर का केन्द्र धामावाला तथा मुख्य आकर्षण पल्टन बाजार हुआ करता था। झण्डा जी के पास के खुड़बुड़ा मोहल्ला एवं घंटाघर के निकट चुक्खुवाला में अधिकांशत: पर्वतीय भागों, विशेषकर गढ़वाल के लोग रहते थे। आनन्द चौक व लक्ष्मण चौक उस समय शहर के पॉश इलाके हुआ करते थे तथा डालनवाला बड़े रईसों का इलाका। नगर के बीच की पुरानी आबादी में अधिकांशत: पश्चिमी उत्तर प्रदेश (मेरठ, मुजफ्फरनगर व सहारनपुर आदि) से आये व्यापारी समुदाय के लोग प्रमुख थे तथा जबकि मन्नूगंज, मच्छी बाजार व धामावाला मोहल्ले पंजाब (तत्कालीन पश्चिमी पाकिस्तान) से आये शरणार्थियों का केन्द्र थे। पटेल नगर और करनपुर पंजाबी शरणार्थियों और पुराने निवासियों की मिली-जुली आबादी वाले इलाके थे। पुरानी आबादी का व्यापारी वर्ग अपनी धार्मिक प्रवृत्ति के चलते तथा पंजाबी समुदाय पाकिस्तान में हुए उत्पीड़न के कारण हिन्दुत्व का समर्थक था जिससे यहाँ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की गतिविधियाँ तेजी से बढ़ रही थी।

संघ समर्थक पृष्ठभूमि के कारण वर्ष 1951 में जनसंघ की स्थापना के बाद देहरादून में पार्टी का प्रभाव बढ़ता गया। उस समय अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद की ओर से डीएवी कॉलेज के प्रमुख छात्र नेता के तौर पर उभरे युवा नित्यानन्द स्वामी नगर में जनसंघ के अगुवा बने और सन् 1957 के दूसरे आम चुनाव में नगर विधानसभा सीट से जनसंघ के प्रत्याशी बनाये गए। अपनी सक्रियता व स्वभाव के कारण स्वामी जी शीघ्र ही काफी लोकप्रिय हो गए और शहर के बीच का इलाका जनसंघ का मजबूत गढ़ बन गया। मेरे लिए सुखद संयोग यह रहा कि हमारा निवास झण्डा मोहल्ला, मन्नूगंज व पुराने खुड़बुडा के संधि स्थल पर था जहाँ राष्ट्रीय

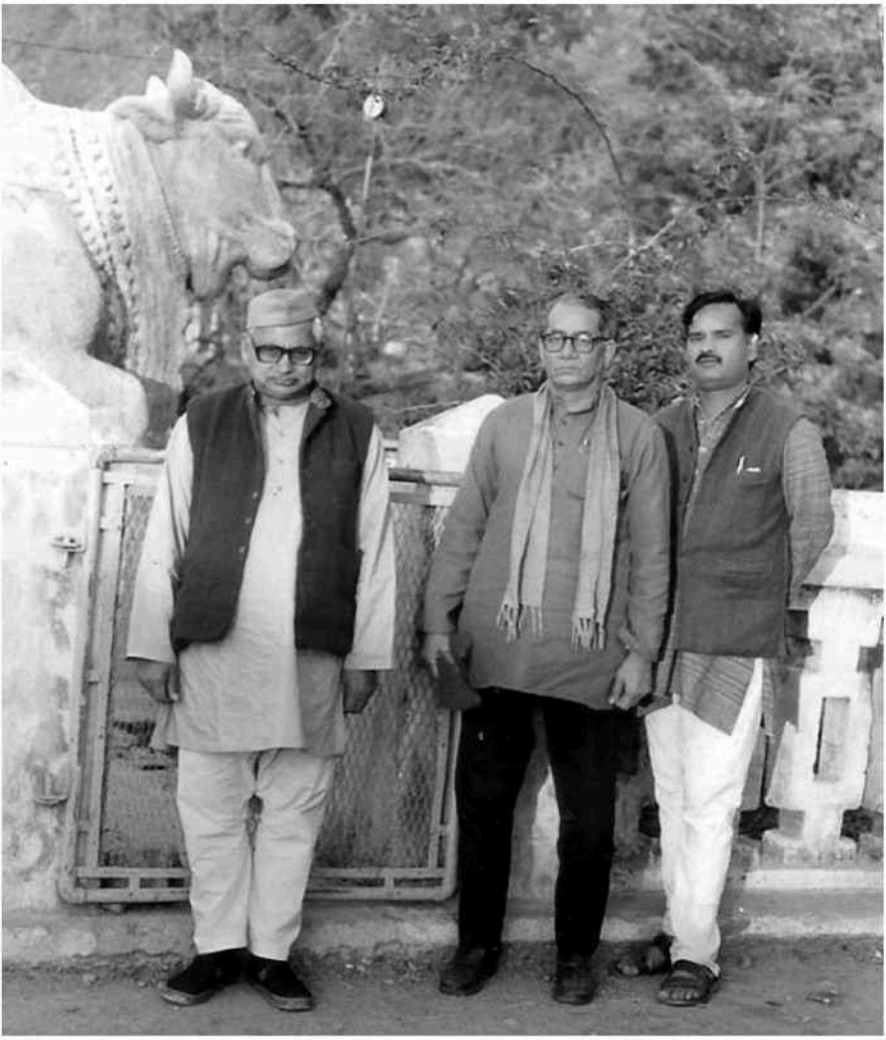

स्वयंसेवक संघ का गहरा प्रभाव था। जनसंघ ही नहीं, उसके पश्चात भारतीय जनता पार्टी का भी मन्नूगंज वार्ड तब से आज तक अजेय दुर्ग बना हुआ है। मुझे स्मरण है कि स्वामी जी इस इलाके के प्रत्येक घर के लिए परिवार के सदस्य जैसे थे और उनके प्रति यहाँ भारी आदर का भाव था। स्वयं मेरे पिता भी संघ के अनुयायी, जनसंघ के समर्थक और स्वामी जी के प्रशंसक थे। उन दिनों देहरादून में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का भी अच्छा खासा प्रभाव था। निताई घोष, सुनील चन्द्र दत्ता व धनीराम सिंह नेगी ऐसे बड़े नाम थे जिनके पीछे कर्मचारी वर्ग, खासतौर पर सर्वे ऑफ इण्डिया के कर्मचारी मजबूती से खड़े मिलते थे। कांग्रेस के अन्दर

स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों का बोलबाला जरूर था किन्तु इसके नेता वी.बी. शरण, भले ही दो बार विधायक रहे, किन्तु जनता उनसे कभी नहीं जुड़ पाई। जनता प्रभावशाली नेतृत्व की तलाश में थी, यह अवसर सन् 1969 में आया, जब जनसंघ के उम्मीदवार के रूप में स्वामी जी जनता की आशा के केन्द्र बने व देहरादून नगर से उत्तर प्रदेश विधानसभा के लिए चुने गए। पहली बार विधायक बनने पर भी प्रतिभा के धनी स्वामी जी को विधानसभा में जनसंघ का मुख्य सचेतक बनाया गया।

स्वामी जी की कार्यशैली कुछ ऐसी थी कि अकेले वे ही नहीं, उनका पूरा परिवार, मित्र तथा सहयोगी भी जनता की सेवा के लिए समर्पित दिखाई देते थे। दु:ख की बेला हो या सुख का उल्लास, स्वामी जी हर कहीं तत्परता से खड़े मिलते थे, साथ में प्राय: उनकी धर्मपत्नी स्व. चन्द्रकांता स्वामी भी। एक प्रसंग तो स्वयं हमारे परिवार के साथ ही जुड़ा है। गाँव से हमारे पास आयी मेरी चचेरी बहिन तब मुश्किल से 6-7 साल की रही होगी कि घर के पास चौराहे की सड़क पार करते समय, वह जनसंघ का झण्डा लगे किसी वाहन से टकरा गई। थोड़ा बहुत हो-हल्ला हुआ ही था कि 5-10 मिनट के अन्दर ही स्वामी जी की धर्मपत्नी स्वयं वहाँ पहुँच गई व बच्ची को तुरन्त दून अस्पताल ले गई। दुर्घटना गम्भीर नहीं थी फिर भी श्रीमती स्वामी की चिंता बहुत गहरी थी। उन्होंने बच्ची को सकुशल घर पहुँचा कर ही चैन लिया व अगले दो-तीन दिनों तक कुशलक्षेम लेने भी आती रहीं।

इसे नियती कहें या कुछ और कि सन् 1972-73 में मुझे भी विद्यार्थी परिषद के प्रत्याशी के रूप में देहरादून स्थित डीएवी कालेज छात्रसंघ अध्यक्ष का चुनाव लड़ने का अवसर मिला। स्वामी जी उस समय विधायक थे, बिना अधिक चर्चा किए, यह बताना समीचीन होगा कि कुछ सांगठनिक अन्तर्विरोधों के कारण हमारे बीच वांछित निकटता नहीं बन पाई, कारण जो भी रहा हो, किन्तु यह किसी के भी हित में नहीं था। इसी दौरान मैं लोकनायक जय प्रकाश नारायण नीत समग्र क्रान्ति आन्दोलन की छात्र युवा संघर्ष समिति का जिला संयोजक, तत्पश्चात गढ़वाल संयोजक व इसके उपरान्त प्रदेश स्तरीय छात्र युवा संघर्ष समिति का सदस्य भी बना। इसी आन्दोलन की राजनीतिक इकाई जन संघर्ष समिति के जिला संयोजक स्वामी जी बनाये गये। मेरे साथ सभी गैर कांग्रेसी छात्र संगठन जुटे थे व स्वामी जी के पीछे सभी गैर कांग्रेसी राजनीतिक दल। हमारा ध्येय एक था, संघर्ष की दिशा भी एक थी और कार्यक्रम भी एक जैसे। स्वामी जी और मेरे बीच अच्छा समन्वय बन रहा था कि पुराने अन्तर्विरोध सामने आने लगे। फिर भी, एक दूसरे के

सानिध्य का प्रलोभन हमें आपस जोड़े रहा व लोकनायक जयप्रकाश नारायण से दोनों की भेंट साथ-साथ ही नहीं, एक सशक्त टीम के रूप में हुई। सन् 1975 में आपातकाल लागू होने पर मैं मीसा (Maintanance of Internal Security Act) में वांछित रहा व स्वामी जी को भी वैसी ही विकट परिस्थितियों का सामना करना पड़ा और वे इस दौरान जेल में भी रहे। आपातकाल के बाद स्वामी जी की गाथा उनकी उपलब्धियों भरी राजनीतिक यात्रा की है।

अपनी राजनीतिक यात्रा में स्वामी जी को जिस उतार-चढ़ाव का सामना करना पड़ा, संघ व भाजपा से उनकी कुछ समय की दूरी की वास्तविकता जो भी रही हो, किन्तु उनके विरोध में इसे काफी मुखरता से सामने रखा गया। राज्य बनने पर मुख्यमंत्री के रूप में स्वामी जी के नाम की घोषणा भी इस कारण कई लोगों को सरलता से पच नहीं पाई। ऐसे लोगों में मैं स्वयं को भी सम्मिलित मानता हूँ, यद्यपि अनजाने में ही, मेरे निवास पर हुई महत्वपूर्ण लोगों की एक बैठक की भी, मुख्यमंत्री पद के लिए, स्वामी जी का नाम तय होने में कुछ भूमिका बताई जाती है। स्वामी जी का घोर, तीव्र व उग्र विरोध उनके मुख्यमंत्री बनने के पहले ही दिन से आरम्भ हो गया था। दस लाख रुपये का ओवर ड्राफ्ट लेकर आरम्भ हुई राज्य व्यवस्था को ऐसी विपरीत परिस्थितियों के बीच स्वामी जी ने जो मजबूत आधार और जैसी सटीक दिशा दी, उन्होंने जिस प्रकार सबको साथ लेकर चलने का प्रयास किया और विवादों से दूर रहते हुए राज्य को जिस प्रकार से गतिमान किया, वह याद रखने योग्य है। कांटों भरी राह में वे जिस तरह अविचलित रहे और भ्रष्टाचार के कीचड़ में भी वे शुभ्र कमल के समान जिस भांति निष्कलंक बने रहे, वह भी निश्चित ही स्तुत्य है।

इस प्रदेश में रहने वाला शायद ही कोई व्यक्ति हो, जो इस छोटे राज्य की 10-12 वर्ष की छोटी अवधि में, लगभग पौन दर्जन मुख्यमंत्रियों के किस्से-कहानियाँ न सुन चुका हो। कुछ के बड़े-बड़े बंगले और बड़ी-बड़ी सुविधायें और तामझाम खूब चर्चा में रहे हैं, जबकि स्वामी जी ने अपने दो-ढाई कमरों वाले पुराने मकान में रहकर ही राज्य का शासन चलाया। उनकी सादगी की बानगी मैं पुनःस्वयं से जुड़े एक उदाहरण से देना चाहूँगा। तब सातवीं कक्षा में पढ़ने वाली मेरी पुत्री अपनी बुआ (मेरी परिवार की चचेरी बहिन) के पास कुछ दिनों के लिए रहने गई थी। वे अपने पति के साथ किसी आवश्यक कार्य से स्वामी जी (तब मुख्यमंत्री) के पास गए, बेटी को बाहर बरामदे में बिठाकर, वे अन्दर मिलने चले गए। स्वामी जी को पता लगा कि छोटी बच्ची को बाहर बिठाया गया है, बेटी का परिचय जानने पर स्वामी जी स्वयं बाहर आये और उसे अन्दर ले गए, यह कहकर

कि, तुम तो हमारी बेटी हो, यह तुम्हारा अपना ही घर है। बेटी ने जब मुझे यह प्रसंग सुनाया तो साधुवाद देने के अतिरिक्त स्वामी जी के लिए मेरे पास कोई शब्द नहीं थे। मेरे भाग्य में यायावरी लिखी है, प्रकृति से भी घुमन्तु हूँ। आजीविका ने भी ऐसा ही अवसर दिया, दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, हिमाचल, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार और झारखण्ड, बस चरेवेती-चरेवेती। मैं अपने संघनिष्ठ परिवेश से जुड़ा रहना चाहता था, इसलिए कोई सम्पर्क सेतु बना रहे, यह आवश्यक था। मेरी धर्मपत्नी ने यह भूमिका निभाई, उनकी यह सक्रियता स्वामी जी की दृष्टि में आ गई, कुछ ऐसी कि उन्होंने सन् 2003 देहरादून महानगर मेयर के चुनाव में उन्हें भाजपा के प्रत्याशी बनाने के लिए अपनी संस्तुति इस प्रकार व्यक्त की कि उनकी वाणी सबकी वाणी बन गई और ऐसे प्रस्ताव को सभी की स्वीकृति मिल गई। स्वामी जी को इसका श्रेय भले ही न मिल पाया हो, किन्तु उनकी शुभेच्छा हमारे हृदय पटल पर सदैव अंकित रहेगी।

जिन परिस्थितियों में अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद का जन्म हुआ और परिषद ने जैसी गति पकड़ी, शायद उसमें से ही संघ को राजनीतिक दल बनाने की दिशा में सोचने का अवसर मिला होगा। एक छात्र कांग्रेस के विरोध में जो शून्य दिखाई दे रहा था, उसकी पूर्ति संघ जैसा राष्ट्रवादी व राष्ट्रव्यापी संगठन ही कर सकता था, किन्तु संघ तो सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के लिए समर्पित है, उससे विचलन नहीं हो सकता, तब इतना ही किया जा सकता था कि नए काम के लिए कुछ चुने हुए लोगों को राजनीति में भेजा जाए। स्वामी जी उन आरम्भिक लोगों में से एक थे, जिनको संघ व विद्यार्थी परिषद से जनसंघ में भेजा गया। स्वामी जी संघ के प्रचारक भी रहे अत: संघ की रीति-नीति से वे भली-भांति परिचित थे। वे जब उत्तरांचल के मुख्यमंत्री बने तो अपने उन संस्कारों को उन्होंने व्यवहार में उतारा व मुख्यमंत्री पद छोड़ने के बाद भी अपने इस स्वभाव को बनाये रखा। स्वामी जी जनता की नब्ज पहचानते थे, वे सही व गलत का भेद जानते थे। अपने इन गुणों के कारण वे नाम के ही नहीं, अपने समर्थकों के हृदयों के स्वामी भी बने रहे। जनसंघ के संस्थापक पं. दीनदयाल जी का मूल मंत्र एकात्म मानववाद था, स्वामी जी पं. दीनदयाल जी के अनन्य सहयोगी रहे व उन्हें उनके सानिध्य का अवसर भी मिला। उनका मत था कि नेतृत्व का समाज के साथ समरस हो जाना ही सच्ची राजनीति है, सेवक बन सरल, सहज और सामान्य रहकर जो सफलता का वरण करे, वास्तव में वही स्वामी है। स्वामी से सेवक बनने का उपक्रम ही सेवक को स्वामी बना देता है। स्वामी जी ने अपने कर्तृत्व से यह सिद्ध कर दिखाया।

हाशिये पर महिलायें

बेडियों का नाम सुनते ही सामान्यतः आमतौर पर लोहे की मोटे-मोटे, कड़ों का ध्यान आता हैं जो पैरों में पड़े होते हैं जिनके कारण व्यक्ति चलने फिरने में असमर्थ हो जाता है व जिन्हें तोड़ा नहीं जा सकता है। महिलाओं के पांवों में ऐसी अनेकों बेडियाँ हैं ये खाली असमर्थ ही नहीं बनाती बल्कि तन और मन को लहूलुहान रखती हैं। वह सिलसिला बालिका के जन्म से पहले ही शुरु हो जाता है। 29वीं सदी में भ्रूण हत्या जैसे जघन्य अपराध हो रहे हैं कई ऐसे समुदाय है जो बालिका को पैदा होते ही मार देते हैं। चाहे अफीम चखा कर, कहीं गला दबा कर, कहीं सिर पानी में डूबोकर यह क्रूरता सदियों से चली आ रही है। बालिकाओं को भरपेट खाना न देना, घरेलू व कड़े परिश्रम के कार्यों से चौबीसों घण्टे जोते रखना व शिक्षा से वंचित रखना, यह कई इलाकों में धड़ले से हो रहा है। बाल विवाह अब भी धूम-धाम से हो रहे हैं। कच्ची उम्र की बालिकायें माँ बन रही हैं। बालिकाओं के शारीरिक व मानसिक विकास को बाधित करने के ये नमूने भरे हैं। बालिकाओं व किशोरियों के साथ तो अनाचार के नित नये मामले अखबारों की सुर्खियाँ बन रही है। बलात्कार तो जैसे फैशन सा ही हो गया है। सारे कानून धरे के धरे हैं। दहेज प्रथा तो बड़ा कलंक है ही, छोटे-मोटे मामलों को लेकर बहुओं को प्रताड़ित किए जाने, जला कर मारने की घटनायें जैसी आम बात हो गई हैं।

पढ़ी-लिखी व कामकाजी महिलायें भी भयमुक्त नहीं है। भेड़ियों सी भूखी निगाहें हैं, जिनसे बच पाना सरल नहीं है। महिलाओं के साथ यह सब दुनियाँ के कोने-कोने में हो रहा है कहीं महिलाओं को घरों में कैद रहने का फरमान जारी होता है तो कहीं नाखून तक न दिखाई देने का हुक्म नामा, परदे में रहने का प्रतिबन्ध तो कई देशों व समुदायों में हैं। महिलाओं को लेकर फतवे देना आम बात हैं, चाहे पिछले वर्ष के गुड्डी प्रकरण लें, जिसमें सेना में सीमा पर गुम हुए पति की गैर मौजूदगी में जबरन दूसरा निकाह व उसके वापस लौटने पर गुड्डी व उसके दूसरे पति से उत्पन्न हुए बच्चे को लेकर कई तरह के फतवे। इमराना प्रकरण जिसमें ससुर के बलात्कार की शिकार महिला पति के लिए हराम व पति के साथ पुत्र जैसा नाता रखने का फतवा मिला। हद तो यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय खिलाड़ी सानिया मिर्जा की खेल की ड्रेस को लेकर भी फतवा जारी कर दिया गया। निशाने पर

महिलायें ही हैं। सूडान में तो बर्बरता है, जहाँ महिलाओं को शारीरिक सुख से वंचित रखने के लिए अंगों का आपरेशन तक किया जाता है। भारत में भी सती प्रथा यद्यपि बन्द हो चुकी है पर सती की महिमा मण्डित करना, विधवाओं का तिरस्कार, बाल विवाह यह सब अभी थमा नहीं है। महिलाओं को सामाजिक न्याय चाहिए, सुरक्षा चाहिए, आगे बढ़ने के समान अवसर चाहिए, गर्भ में आने के समय से ही कुटिल षड्यंत्रों से बचाव चाहिए, पर ऐसा हो नहीं रहा है। पुरूष प्रधान मानसिकता का महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण नहीं बदला। आगे बढ़ने के सार मार्ग अवरूद्ध किए हैं। पिछडी जातियों को आरक्षण प्राप्त है, अन्य पिछड़ी जातियों को भी आरक्षण मिला हैं। विकलांगों, स्वतंत्राता संग्राम सैनानियों, पूर्व सैनिकों व अल्पसंख्यकों सबके लिए आरक्षण है, परन्तु महिलाओं के लिए ऐसा कोई प्रावधान नहीं है। पंचायतों, ग्राम सभाओं व नगर परिषदों में जहाँ है भी, वहाँ सत्ता प्रधान पति या पार्षद पति के हाथों में है। तकनीकी चिकित्सा, प्रबन्धन जैसे उच्च शिक्षा क्षेत्रों व नौकरियों में कोई आरक्षण नहीं। महिलायें आगे बढ़े तो कैसे। स्वर्गीय राजीव गांधी महिलाओं व युवकों के लिए कुछ करना चाहते थे, उन्होंने लोकसभा व विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण की बात की थी, भाजपा ने भी महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का समर्थन किया था, भाजपा ने एक कदम आगे बढ़कर लोकसभा में इस ओर प्रस्ताव भी ला दिया था, परन्तु बाकी सब वर्गों के लिए आरक्षण के हिमायती लोगों द्वारा इसका जैसा तीखा विरोध किया गया यह समझ से परे है। अब हालत यह है कि महिला आरक्षण उपहास का विषय बन गया है, इसे लेकर कोई गम्भीर नहीं है। लोकसभा सत्रा से पहले इसे लेकर अब जो नाटक नौटंकी होती है उसका हश्र सभी को ज्ञात है। अब एक ही विकल्प बचा है कि अब महिलायें स्वयं संगठित होकर सामाजिक न्याय, सुरक्षा व समानता के लिए प्रभावी आंदोलन खड़ा करें। उत्तरांचल की महिलाओं का उदाहरण देश के सामने है जहाँ महिलाओं की प्रचण्ड शक्ति के बल पर अलग राज्य प्राप्त कर लिया गया।

द्वादश ज्योतिर्लिंग यात्रा

आत्मा त्वं गिरिजा मति, सहचरा प्राणा, शरीरं गृहं
पूजा ते विषयोपभोगरचना निंद्रा समाधिस्थितिः।
सञ्चचार प्रदयो, प्रदक्षिणविधि स्तोत्राणि सर्वा गिरो
यद्यत् कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भोतवा {{राधनम्।।

(हे शम्भो मेरी आत्मा आप स्वयं है, मेरी बुद्धि आपकी अर्धंगिनी पार्वती है, मेरे प्राण आपके सहचर गण हैं, मेरा शरीर आपका घर है, मेरे द्वारा किया गया विषयों का उपभोग आपकी पूजा है और नींद समाधि की स्थिति है। पैरों से जो मैं चलता हूँ, वह आपकी प्रदक्षिणा है, वाणी से निकलने वाले सभी शब्द आपके स्त्रोता हैं और मैं जो-जो कर्म करता हूँ, वे सारे आपकी आराधना है) - श्री शिवमानस पूजा ।।6।।

पूर्व जन्म के कोई कर्म होंगे या इस जन्म का भाग्य कि मुझे देश के कई सारे तीर्थ स्थानों पर जाने का अवसर मिला है। देश के चारों प्रमुख धामों, श्री बदरीनाथ, श्री जगन्नाथपुरी, श्री रामेश्वरम् और श्री द्वारिकापुरी के साथ ही चारों कुम्भ क्षेत्रों, हरिद्वार, प्रयाग, नासिक व उज्जैन के साथ ही असम में कामाख्या, बंगाल में तारापीठ, बिहार में राजराजेश्वरी, झारखण्ड में छिन्नमस्ता, उत्तर प्रदेश में विन्ध्यवासिनी, जम्मू में वैष्णोदेवी, तमिलनाडु में मीनाक्षी व कर्नाटक में चामुण्डेश्वरी जैसी बड़ी शक्ति पीठों और पशुपतिनाथ (नेपाल) तथा पुष्कर जैसे बड़े तीर्थो, भगवान राम से जुड़े सभी प्रमुख स्थलों, भगवान बुद्ध के सम्पूर्ण परिपथ और जैन व सिख सम्प्रदाय के बड़े श्रद्धा केन्द्रों सहित अनेक स्थानों के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ। कुछ चर्चित मुस्लिम व ईसाई आस्था प्रतिष्ठानों में जाने का भी अवसर मिला।

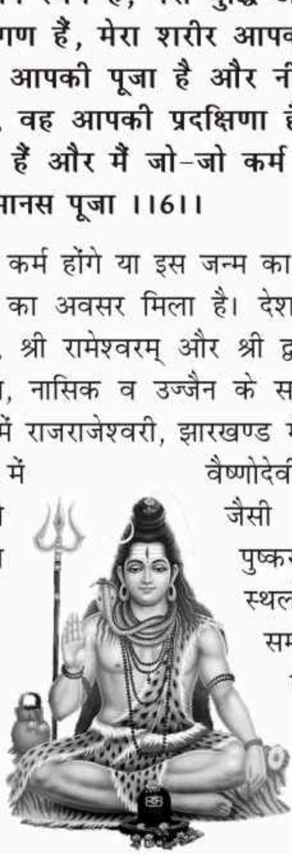

धार्म-कर्म, पूजा-पाठ व तीर्थ-व्रत आदि वैयक्तिक आस्था का विषय है। वैसे भी समाज में व्यक्तिगत योजनाओं पर सामान्यत: अधिक चर्चा करने का प्रचलन नहीं है किन्तु 'गगरी' में इस विषय में जानकारी आने पर कुछ शुभेच्छुओं द्वारा इस यात्रा का वृतांत देने का आग्रह किया गया है। वृतांत में ऐसा कुछ नहीं है जिसे विशेष रूप से रेखांकित किया जा सके। ज्योतिर्लिंगों के दर्शन के विषय में कुछ विवरण पहले भी आ चुका है अत: कहने के लिए कुछ

खाास नहीं है फिर भी इस ओर हुए आग्रह को आदेश मानते हुए यत्किंचित प्रयास किया जा रहा है। प्रासंगिक होने के कारण सभी ज्योतिर्लिंगों का संक्षिप्त विवरण व कथा आदि भी इस वृतांत के साथ में है। यह उसी कम में दिया गया है जिस क्रम में इनकी यात्रायें की गई हैं।

बचपन में पिता के मुख से भगवान शिव से सम्बन्धित कई सारे श्लोक सुनने को मिलते थे, वे अक्सर गुनगुनाते रहते -

''सानन्दमानन्दवनेवसन्तं आनन्द कन्दं हतपापवृन्दम्
वाराणसी नाथमनाथनाथं श्री विश्वनाथं शरणं प्रपद्ये।।''

(स्वयं आनन्दकन्दरूप, पाप समूहों के विनाशक, अनाथों के नाथ, ऐसे आनन्दवन (काशी) के स्वामी श्री विश्वनाथ की मैं शरण में हूँ।)

पिता के मुख से ही द्वादश ज्योतिर्लिंगों के विषय में जानकारी मिली, वे निम्नलिखित श्लोक में इनका नाम प्रातः-सायं की संध्या-पूजा में लेते थे।

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकाजुर्ननम,
उज्जयिन्यां तु महाकालशकरममलेश्वर।
परल्यां वैद्यनाथं च डाकिन्यां भीमशंकर,
श्वेतबंधे तु रामेशं नागेशं दारुकावने।।
वाराणस्यां तु विश्वेशं त्रयम्बकं गौतमीतटे
हिमालये तु केदारं घुश्मेशं व शिवालये।।
एतानि ज्योतिर्लिंगानि प्रातः सायं पठेन्नर
सप्त जन्मार्जितं पापं स्मरणेन विनश्यति।।

बारह ज्योतिर्लिंगों के ये नाम बचपन में अनायास ही कान में पड़ जाते, लेकिन कभी ऐसा प्रसंग नहीं आया कि इनका दर्शन करने इन स्थानों पर जाना चाहिए, अतः इस ओर कोई योजना नहीं बनीं। निकट परिचय में कभी किसी ने सभी बारह ज्योतिर्लिंगो के दर्शन किये हों, ऐसी जानकारी भी नहीं मिली। 1973-74 में अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद की उत्तर-प्रदेश कार्यकारिणी का सदस्य होने के नाते बैठक हेतु वाराणसी जाने पर वहाँ श्री काशी विश्वनाथ के दर्शन का सौभाग्य मिला। काशी विश्वनाथ उत्तर प्रदेश के प्रसिद्ध वाराणसी नगर में है। प्राचीनकाल में वारूणी और असी नामक नदियाँ जहाँ गंगाजी में मिलती थी, उसका नाम वाराणसी पड़ा, इसे काशी भी कहा जाता है।

ऐसा कहा जाता है कि शिवजी ने तप हेतु स्वयं स्वर्ग में पंचकोशी नगर का निर्माण किया तथा विष्णु के तप से वहाँ जलधारायें प्रकट हुई। शिवजी ने स्वयं

सोमनाथ

वहाँ अपना ज्योतिर्लिंग स्थापित किया और तप के उपरान्त अपने त्रिशूल पर उतार कर इस नगर को पृथ्वी पर स्थापित किया। शास्त्रों में वर्णन है कि कहीं भी गति न पाने

महाकालेश्वर

वाले को काशी में गति मिलती है। काशी के विषय में अनेक कथायें प्रचलित हैं, इसका संरक्षण दण्डपाणि और कालभैरव करते हैं और इसका वैभव वेदकाल से ही चला आ रहा है। मुस्लिम आक्रांताओं व शासकों के हाथों सन् 1033 से 1669 तक काशी का कई बार विध्वंस हुआ। अहिल्याबाई होल्कर, काशी नरेश, बाजीराव पेशवा, महाराजा रणजीत सिंह, नेपाल नरेश और अन्यान्य राजघरानों ने समय-समय पर काशीविश्वेश्वर मन्दिर का पुनर्निर्माण कराया। वाराणसी के लिए देश के अधिकांश भागों से सीधी रेल सेवा है। यह सड़क मार्ग से भी प्रमुख नगरों से जुड़ा है तथा यहाँ के लिए हवाई सेवा भी उपलब्ध है। शास्त्रों में काशी का वर्णन इस प्रकार किया गया है-

मल्लिकार्जुन

विश्वेशं माधवं धुंडि, दण्डपाणिं च भैरवं।
वंदे काशीं गुहागंगां भवानी मणिकार्णिकाम्।।

ओमकारेश्वर

बैंक सेवा में रहते हुए 1992 में अवकाश यात्रा सुविधा के उपभोग करते समय उज्जैन में श्री महाकालेश्वर का दर्शन लाभ मिला। क्षिप्रा नदी के किनारे उज्जैन में श्री महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग अवस्थित है। महाकाल के विषय में अनेक कथायें प्रचलित हैं, एक यह है कि अतिदुष्ट दैत्य दूषण ने अवन्तिका नगरी में वैदिक धर्मानुष्ठान न होने देने का आदेश दिया और ब्राह्मणों को प्रताड़ित करने लगा, तब ब्राह्मणों ने शिव की पूजा की। दैत्य द्वारा आक्रमण किये जाने पर भीषण शब्द के साथ धरती फटी और उसमें गड्ढ़ा हो गया जिसमें से शिवजी प्रकट हुए व अपनी

वैद्यनाथ

भीमशंकर

हुंकार से दैत्य को भस्म कर दिया। उज्जैन विषुवत् रेखा पर स्थित है और कालगणना के संदर्भ में महत्वपूर्ण केन्द्र माना जाता है। यहाँ बारह वर्षों में एक बार कुम्भ का आयोजन भी होता है। यह रेलमार्ग से सीधे जुड़ा हुआ है और इन्दौर, देवास व रतलाम आदि नगरों से सड़क मार्ग भी उपलब्ध है।

बैंक की अवकाश यात्रा सुविधा से ही 1996 में तमिलनाडु में श्री रामेश्वरम् के दर्शन हुए। सीता की खोज में भगवान राम जब दक्षिण पहुँचे और लंका जाने की योजना बनाई तो समुद्र पर सेतु निर्माण के लिए उन्होंने शिवजी की स्तुति की और लिंग स्थापित किया जो ज्योतिर्लिंग के रूप में पूजा जाता है। रामेश्वरम तमिलनाडु के रामनाथपुरम जिले में समुद्र के किनारे स्थित है। यह रेलमार्ग तथा मदुराई व शिवगंगा आदि नगरों से सड़क मार्ग से भी जुड़ा है।

रामेश्वरम

वर्ष 1998 में मेरी बड़ी पुत्री का विवाह हुआ। बेटी की ससुराल में प्रात: सायं की प्रार्थना में द्वादश ज्योतिर्लिंग श्लोक का पाठ होता है। धीरे-धीरे इसका प्रभाव हमारे परिवार में भी आया और यहाँ भी इस श्लोक का पाठ होने लगा। वर्ष 2000 में लक्षमोली बागवान (टिहरी गढ़वाल) के एक आश्रम में द्वादश ज्योतिर्लिंगों की प्रतिकृति के दर्शन हुए और तब पहली बार मन में आया कि प्रतिकृति के स्थान पर क्या वास्तविक ज्योतिर्लिंगों की यात्रा भी की जा सकती है, लेकिन कोई योजना तब भी नहीं बनी।

नागेश्वर

इसी वर्ष, कुछ ही दिनों बाद, बैंक के निरीक्षण व लेखा परीक्षा (Inspection & Audit) विभाग में जाने पर दोबारा श्री काशी विश्वनाथ के दर्शन का सुयोग बना और अगले वर्ष श्री मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग के दर्शन भी हो गये। मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग आंध्र प्रदेश में श्री शैलम पर्वत पर स्थित है। इस ज्योतिर्लिंग के विषय में प्रचलित कथाओं में से एक के अनुसार वन में तप करती एक कन्या ने देखा कि एक कपिला गाय विल्व वृक्ष के नीचे अपने चारों स्तनों से नित्य दूध गिराती थी। खनन करने पर उस स्थान के नीचे एक

काशी विश्वनाथ

प्रकाशमान शिवलिंग दिखाई दिया जिसमें से ज्वालायें निकल रही थीं। यह शिवलिंग शिव-पार्वती ने अपने ज्येष्ठ पुत्र कार्तिकेय को मनाने के क्रम में स्थापित किया था। दक्षिण में इस ज्योतिर्लिंग की बहुत अधिक मान्यता है। आंध्र में ही ओंगोल के पास श्री कालहस्ति नाम का अतिप्रसिद्ध शिव तीर्थ भी है, इसकी मान्यता मल्लिकार्जुन के समान ही है। श्री शैलम का निकटवर्ती रेलवे स्टेशन कुरनूल है, यह हैदराबाद, महबूबनगर व ओंगोल आदि नगरोंस े स ड. क मार्ग से जुड़ा है।

त्रियम्बकेश्वर

मल्लिकार्जुन दर्शन के अगले वर्ष देवघर (झारखंड) में श्री वैद्यनाथ धाम जाने का सुअवसर आया और दर्शन का लाभ मिला। श्री वैद्यनाथ धाम के विषय कई धारणायें प्रचलित हैं। महाराष्ट्र के परली (बीड जिला) में वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग माना जाता है जबकि उत्तर में बैजनाथ (हिमाचल प्रदेश), बैजनाथ (अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड) तथा देवघर (झारखंड) के विषय में भी ऐसी मान्यता है। इनमें से देवघर की श्री वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के रूप में बहुत अधिक मान्यता है। इस सम्बन्ध में ऐसी कथा प्रचलित है कि रावण की भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान शिव ने उसे एक कलश प्रदान किया, साथ में यह निर्देश भी दिया कि इसे भूमि पर न रखे। शौच की शंका होने पर रावण ने कलश देवघर में भूमि पर रख दिया, जिससे वहीं स्थापित होकर वह ज्योतिर्लिंग बन गया। देवघर का निकटवर्ती रेलवे स्टेशन जसीडीह है तथा सड़क मार्ग से यह बांका, दुमका व गिरिडीह आदि नगरों से जुड़ा है। महाराष्ट्र में परली वैद्यनाथ का वृतांत जानकर वहाँ जाने की इच्छा भी मन में आई है, ईश्वर की इच्छा हुई तो इस यात्रा का भी योग बन जायेगा।

केदारनाथ

पाँच ज्योतिर्लिंगों के दर्शन के बाद सभी ज्योतिर्लिंगों के दर्शन की इच्छा बलवती हो गई और बैंक की अवकाश यात्रा सुविधा से ही अगले वर्ष गुजरात के सौराष्ट्र में श्री सोमनाथ और द्वारका में श्री नागेश्वर की यात्रा का सौभाग्य मिला। नागेश्वर ज्योतिर्लिंग के विषय में भी कई धारणायें प्रचलित हैं, महाराष्ट्र में यह मान्यता औंध नागनाथ के पक्ष में है तो जागेश्वर (अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड) में वहाँ ज्योतिर्लिंग माना जाता है, लेकिन अधिकांश मान्यता द्वाराका को लेकर ही है। द्वारका

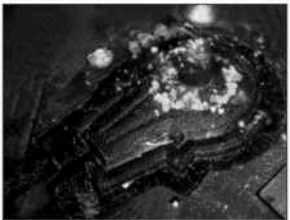

घुष्मेश्वरम

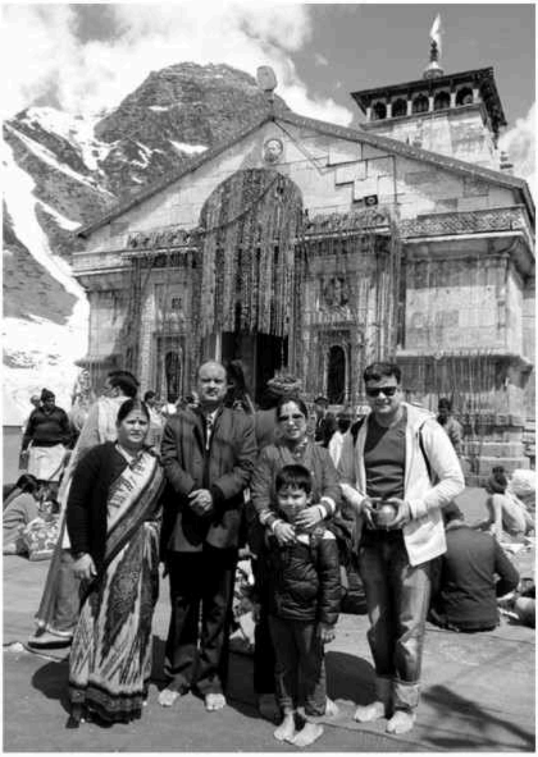

गुजरात में समुद्र के किनारे पश्चिमी तट पर है, नागेश्वर ज्योतिर्लिंग द्वारका और बेट द्वारका के बीच पड़ता है। इसके विषय में कथा प्रचलित है कि पाण्डवों ने अमर्दक झील के किनारे आश्रम बनाया हुआ था। झील में पानी पीने आयीं उनकी गायें वहाँ चारों स्तनों से दूध अर्पित करने लगी। रहस्य जानने के लिए पानी हटाने पर वहाँ बीच में खौलता जल मिला, भीम के जल पर गदा प्रहार करते ही उसमें से रक्तधारायें निकलने लगी और फिर ज्योतिर्लिंग प्रकट हो गया। इसके अतिरिक्त भी कुछ कथायें प्रचलित हैं। श्री नागेश्वर ज्योतिर्लिंग का निकटवर्ती रेलवे स्टेशन 'ओखा' है तथा यह जामनगर व जूनागढ़ आदि बड़े शहरों से सड़क से भी जुड़ा है। निकटवर्ती द्वारका हिन्दुओं के प्रसिद्ध चारों धामों में से एक है। महाराष्ट्र में औंध नागनाथ के ज्योतिर्लिंग होने के वृतान्त से वहाँ जाने की इच्छा भी मन में जगी है, परली की यात्रा के साथ ईश्वर इसका भी योग बनायेगा ही।

द्वादश ज्योतिर्लिंगो में सबसे पहले श्री सोमनाथ का नाम आता है। सोमनाथ ज्योतिर्लिंग गुजरात के सौराष्ट्र में समुद्र के किनारे स्थित है। सोमनाथ मन्दिर की ख्याति है कि इसमें दो सौ मन का सोने को घंटा था और हीरे, मणिक आदि रत्नों से जड़े 56 स्तम्भ थे। भंडार गृह में अगणित कोषादि द्रव्य थे और नित्यप्रति कन्नौज से इत्रा, कश्मीर से पुष्प, हरिद्वार, काशी व प्रयाग से गंगाजल पूजन के लिए आते थे। पूजा के लिए एक हजार ब्राह्मण व नृत्य-गायन के लिए 350 नृत्यांगनायें भी थीं। इसे चलाने के दस हजार गाँवों का उत्पाद कर के रूप में मिलता था। सोमनाथ के विषय में एक कथा यह भी है कि दक्ष की 27 पुत्रियों से विवाह के उपरान्त केवल रोहिणी में ही आसक्ति के कारण ब्रह्मा से चन्द्रमा को क्षय होने शाप मिला। इससे मुक्ति हेतु शिव पूजा करने पर उसे एक पक्ष में एक-एक कला क्षय

कस्बे में पहुँचा। यह औरंगाबाद से लगभग 28-30 किमी की दूरी पर है। घृष्णेश्वर को घृष्णेश्वर व घृष्णेश्वर भी कहते हैं। उस समय मंदिर में आरती की तैयारी चल रही थी, इसलिए दर्शन के लिए प्रतीक्षा करनी थी, इससे आरती में सम्मिलित होने का भी सौभाग्य मिल गया। आरती के बाद ज्योतिर्लिंग के दर्शन हो गये। घृष्णेश्वर के विषय में प्रचलित एक कथा के अनुसार ऋषि-मुनियों के आश्रम में संरक्षित पशुओं का शिकार करने पर मिले शाप के कारण एक राजा के शरीर में कीड़े पड़ गये। अतिकष्ट से व्याकुल हो, पानी की खोज में उसने गाय के खुर से बना एक गड्ढा देखा जिसमें थोड़ा पानी था। इसे पीते ही उसका शरीर कीड़ों से मुक्त हो गया। राजा ने वहाँ तपस्या की, ब्रह्मदेव प्रसन्न हुए और वहाँ सरोवर बन गया जो शिवालय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। मन्दिर पत्थरों से बना और अति प्राचीन है। आरती से पूर्व लिंग का दुग्धाभिषेक भी हुआ, यह दृश्य मन को मोहित कर देने वाला था। मन्दिर में पुरुषों को ऊपर के वस्त्र ले जाने की अनुमति नहीं है।

रात्रि में लौटते बहुत रात हो गई थी, लगभग 11.00 बजे औरंगाबाद में पहले से आरक्षित किये गये स्थान पर जाना व्यवहारिक नहीं था, क्योंकि अगले दिन प्रात: 6.00 बजे फिर ट्रेन पकड़नी थी अत: स्टेशन के पास ही एक होटल में टिका। औरंगाबाद एक पर्यटक नगर है, इसके पास ही अजन्ता व एलोरा की प्रसिद्ध गुफायें और अन्य दर्शनीय स्थान हैं। इन स्थानों को देखने का लोभ कम नहीं था लेकिन इसे छोड़ अगली प्रात: पूर्व निर्धारित ट्रेन पकड़नी पड़ी। यह समय पर थी और प्रात: लगभग 9.00 बजे नासिक पहुँच गया। यहाँ बारह वर्षों में एक बार कुम्भ का आयोजन होने से यह एक बड़ा पर्यटक केन्द्र है।

पूर्व निर्धारित होटल में स्नानादि के उपरान्त बस से त्रयम्बकेश्वर पहुँच गया। यह बहुत सुन्दर स्थान है और मन्दिर में दर्शनों की व्यवस्था बहुत अच्छी है। थैला, कैमरा व मोबाइल आदि मंदिर में नहीं ले जा सकते, बाहर बाजार में लॉकर उपलब्ध हैं, उनमें जमा करने की सुविधा है। मन्दिर बहुत भव्य व प्राचीन है, पत्थरों से निर्मित, इनमें स्तम्भों पर हाथियों की मुखाकृति है, मन्दिर का प्रांगण बहुत विशाल है। लम्बी पंक्ति में लगभग तीन घंटे चलने के बाद ज्योर्तिलिंग के दर्शनों का सौभाग्य मिला। मंदिर के अन्दर भव्यता है, लिंग के दर्शन होते ही आगे बढ़ना पड़ता है लेकिन सामने हाल में बैठ सकते हैं। वहाँ से शीशे में ज्योतिर्लिंग के स्पष्ट दर्शन होते हैं। मन्दिर में एक दूसरे से जुड़े त्रिमूर्ति जैसे तीन लिंग हैं। मंदिर का पूरा वातावरण हृदयस्पर्शी है। त्रयम्बकेश्वर के विषय में यह कथा प्रचलित है कि गौतम ऋषि से ईर्ष्या रखने वाले कुछ ऋषियों ने षडयंत्राकर उन्हें गौहत्या का पापी ठहरा दिया था। इस पाप से मुक्ति के लिए किये गये तप से प्रसन्न हो गौतम ऋषि के मांगने पर शिवजी ने गंगा का तत्वरूप अविशिष्ट जल उन्हें गौहत्या से पाप मुक्त

करने के लिए दिया। ऋषि को पवित्र करने के उपरान्त गंगा के वापिस जाते समय ऋषि के आग्रह पर शिवजी ने गंगा को वहीं रुकने का आदेश दिया। गंगा ने प्रार्थना की कि शिव भी शक्ति के साथ वहीं निवास करें। इस पर शिव वहीं ज्योतिर्लिंग के रूप में स्थापित हो गये।

अगले दिन प्रात: 5:30 बजे आगे की ट्रेन पकड़नी थी, स्टेशन से काफी दूर होने के चलते प्रात: चार बजे ही होटल छोड़ देना। ट्रेन समय पर थी और इसने दोपहर लगभग 12:30 बजे पुणे पहुँचा दिया। यहाँ भी सीधे श्री भीमाशंकर ज्योतिर्लिंग के लिए निकलना पड़ा। श्री भीमाशंकर के विषय में कहा जाता है कि तीनों लोकों को त्रास्त करने वाले त्रिपुरासुर नाम राक्षस का वध करने के बाद भगवान शिव ने विशालकाय भीमरूप धारण कर उससे युद्ध किया और उसे मार गिराया। युद्ध से हुई थकान के कारण सह्याद्रि पर्वत पर विश्राम करते समय शिवजी के शरीर से पसीने की सहस्त्रों धारायें निकली और एक प्रवाह बन कुण्ड में जमा हो गयीं, इससे भीमा नाम की नदी निकली। भक्तों की प्रार्थना पर भगवान शिव वहाँ ज्योतिर्लिंग के रूप में बस गये। पुणे से श्री भीमाशंकर के लिए सीधी बस सेवा उपलब्ध है जो 125-130 किमी की दूरी पर है (पुणे नासिक रोड पर, आधी दूरी पर मंजर नाम का स्थान पड़ता है, वहाँ से सड़क कटती है) और लगभग चार घंटे लगते हैं, वहाँ सायं 5.00 बजे पहुँचना हुआ। भीमा शंकर सह्याद्रि पर्वत पर स्थित है और मन्दिर तक सीढ़ियाँ उतर कर काफी दूर नीचे जाना पड़ता है। भीमा शंकर से अन्तिम बस 6.00 बजे सांय निकलती है और उसके बाद न तो जाने का कोई साधन है और न ही ठहरने की उचित व्यवस्था। आस-पास बेहद घना जंगल भी है। तेजी से सीढ़ियाँ उतर कर मन्दिर पहुँचा, मन्दिर अति भव्य व प्राचीन है, पत्थरों से बना और सुन्दर दालान। बहुत सुविधा से ज्योतिर्लिंग के दर्शन हो गये, वहाँ अतीव तृप्ति की अनुभूति हुई। दर्शनों के उपरान्त वापसी के लिए अन्तिम बस भी मिल गई और रात्रि लगभग 10.30 बजे पुणे आना हुआ, जहाँ ठहरने की व्यवस्था पहले से निश्चित थी।

देवस्थानों में जाते समय मन में यह इच्छा स्वाभाविक रूप से रहती है कि दर्शनों से पूर्व अन्न ग्रहण न किया जाये। सौभाग्य से यात्रा में इस नियम का पालन सरलता से हो गया। देर रात के दर्शनों में भी भोजन आदि का विचार ही मन में नहीं आया। तीन चार वर्ष पूर्व एक प्रसंग में पांच-छ: दिनों का जो उपवास मैंने किया था, उसका अनुभव भी साथ में था ही। कुल मिलाकर यात्रा आनन्ददायक और मन को पुलकित कर देने वाली रही। इस यात्रा के अन्तिम चरण में मैसूर भी जाना हुआ, जहाँ बड़ी बेटी वायु सेना में अधिकारी अपने पति व दो बच्चों के साथ रह रही है। वहाँ निकट की पहाड़ी पर भगवान शिव के वाहन नन्दीश्वर और

महाशक्ति चामुण्डेश्वरी के दर्शनों का लाभ भी मिला। गृह नगर के लिए वापसी में मथुरा में श्रीकृष्ण जन्मभूमि और वृन्दावन में श्री बांके बिहारी के दर्शनों का सौभाग्य भी इस यात्रा के दौरान मिला।

इस बार की यात्रा के साथ द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से अब तक ग्यारह के दर्शन हो चुके हैं। श्री केदारेश्वर के दर्शन भी शीघ्र ही प्रस्तावित हैं। श्री केदारनाथ के विषय में अनेक कथायें प्रचलित हैं, उनमें से प्रमुख यह है कि नर-नारायण जब बदरिकाश्रम जाकर पूजा करने लगे तो वहाँ पार्थिव शिव प्रकट हो गये। शिवजी द्वारा वर मांगने के लिए कहने पर नर-नारायण ने उनसे लोक कल्याण के लिए सदैव अपने पास रहने की प्रार्थना की। उनकी प्रार्थना स्वीकार कर साक्षात् महेश्वर भगवान शिव केदार पर्वत पर ज्योतिर्लिंग के रूप में विराजमान हो गये। कहा जाता है कि पाण्डवों ने यहीं से स्वर्गारोहण किया था। श्री केदारनाथ की यात्रा द्वादश ज्यातिर्लिंगों में से सबसे कठिन है। हरिद्वार, ऋषिकेश अथवा यमुनोत्री-गंगोत्री से पहाड़ी सड़कों पर बस अथवा टैक्सी आदि के द्वारा लम्बी सड़क यात्रा करने के उपरान्त रुद्रप्रयाग जिले के गौरीकुण्ड नामक स्थान से दुर्गम पहाड़ी मार्ग पर पैदल चढ़ना पड़ता है। गौरीकुण्ड से केदारनाथ तक की यात्रा के लिए घोड़े खच्चर भी मिल जाते हैं और अब हेलीकॉप्टर सेवा का विकल्प भी उपलब्ध है।

हमारे समाज में प्राचीन परम्परा है कि यात्रा के उपरान्त प्रसाद आदि गाँव, पड़ोस व इष्ट-मित्रों तक पहुँचाया जाता है और उन्हें कथा-वार्ता आदि के द्वारा श्रवण लाभ भी कराया जाता है। श्रवण भी अष्ठविध भक्ति का ही एक रूप है। नये युग में पठन-पाठन भी श्रवण का ही एक अन्य प्रकारान्तर है। तीर्थों के श्रवण का भी अपना महत्व है। द्वादश ज्योतिर्लिंगों का यत्किंचित वर्णन और यात्राा वृतांत देने के लिए पीछे यह परम्परा भी एक कारण के रूप में मन में थी, 'गगरी' के स्नेही पाठकों का आग्रह मानना भी आवश्यक था ही।

अतीत पन्थानं तब च महिमा वाङ्मनसयो
रतद्व्यावृत्त्या यं चकितममधत्ते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोस्तव्य: कतिविधगुण कस्य विषय:
पदेत्वर्वाचीने पतति न मन: कस्य न वच:।।

(हे शिव आपकी महिमा तो मन एवं वाणी से परे है। आपके निर्गुण रूप से तो वेद आदि भी नेति-नेति कहकर चकित होते हैं। ऐसे आपकी स्तुति भला कौन कर सकता है, अंतहीन में से कितने प्रकार के गुणों और किस विषय की स्तुति हो, लेकिन आपके साकार रूप में किसका मन और वाणी निमग्न नहीं होती।)

- श्री शिवमहिम्न स्तोत्र ।।2।।

ज्योतिष की वैज्ञानिकता

पिछले तीस वर्षो से जैविक खेती के विकास में लगे न्यूजीलैण्ड जैसे विकसित देश के कृषि वैज्ञानिक पीटर प्रॉक्टर ने पाया है कि अच्छी फसल के लिए ग्रह-नक्षत्रों की चाल का भी ध्यान रखना चाहिए। वे टमाटर का बीज लगाने के लिए शनि के प्रभाव और चन्द्रमा की पूर्ण कला (पूर्णिमा) की प्रतीक्षा करते हैं, इसलिए कि ऐसे समय लगाये टमाटर में कभी रोग नहीं लगते।

उपरोक्त कथन से समझा जा सकता है कि ग्रह-नक्षत्र हमारी धरती एवं उस पर हो रहे कार्यकलापों पर कितनी गहराई से प्रभाव डालते हैं। पूर्णिमा व अमावस्या, दिन व रात तथा इनके छोटे-बड़े होने का हमारे जीवन पर क्या और कैसा प्रभाव पड़ता है, यह सर्वज्ञात विषय है। दिन व रात होना बहुत सामान्य बात है, जो पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने से होता है, इसी प्रकार दिन व रात का छोटा बड़ा होना, पृथ्वी के सूर्य की परिक्रमा करने के कारण होता है। पूर्णिमा की रात उजली और अमावस्या को अंधेरी होती है जो चन्द्रमा के पृथ्वी की परिक्रमा करने के चलते होता है। सूर्य, चन्द्रमा व पृथ्वी मूलत: ग्रह ही हैं, स्पष्ट है कि उपरोक्त परिणाम इन ग्रहों की गति व स्थिति के प्रभाव से ही होता है। इन ग्रहों की गणना कर सूर्योदय व सूर्यास्त तथा मौसम आदि की सटीक भविष्यवाणी की जाती है। प्रभाव वाली यह बात हमारे सौर मण्डल के अन्य ग्रहों पर भी लागू होती है। ग्रहों की भांति नक्षत्र भी हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है। अन्तरिक्ष में दिखने वाले प्रमुख तारों को समूहों में रख कर इन्हें नक्षत्रों में बांटा गया है, तारों से बनने वाली आकृति इनकी पहचान होती हैं। प्रत्येक ग्रह का अपना परिक्रमा पथ होता है, इस पथ का निर्धारण सूर्य से बनने वाले कोण (अंश) तथा सूर्य से ग्रह की दूरी के अनुसार होता है। इस पर भ्रमण करते समय ग्रह किस नक्षत्र के क्षेत्र में होते हैं, इसके आधार पर उनकी स्थिति ज्ञात की जाती है। ज्योतिष मूलत: सूर्यादि ग्रहों के भ्रमण, उनकी गति एवं स्थिति का हमारी पृथ्वी का प्रभाव का बोध कराने वाला विषय है। जिसका विस्तार अनन्त हो सकता है किन्तु संक्षिप्त में कहें तो यही ज्योतिष का गणितीय पक्ष है।

प्रत्येक ग्रह का अपना चरित्र व स्वभव होता है जिसका हम पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए सूर्य तीव्र ऊष्मा का ग्रह है जिसमें अनन्त ऊर्जा है, यह जितना पास अथवा दूर होगा, उसी अनुपात में उष्मा देगा। गति व स्थिति की गणना से यह जानना सम्भव है कि कब अधिक गर्मी पड़ेगी और कब सबसे कम। इसी प्रकार चन्द्रमा शीतल ग्रह है जो प्रकाश तो देता है किन्तु ऊष्मा नहीं देता, गणना से

बताया जा सकता है कि कौन सी रात्रि प्रकाशित होगी और कौन सी अंधकारमय। ग्रहों का यह वाह्य प्रभाव हमारे व्यवहार को भी संचालित करता है, अधिक गर्मी में स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है और इसमें कमी आने पर प्रफुल्लित। हमारे व्यवहार के साथ हमारी गतिविधियाँ भी इस प्रभाव के दायरे में आ जाती हैं। ग्रहों की गणना से ज्ञात हो जायेगा कि किसी ग्रह की कौन सी स्थिति का हम पर कैसा असर पड़ने वाला है। प्रभाव का यह आंकलन ही फलित ज्योतिष का प्रथम आयाम है।

ज्योतिष सामान्यत: सौर मण्डल के ग्रहों, की गति, स्थिति एवं प्रभाव का शास्त्र है। प्रचलित अर्थ में ज्योतिष को भविष्य कथन का विषय माना जाता है, यह विश्वभर में अनेक रूपों में प्रचलित है। भविष्य जानने की जिज्ञासा सभी में होती है अत: यह काफी लोकप्रिय विषय है और कई लोगों की आजीविका का भी माध्यम बन गया है। भविष्य विषयक कथन के लिए कई तरीके अपनाये जाते हैं, ग्रह गणना के अतिरिक्त हस्तरेखा, स्वप्न ज्योतिष, शकुन विचार, अंक ज्योतिष, टेरो पद्धति और पशु वर्ष आधारित चीनी तिब्बती पद्धति सहित अनेकों पद्धतियाँ प्रचलन में हैं और लाखों करोड़ों लोग इन पर विश्वास करते हैं।

भारत में ज्योतिष का इतिहास बहुत पुराना है ज्योतिष को पाँचवाँ वेद भी कहा जाता है, ऋग्वेद संहित में द्वादश चक्र की चर्चा है। ऋग्वेद और शतपथ ब्रह्मण आदि ग्रंथों से ज्ञात होता है कि अब से 28000 वर्ष पूर्व भारतीयों ने खगोल और ज्योतिष शास्त का मंथन किया था। पंचागों में आज भी पूर्णमासी, संक्रांति व चन्द्रसूर्य ग्रहणों की गणना प्राचीन पद्धतियों से होती है जो आज भी एकदम सटीक मानी जाती है। ध्यान देने योग्य बात है कि पश्चिमी देशों में सौर मास का चलन होता है और मध्यपूर्व के मुस्लिम देशों में चन्द्रमास को माना जाता है जबकि भारतीय पद्धति में दोनों को अपनाया गया है।

मध्य हिमालय के गढ़वाल कुमाऊं में तो ज्योतिष जनजीवन में रची बसी है। यह इतने सरल रीति से हुआ है कि पुराने ज्योतिषी उंगलियों पर गणना करके ही कुण्डली बना देते थे। पुराने जमाने में, जब घड़ियाँ नहीं होती थीं, ज्योतिषी लोग समय की गणना ठीक ठीक कर लेते थे। हम अपने बचपन में देखते थे कि हथेली को नाक के सामने ले जाकर कैसे वे लोग श्वास का वेग देखते थे, लगभग दो घंटे की लग्न की अवधि में, पहले भाग में दायीं नासिका का वेग तेज होता है जबकि दूसरे भाग में बायीं का, लग्न सन्धि की स्थिति वास्तविक लग्न तय करने में यह तरीका बहुत कारगर होता था। लग्न का महत्व इस बात से जाना जा सकता है- नाक चलने (श्वास) की प्रक्रिया इससे जुड़ी है। दिन में परछाई की दिशा व लम्बाई

देख कर तथा रात्रि में चन्द्रमा एवं तारों की स्थिति से समय का सटीक आंकलन कर लेते थे। घरों में प्रत्येक संक्रान्ति को रोट (पकवान) बनाकर देवता को चढ़ाये जाते थे। इससे सामान्य जन को भी माह तथा ऋतु का ध्यान रहता था। दिशाशूल का प्रावधान, लोक मान्यतायें यथा मंगलवार के मिलन व शनिवार के विछोह की सावधानी तथा साप्ताहिक व्रत रखना आदि वार को ध्यान में रखने की व्यवस्थायें थीं। पूर्णमासी को व्रत-कथा, अमावस्या को दान-पुण्य तथा एकादशी व प्रदोष आदि पर व्रत-तीर्थ जैसी व्यवस्थायें तिथियों को स्मरण रखने के तरीके भी थे। नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, भूमि पूजन, गृहप्रवेश तथा विवाह आदि विभिन्न संस्कारों एवं कार्यों के लिए मुहूर्त निकालने में ग्रह, नक्षत्र तथा राशि का विचार होता था, अतः ज्योतिषियों के साथ ही आम लोगों को इनका ध्यान रहना भी अपेक्षित होता था। भारतीय पद्धति में तो ज्योतिष को जनजीवन से जोड़ा ही गया है, गढ़वाल तथा कुमाऊं में तो जीवन की दैनिक गतिविधियाँ तक इसके अधीन रखी गयी हैं। यह विश्वास ज्योतिष की वैज्ञानिकता तथा प्रामाणिकता के कारण है।

हमारी पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा 365 दिनों में पूर्ण करती है और इसे बारह महीने में विभक्त करने पर प्रत्येक माह 30 दिनों से कुछ ऊपर का बैठता जबकि चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा महज 27.25 दिनों में पूरी कर लेता है। इस अन्तर में सामंजस्य बैठाने के लिए मलिमास व अधिमास की ऐसी विधि अपनाई गई है कि वर्ष की गणना में अन्तर नहीं आता। भारतीय पद्धति का यह दूरदर्शी व वैज्ञानिक दृष्टिकोण उसे विशिष्ट बनाता है। उदाहरण के लिए नक्षत्र की गणना का सामान्य नियम यह है कि बारह चन्द्र मासों की पूर्णिमा के दिन सामान्यः उनके नाम अथवा आगे-पीछे वाला ही नक्षत्र होता है, अर्थात चन्द्रमा उस राशि में भ्रमण कर रहा होता है। मास का नाम ज्ञात होने से नक्षत्र का ज्ञान हो सकता है। इन नक्षत्रों को बारह राशियों में विभक्त किये जाने पर 2.5 (ढाई) नक्षत्र की एक राशि बैठती है जिससे पहले नक्षत्र से पहली राशि के क्रम से चन्द्रराशि की गणना हो जाती है। इसी प्रकार सूर्य एक मास में एक राशि में रहता है, वैशाख में यह मेष राशि में रहता है, इसी क्रम से आगे की राशियों की गणना से सूर्य किसी राशि में है यह ज्ञात होता है। एक और नियम है कि सूर्य किसी माह जिस राशि में रहता है, सूर्योदय भी उसी राशि में होता और वही उस समय लग्न राशि होती है। संक्रांति को सूर्योदय काल को लग्न मानकर प्रतिदिन चार मिनट आगे बढ़ा देने से वास्तविक लग्न काल की गणना हो जाती है। प्रत्येक दो घंटे बाद लग्न बदल जाता है और इस क्रम से यह जाना जा सकता है कि किस समय कौन सा लग्न होगा। लग्न के पूवार्ध के समय दाहिनी नाक चल रही होती है जबकि उतरार्ध में बायीं नाक। पुराने ज्योतिषी हथेली पर नाक के श्वास के दबाव से जाने लेते थे कि उस कौन सा लग्न

होगा। लग्न संधि पर यह क्रिया बहुत उपयोगी सिद्ध होती थी। नक्षत्रों की सत्यता की पुष्टि इस बात से हो जाती है कि यह निश्चित तारों का समूह है जो रात्रि में साफ दिखाई देता है। इसी प्रकार सूर्योदय और सूर्यास्त के समय की पुष्टि हो सकती है और लग्न का से हो जाती है कि यह निश्चित तारों का समूह है जो रात्रि में साफ दिखाई देता है। इसी प्रकार सूर्योदय और सूर्यास्त के समय की पुष्टि हो सकती है और लग्न का परीक्षण श्वास की क्रिया से हो जाता है। ये सारी पद्धतियाँ वैज्ञानिक और परीक्षित है। सूर्य एवं चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य ग्रह अपने निर्धारित पथ पर सूर्य की परिक्रमा करते हैं और वर्षो में होती है अतः ज्योतिषयों के ध्यान में रहता है कि कौन सा ग्रह किस राशि मं चल रहा है। लग्न, सूर्य, चन्द्रमा एवं अन्य ग्रहों की स्थिति की जानकारी होने से तत्काल कुण्डली तैयार हो जाती है, यह कुण्डली ही भारतीय ज्योतिष में भविष्य फल जानने का मुख्य आधार मानी जाती है। इसके अतिरिक्त तिथि, वार, योग व करण को फलादेश विचार में सम्मिलित किया गया है। तिथि चन्द्रमा की एक कला होती है, सूर्य व चन्द्रमा के भ्रमण में प्रतिदिन अंतर आता है। इससे तिथि का मान निकाला जाता है। सूर्य एवं चन्द्रमा के स्पष्ट स्थानों को जोड़ने के उपरान्त कलाओं में बदल इसमें 800 का भाग देने से योग की गणना होती है इसी प्रकार वार की गणना होरा के आधार पर होती है जो एक घंटे की होती है और ग्रहों की ऊपर से नीचे की अवस्थिति से क्रमशः सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्रमा, शनि, बृहस्पति, मंगल आदि क्रम से इनके स्वामी की गणना हाती है। जिस दिन जिस ग्रह स्वामी की पहली होरा होती है, वहीं उस दिन का वार होता है। करण तिथि के आधे भाग हो कहते हैं।

कुण्डली बनाने की प्रक्रिया क्योंकि गणीतिय एवं वैज्ञानिक है अतः इस पर आधारित निष्कर्षो को यदि तार्किक ढंग से सामने रखा जाये तो परिणाम सहज ही विश्वसनीय हो जाते हैं, वैदिक ऋषियों से लेकर आधुनिक ज्योतिष शास्त्रियों ने इस ओर गहन अध्ययन किया है और इसी तार्किकता का सहारा लेकर फलादेश की विधि विकसित की है। इसमें एक ओर जहाँ ग्रहों की प्रकृति को आधार बनाया गया है। वहीं इनकी स्थिति को अधिक महत्वपूर्ण मानते हुए प्रभाव की गणना की गई है। प्रभाव का आंकलन करते समय अन्य ग्रहों से सम्बन्ध (मित्र, शत्रु अथवा सम) तथा दृष्टि को भी फलादेश का घटक बनाया गया है। जीवन के लिए विविध पक्षों पर विचार के लिए इन्हें कुण्डली के बाहर स्थानों में बांटा गया है और इनके लिए कारक ग्रहों को भी आधार माना गया है। लग्न कारक स्थानों एवं उनमें स्थित ग्रहों, उनके बीच सम्बन्धों तथा एक दूसरे पर दृष्टि को ध्यान में रखकर ऋषियों ने कुछ विशिष्ट योगों की रचना की है जो त्वरित फलादेश में सहायक होते हैं। भारतीय ज्योतिष में कुण्डली की यह पद्धति ही सर्वाधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय हैं।

कुण्डली को सम्मिलित करते हुए भारत में जन्मपत्रिका बनाने की परम्परा रही है, यह पत्रिका जीवन का एक महत्वपूर्ण प्रपत्र होती थी जिनका विवाह आदि बड़े संस्कारों के अतिरिक्त भवन निर्माण जैसे अवसरों पर मिलान एवं विचार के लिए उपयोग किया जाता था।

कुण्डली की उपयोगिता व लोकप्रियता को देखते हुए इस ओर अन्य कई प्रकार के प्रयोग हुए हैं। उदाहरण के लिए जन्म कुण्डली के अतिरिक्त चन्द्र कुण्डली को भी विचार का आधार बनाया गया है। इस क्रम में सुदर्शन चक्र का भी उपयोग किया जाने लगा। विशिष्ट फलादेश के लिए नवांश कुण्डली, द्वादशांश, त्रयोदशांश, षोडशांश व अन्यान्य प्रकार की कुण्डिलयाँ प्रचलन में आई। इसी क्रम में ग्रहों की महादशा, अन्तरदशा, प्रत्यन्तर दशा व सूक्ष्म दशा का महत्व बढ़ा, साथ ही योगिनी दशा भी प्रचलन में आयी। अष्टक वर्ग ही षोडश वर्ग आदि की गणना होने से इनके प्रभाव को भी फलादेश में सम्मिलित किया जाने लगा। ग्रह दशा में भी ग्रहों की परिक्रमा अवधि के आधार पर गणना के स्थान पर पूर्णायु ज्ञात कर आनुपातिक आधार पर दशा काल की पद्धति सामने आई। योगों के अतिरिक्त योगभंग होने का भी प्रावधान दिखने लगे। इसके अतिरिक्त उत्तर भारतीय व दक्षिण भारतीय कुण्डलियों के प्रचलन से इनके स्वरूप व फलादेश के भेद की बातें होने लगीं। पश्चिम में प्रचलित हर्षल, नेप्चून व प्लूटो आदि का समावेश होने से भी फलादेश प्रभावित होने लगा। इन सारे कारणों से ज्योतिष आधार का ही विस्तार नहीं हुआ, यह जटिल भी बन गया। अल्पज्ञान वाले ज्योतिषयों द्वारा तथा लोगों के विश्वास का लाभ उठाकर स्वार्थपूर्ति करने वालों ने ज्योतिष के साथ अन्धविश्वास भी जोड़ दिए जिससे ज्योतिष के विषय में भ्रम का वातावरण बना और इसकी विश्वसनीयता पर प्रश्न उठने लगे। भारत के ज्ञान का उपहास उड़ाने वालों के लिए यह स्थिति काफी अनुकूल थी, उन्हें ज्योतिष को मिथ्या ही नहीं, धोखा घोषित करने तक में संकोच नहीं किया। स्वाभाविक एवं वैज्ञानिक रीति से विकसित प्राचीन भारतीय ज्योतिष के विषय में यह अप्रिय स्थिति प्रभावी निराकरण की मांग करती है। इसके लिए आवश्यक है कि इसमें से अनावश्यक जटिलता निकालकर कुण्डली पद्धति को अपनाया जाये, इसके अन्य पक्ष आगे के अन्वेषण एवं विकास के लिए रखे जा सकते हैं।

अन्धकार की उपेक्षा प्रकाश में चलना अधिक श्रेष्ठ होता है। सिद्धांत, संहिता तथा होरा, इन तीन स्कन्धों से युक्त ज्योतिष शास्त्र को वेद का निर्मल नेत्र कहा गया है। खगोल एवं भूगोल की व्यक्त व अव्यक्त गणित परिपाटी जिससे समस्त ग्रह–नक्षत्रादि की स्थिति का ज्ञान होता है, सिद्धांत स्कन्ध कहा जाता है।

काल के शुभत्व व अशुभत्व (सुमिक्ष, दुर्भिक्ष आदि का ज्ञान कराने वाली को संहिता स्कन्ध) तथा प्राणी के जन्मकालिक लग्न से जीवनभर के शुभाशुभ फलों का ज्ञान होरा स्कन्ध कहलाता है।

ज्योतिष मूलत: ज्योति शब्द से बना है, जिसका अर्थ है प्रकाश। ज्योतिष अन्धविश्वास का नहीं, विश्वास का विषय है जिसको देश काल एवं परिस्थिति से ऊपर नहीं रखा जा सकता। प्राचीन काल से लेकर आज तक न केवल समाज रचना में परिवर्तन हुआ है अपितु रहन-सहन की रीति एवं साधनों में भी भारी अन्तर आया है। राज्य का स्तर व स्वरूप बदलने से राजा की स्थिति भी परिवर्तित हो में परिवर्तन हुआ है अपितु रहन-सहन की रीति एवं साधनों में भी भारी अन्तर आया है। राज्य का स्तर व स्वरूप बदलने से राजा की स्थिति भी परिवर्तित हो जाती है, अत: राजयोग पर सापेक्ष रीति से विचार हो स्वाभाविक है। ज्योतिष के विषय में स्पष्ट विवाद फलित ज्योतिष को लेकर होता आया जबकि इसका गणितीय पक्ष प्राय: स्वीकार्य माना जाता है। ज्योतिष का फलित पक्ष कितना विश्वसनीय है, इस पर विचार के कुछ बिन्दु अर्थात सूर्योदय-सूर्यास्त, सूर्य चन्द्रमा के अनुसार मौसम आदि का संकेत तो ऊपर दिये जा चुके हैं जो सब पर समान रूप से प्रभाव डालते हैं, व्यक्ति के जीवन में यह फलित कितना कारगर और सटीक होता है, फलित के लिए यह बिन्दु सबसे अधिक महत्व भाग्य पर यह समझना आवश्यक है कि अन्य सभी विधाओं की भांति ज्योतिष पर भी भारतीय दर्शन का प्रभाव है जिसमें आत्मा अजर-अमर कही जाती है और कर्मों के अनादि प्रवाह से जिसके संचित, प्रारब्ध एवं क्रयमाण भेद माने गये हैं। संचित कर्मो के फल का योग प्रारब्ध और वर्तमान कर्म को क्रियमाण माना गया है जो आगे फल देगा। पुनर्जन्म की व्यवस्था के अनुसार पूर्वजन्मों के कर्मो का यह क्रम अगले जन्मों तक चलता रहता है।

कुल मिलाकर कहें तो जीवन में हमारा प्रदर्शन सामान्यत: हमारे कर्म पर आश्रित होता है। यह कर्म हमारी प्रकृति से संचालित होता है। प्रवृत्ति हमारे पूर्वकर्मो से बनती है और प्रारब्ध के रूप में अपनी भूमिका निभाती है। स्वयं हमारा जन्म हमारे प्रारब्ध से होता है। जिस पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं होता। दैनन्दिन जीवन में हम पाते हैं कि एक ही परिस्थिति और एक ही समय में एक ही प्रकार का कर्म करने पर व्यक्तियों को अलग-अलग परिणाम मिलते हैं। कोई बहुत सफल हो जाता है और कोई सदैव असफल। इसके पीछे प्राय: प्रारब्ध को कारण माना जाता है। कर्म के अतिरिक्त हमारे प्रदर्शन पर हमारे ज्ञान और अनुभव का भी प्रभाव होता है जो हमें परिश्रय और परिस्थितियों से मिलता है। सामान्यत: परिस्थितियों पर हमारा नियंत्रण नहीं होता, इन्हें भी भाग्य ही तय करता है। यदि यह कहें कि हमारे जीवन का प्रदर्शन हमारे कर्म, ज्ञान, अनुभव परिस्थितियों एवं प्रारब्ध से होता है, तो

यह असत्य नहीं होगा। यदि प्रवृत्ति और भाग्य के संदर्भ में इसे देखे तो प्रारब्ध सबसे महत्वपूर्ण लगने लगता है। ज्योतिष हमारे इसी प्रारब्ध का आंकलन करता है, इसे जानने की जो पद्धति भारतीय विद्वानों ने विकसित की है, वहीं फलित ज्योतिष है।

विषय बहुत विस्तृत है किन्तु रोग के संदर्भ में कोई योग्य चिकित्सक ही बता सकता है कि इसका कारण क्या है और किस उपचार व औषधि से लाभ होगा। ऐसे ही कोई योग्य ज्योतिषी ही ग्रहगणना की सटीक व्याख्या से भवितव्य सामने रख सकता है। ऊपर लग्न की वैज्ञानिकता पर कुछ कथन है, इससे आगे भावों की रचना, तथा उनका कारकत्व भी परीक्षित है। ग्रहों का स्वभाव, अन्य ग्रहों की उपस्थिति का इन संदर्भो के साथ मिलाकर बना प्रभाव विशिष्ट फल को सामने रख देता है। यह पूरी पद्धति तार्किक और वैज्ञानिक है। असावधानी फलित को सामने रखने में हो जाती है क्योंकि ज्योतिष का मूल उद्देश्य 'भवितव्य को अक्षरश: सत्य सिद्ध करना नहीं, अपितु इसकी सम्भावना से अवगत कराना है जिसमें उपचार आदि से परिवर्तन भी हो सकता है। उदाहरण के लिए भयंकर गर्मी (सूर्य के उच्च होने पर भी) पानी पी कर चलने व छाता ओढ़ लेने से इस गर्मी के कारण होने वाली हानि से बचा जा सकता है। इसी प्रकार अन्य ऋतुओं की अपेक्षा वर्षा ऋतु में वृक्षारोपण को शीघ्र विकसित किया जा सकता है। अभिप्राय यह है कि ज्योतिषीय फलित को सही परिपेक्ष्य में लेने की आवश्यकता है।

उपरोक्त कथन से प्रश्न उठ सकता है कि भवितव्य में परिवर्तन हो सकता है तो फलित की सत्यता का अर्थ ही क्या है। यहां तार्किकता से बात समझी जा सकती है, उपचार व सुधार आदि तभी सम्भव हो सकता है जबकि भवितव्य अथवा आशंका का बोध हो जाये। यह काम फलित ज्योतिष करता है। इसके उपचार अथवा सुधार प्रत्येक अवसर पर सम्भव नहीं होता, अधिकांश परिस्थिति व प्रारब्ध नियति पर प्रभाव डालते हैं। ज्योतिष इसका आंकलन कर उपयुक्त संकेत कर देता है। संक्षेप में कहा जाये तो ज्योतिष मुख्यत: मार्गदर्शक की भूमिका निभाता है और मार्गदर्शन की यह प्रक्रिया निश्चित गणनाओं और अध्ययनों पर आधारित होते हुए वैज्ञानिक भी है। एक पुरानी कहावत है कि व्यक्ति परिस्थितियों का दास होता है किन्तु यह भी सत्य है कि परिस्थितियों पर विजय भी पायी जा सकती है। ज्योतिष इसका अपवाद नहीं है। ज्योतिष को ठीक से समझ लिये जाने पर सारी बातें स्वयं स्पष्ट हो जायेंगी।

राष्ट्रवाद का जयनिनाद

देश भर में लगभग पचास हजार खुले स्थानों पर, घंटे भर के खेलकूद आदि के बाद जो प्रार्थना की जाती है, उसमें दो बार 'राष्ट्र' शब्द का उल्लेख होता है। पहली बार 'हिंदुराष्ट्राङ्गभूता' में अपना परिचय देते हुए ईश्वरीय कार्य पूर्ति के लिए शुभाशीष मांगा जाता है और दूसरी बार अंतिम चार पंक्तियों में ऐसे शुभाशीष से इस कार्य के विजयशाली होने तथा धर्म की रक्षा और राष्ट्र को परम वैभव के शिखर पर पहुँचाने की कामना होती है। राष्ट्र के अङ्गभूत घटक होने के कारण अपने प्रार्थना के रूप में प्रतिदिन राष्ट्र को सुख, शान्ति एवं समृद्धि के शिखर पर पहुँचाने का अटल संकल्प लिया जाता है। संक्षेप में कहें तो यह संकल्प ही राष्ट्रवाद है। भारत सनातन राष्ट्र है, इसकी सभ्यता एवं संस्कृति हजारों वर्ष पुरानी हैं जिन्होंने मिल कर इस महान राष्ट्र का निर्माण किया। राज्यों की सीमाएं भले ही घटती बढ़ती और बदलती रही हों, किंतु भारत की सीमाएं प्रकृति ने स्वयं निर्धारित की हैं :

उत्तरं यत समुद्रस्य, हिमाद्रेश्चैव दक्षिणं।

वर्ष तद भारतं नामः भारती यत्र संतति।।

(जिसके उत्तर में हिमालय और दक्षिण में समुद्र है, वह पुण्यभूमि भारत है और यहाँ रहने वाले लोग भारतीय हैं।)

भौगोलिक सीमाएं राष्ट्र का आकार बताती हैं और इतिहास इन सीमाओं के भीतर समय-समय पर हुई घटनाओं का वर्णन करता है, किंतु राष्ट्र का वास्तविक परिचय उसकी संस्कृति कराती है। संस्कृति राष्ट्र के समग्र चिंतन और व्यवहार को व्यक्त करती है जो इसकी स्थायी परंपराओं एवं इसके नागरिकों के दैनन्दिन आचरण से परिलक्षित होता है। पिछले लगभग 1000 वर्षों में भारत शासकीय दासता के अधीन रहा है, अर्थात नागरिकों के जीवन को प्रभावित करने वाली राज्य व्यवस्था इसकी अपनी न होकर, बाह्य आक्रमणकारियों द्वारा हिंसाचार के बल पर थोपी हुई थी। ऐसी परिस्थिति में व्यवहार और दैनिक आचरण में कुछ परिवर्तन होना अस्वाभाविक नहीं है, किंतु महान चिंतन, प्राचीन संस्कार व पीढ़ी दर पीढ़ी अपनाई जाती रही स्वस्थ परम्पराएं ऐसे क्षरण को रोककर सांस्कृतिक रूप से राष्ट्र को बचाए रखते हैं।

भारत के प्राचीन एवं सनातन चिंतन और सामाजिक परंपराओं ने सांस्कृतिक रूप से जिस महान राष्ट्र का निर्माण किया है, वह हजारों आघातों के बाद भी स्थिर बना हुआ है। प्रसिद्ध शायर मोहम्मद इकबाल को इसीलिए

'सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' में कहना पड़ा :

'यूनान और रोमां सब मिट गए जहाँ से,

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।'

राष्ट्र स्थिर बना हुआ है किंतु दासता के दौरान यहाँ के मूल समाज के मूल्यों एवं मान बिंदुओं पर निरंतर आघात कर उसमें अपने धर्म व संस्कृति के प्रति हीनभाव भरने के जो घृणित प्रयास किए गए, उससे आत्मविश्वास को भारी चोट पहुँची। 'भारत महान राष्ट्र है' ऐसा कहने में उन्हें संकोच होने लगा। यहाँ के समाज में समय-समय पर राष्ट्रचिंतक उत्पन्न होते रहे हैं जिन्होंने अनुभव किया कि यह राष्ट्र तभी महान बन सकता है, जब इसके निवासियों को इस पर गर्व हो। इस प्रेरक तत्व के बिना राष्ट्र को लेकर कोई भी सदिच्छा संकल्प में नहीं बदल सकती, अत: सबसे पहले राष्ट्रभाव विकसित होना आवश्यक माना गया। इसके लिए समय-समय पर प्रयास किये गये और बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक (1925) में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के गठन के बाद ऐसे प्रयास सघन और नियोजित रूप से चलने लगे। धीरे धीरे समाज में इसको लेकर चेतना बढ़ने लगी और यह विचारधारा बन गई जिसका प्रभाव विभिन्न रूपों में सामने आने लगा, विशेषकर राजनीति के क्षेत्र में।

इस देश का प्राचीन समाज क्योंकि हिंदू नाम से जाना जाता है, अत: इन प्रयासों के केंद्र में हिंदू ही रहे। इस स्थिति से जिनके हित बाधित होने का भय था, वे विरोध में जुटने लगे और भांति-भांति के आरोप लगाकर दोश मढ़े गये। उन्होंने कई शब्द गढ़े, जिनमें 'सांप्रदायिक' और 'दक्षिणपंथी' प्रमुख है, विदेशी मीडिया में 'हिन्दू राइट विंग' कहा जाने लगा। ऐसे में, राष्ट्रसेवियों को भी अपनी प्रस्तुति के लिए शब्द चुनना पड़ा जो 'राष्ट्रवाद' से अधिक उपयुक्त कुछ नहीं हो सकता था। राजनीति में इसे अपेक्षित स्वीकार्यता नहीं मिल सकी और विरोधी अपने पुराने शब्दों का ही प्रयोग करते रहे।

राष्ट्रवाद की अवधारणा में राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक और समाज के प्रत्येक अंग का महत्व होता है, अत: सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विचार की स्वीकार्यता स्थापित करना आवश्यक हो जाता है। इसके लिए भी तीव्र और गहन प्रयास किए गए और इन क्षेत्रों में उनका प्रभाव भी दिखाई दिया। भारत में प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली है, जिसमें जनता अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करती है। ये चुनाव राजनीतिक दलों और उनकी विचारधारा की स्वीकार्यता मापने का भी उपकरण होते हैं। राष्ट्रवाद से प्रेरित राजनीतिक संगठनों की सफलता को विचारधारा की स्वीकार्यता मान लेने में कुछ कठिनाई है, क्योंकि चुनाव में कई सारे कारक

काम करते हैं। धर्म, जाति, क्षेत्रीयता, व्यक्ति, तात्कालिक कारण अथवा स्थानीय समीकरण भी इनमें भूमिका निभाते हैं, अत: राष्ट्रवाद का प्रभाव तो आंका जा सकता है किंतु इसकी स्वीकार्यता को लेकर पक्ष और विपक्ष का स्पष्ट आंकलन अब तक नहीं हो पाया था।

राजनीति में राष्ट्रवाद का प्रतिनिधित्व मुख्यत: भारतीय जनता पार्टी ही करती है। 1980 में जन्म के बाद 1984 के लोकसभा चुनाव से इसकी राष्ट्रीय स्तर पर भागीदारी की समीक्षा करें तो पार्टी 1998 तक के पाँच चुनावों में क्रमश: 7.74, 11.36, 20.11, 20.29 व 25.59 प्रतिशत मत प्राप्त कर निरंतर आगे बढ़ने में सफल रही। 1999 से लेकर 2009 तक इसमें गिरावट आई जो 2014 में पुन: बढ़कर 31.34 हो गई। सीटों के मामले में 1984 से 1999 तक क्रमश: पार्टी 2, 85, 120, 161, 182 व 182 गिनती के साथ बढ़ती रही, जिसमें 2004 व 2009 में काफी गिरावट आई किंतु 2014 में 282 सीटों के साथ पूर्ण बहुमत प्राप्त कर इसने केंद्र में अपनी सरकार बना ली, समर्थक दलों को मिलाकर यह संख्या 335 हो जाती है। राष्ट्रवाद की राह पर चलते हुए भाजपा को मिली अभूतपूर्व सफलता ने उससे बहुत सारी अपेक्षाएं जगा दीं, जिनमें राष्ट्र की अस्मिता, एकता, अखण्डता एवं सुरक्षा जैसे विषयों का समाधान सम्मिलित था। इनमें राम जन्मभूमि पर मंदिर का निर्माण, समान नागरिक संहिता और धारा 370 की समाप्ति प्रमुख थे। राज्यसभा में बहुमत न होने, विरोधी दलों के भारी विरोध और न्यायपालिका के स्तर पर वांछित प्रगति न हो पाने के कारण इस ओर कुछ विशेष नहीं हो पाया। पार्टी के समर्थकों में इससे कुछ निराशा अवश्य हुई किन्तु केन्द्र सरकार ने नोटबन्दी, जीएसटी लागू करने व तीन तलाक प्रथा समाप्त करने जैसे कई साहसिक निर्णय लिए। आर्थिक प्रबंधन, विदेशों से संबंध और देश की छवि निखारने की दिशा में बहुत प्रभावशाली काम हुआ। 'एक रैंक-एक पेंशन' और 'उज्वला' जैसी बहुत सी लोक कल्याणकारी योजनाएं आरम्भ किये जाने के साथ ही आरक्षण से अब तक वंचित आर्थिक रूप से पिछड़ेवर्ग के लिए 10 प्रतिशत आरक्षण आदि के अलावा ढ़ांचागत विकास के भी कई बड़े कार्य हुए।

सत्ता में रहने के इन पाँच वर्षों में सरकार पर भ्रष्टाचार का छोटा सा आरोप भी नहीं लग पाया और सरकार की नीयत पर कभी उंगली नहीं उठी। मंत्रियों का प्रदर्शन उच्च स्तर का रहा जिससे सरकार की, विशेषकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की छवि एक इमानदार, परिश्रमी, कर्मठ एवं कठोर निर्णय लेने में सक्षम व्यक्ति के रूप में स्थापित हुई। इन सारी बातों से समर्थकों की दृष्टि में भाजपा सरकार योग्य एवं सक्षम आंकी गई किन्तु सफलता के लिए समर्थकों के साथ ही जनता की अपेक्षाओं पर खरा उतरना भी आवश्यक होता है। बहुत सारे कारणों से कुछ

अपेक्षाएं पूरी नहीं हो पातीं, जो 'एंटी इनकंबेंसी फैक्टर' बन जाती हैं। विरोधी दल ऐसी स्थिति से लाभ उठाने की चेश्टा करते हैं और असंतोष को बढ़ाने का प्रयास करते हैं, जिसमें प्रमुख उपलब्धियाँ गौण होने का भय रहता है। पक्ष और विपक्ष में आरोप-प्रत्यारोप का दौर चलने लगता है और चुनाव में कोई विषय मुख्य बनकर केंद्र में नहीं आ पाता।

2019 का लोकसभा चुनाव इस मामले में विशिष्ट बन गया है, क्योंकि इसमें राष्ट्रवाद मुख्य मुद्दा बनकर चुनाव के केंद्र में आ गया है। इसमे भाजपा के विरोधी दल अनायास ही राष्ट्रवाद के विरोध में खड़े दिखाई देने लगे हैं। सामान्य जनता को इसमें एक का पक्ष लेना है, राष्ट्रवादियों की दृष्टि में यह बहुत सुखद स्थिति है। वर्शानुवर्ष वे ऐसी ही स्थिति की कामना करते थे जिसमें जन सामान्य राष्ट्र की चिन्ता करने लगे और राष्ट्रहित में उठ खड़ा हो जाये। इस बार के चुनाव में यह साफ-साफ दिखाई दे रहा है, जिसे चुनाव में सफलता अथवा जीत-हार की दृष्टि से न देख कर राष्ट्रीय आकांक्षा के रूप में लेते हुए उन कारकों को पुष्ट करना चाहिए जो इसमें सहायक बने हैं। राष्ट्रवाद को स्वीकार्यता केवल बातों के बल पर नहीं मिल सकती थी, इसके लिए हजारों जीवनव्रती कर्मयोगियों और लाखों समर्पित कार्यकर्ताओं ने त्याग एवं तपस्या के साथ अथक योगदान दिया। उन्होंने समाज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में जाकर तथा हर वर्ग तक पहुँच कर, सेवा और साधना के द्वारा राष्ट्रवाद की कीर्ति पताका फहराई। उन्होंने धरातल पर उतर कर श्रेष्ठ कार्य किये, जिन्हें राष्ट्र व समाज ने प्रत्यक्ष रूप से अनुभव किया।

1962 के युद्ध के समय ट्रैफिक व्यवस्था संभालना हो अथवा 1965 के युद्ध में सीमाओं पर युद्धरत् सैनिकों तक रसद व उपकरण पहुँचाना, भूकंप पीड़ितों की सहायता हो अथवा बाढ़ में राहत कार्य, निर्धनों के लिए शिक्षा व्यवस्था हो अथवा वनवासियों व गिरिवासियों के लिए सेवा के प्रकल्प, शोषितों व वंचितों के लिए सामाजिक समरसता हो अथवा राष्ट्र के मानबिन्दुओं की रक्षा, इन राष्ट्रसेवियों की लगन व निष्ठा अनुकरणीय रही है। ऐसी बहुत सारी बातों ने समाज में राष्ट्रभाव को विकसित किया है। 1963 के गणतंत्र दिवस की परेड में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की टुकड़ी को सम्मिलित करना और निस्वार्थ भाव से राष्ट्र निर्माण में योगदान की, देश के अनेकों शीर्षस्थ एवं गणमान्य लोगों द्वारा मुक्त कंठ से सराहना इसका प्रमाण है कि राष्ट्रवाद अपने मूर्तरूप में स्थापित हो रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, इस देश में, संकट के अवसर आने पर अपार एकजुटता दिखाई देती रही है। पाकिस्तान के साथ 1965 व 1971 के युद्धों के समय पूरा देश एक साथ खड़ा रहा, इसमें राजनीति आड़े नहीं आई। देश में सामान्यतः रक्षा एवं वैदेशिक मामलों को विवादित

बनाने से बचने की परंपरा रही है, किंतु 1999 की कारगिल युद्ध के समय से इन मामलों में भी राजनीति का प्रवेश होने लगा, राजनीतिक लाभ-हानि के दृष्टिकोण से समर्थन-विरोध का चलन बढ़ गया। इस क्रम में राष्ट्रहित पीछे छोड़ कर कुछ राजनीतिक दलों द्वारा समाज में स्थापित राष्ट्रभाव की उपेक्षा होने लगी। 2014 में केंद्र में एक राष्ट्रवादी सरकार की स्थापना के बाद ऐसी बातों में तेजी आ गई। 2016 में केंद्र सरकार द्वारा नोटबंदी की जाने पर जनता ने कष्ट सह कर भी इसे राष्ट्रहित में मानते हुए भरपूर समर्थन दिया, किंतु विरोधी दल आलोचना पर उतर आए, जो अब भी जारी है। इसी प्रकार करों की जटिलता समाप्त करने व इनमें एकरूपता लाने के लिए जीएसटी लागू होने का, जन सामान्य ने तो तो राष्ट्रहित में आवश्यक मानते हुए समर्थन किया, किंतु विरोधी दल इसे अब भी पचा नहीं पा रहे। 2018 में पठानकोट पर हुए आतंकी हमले के उत्तर में पाकिस्तान के उड़ी में हुई सर्जिकल स्ट्राइक से पूरा देश प्रसन्न था, किंतु विरोधियों ने इसे फर्जी करार दे दिया। 2019 में पुलवामा के बम विस्फोट के जवाब में पाकिस्तान के बालाकोट में की गई एयर स्ट्राइक पर भी विरोधियों का यही रवैया रहा, जबकि पूरा देश इसके समर्थन में आ खड़ा हुआ था।

राष्ट्रहित में लिए गए निर्णय पर भी विरोधी समर्थन के बजाय विवाद खड़ा करने पर जोर देते रहे। राष्ट्र से जुड़े मसलों पर सत्तापक्ष और विरोधियों के बीच हुए इस विभाजन से अनायास ही राष्ट्रवाद चर्चा के केंद्र में आ गया और इन चुनावों में मुख्य विषय बन गया। इस राष्ट्र का मूल समाज हिंदू कहलाए जाने के कारण राष्ट्रवाद स्वाभाविक रूप से इससे जुड़ गया है। हिंदू राष्ट्रीयता का ही परिचायक है, यह एक प्रकार से भारतीय का पर्याय है। हिंदू समाज के जातियों व उपजातियों तथा भाषा एवं प्रांत के नाम पर विभाजित होने के कारण यह संगठित नहीं रहा। राजनीतिक लाभ-हानि को ध्यान में रखकर कई राजनीतिक दल इस विभाजन को बढ़ाते रहे। अपने स्वार्थ के लिए वे हिंदुओं और मुस्लिमों को पृथक एवं विरोधी समुदाय मानते हुए ऐसी पृथकता को उकसाते रहे और मुस्लिमों के तुष्टिकरण का मायाजाल बुन दिया ताकि एकमुश्त वोट बैंक के रूप में उनका लगातार दोहन किया जा सके।

यह चलन इस हद तक बढ़ाया गया कि राष्ट्रवाद के समर्थक सांप्रदायिक करार दे दिए गए और मुस्लिम तुष्टिकरण के पोशक धर्मनिरपेक्ष कहलाए जाने लगे। इतना ही नहीं, राष्ट्रवादियों को अलग-थलग करने के नियोजित अभियान भी चलाये गये। इस सबके बाद भी, राष्ट्रवाद की यात्रा अनवरत जारी है, यह निरंतर आगे बढ़ रही है और जनसामान्य की स्वीकार्यता पाकर उनके बीच सुस्थापित हो चुकी है।

अब स्थिति यह आ गई है कि सांप्रदायिक और धर्मनिरपेक्ष जैसे शब्द इस बार के चुनाव से पूरी तरह गायब हैं। अब इससे भी आगे, बहुत से राजनीतिक दलों में, विशेषकर कांग्रेस में, स्वयं को हिंदूवादी कहलाने की होड़ मच गई है। उन्होंने अपनी नीति को सॉफ्ट हिंदुत्व का नाम दिया है। जिस हिंदू समाज का कभी उपहास, अपमान और तिरस्कार होता था, अब उससे जुड़ने के प्रयास हो रहे हैं। हिन्दुत्व के घोर विरोधी व भगवा को आतंक से जोड़ने वाले दिग्विजय सिंह तक साधु-सन्यासियों का रोड शो करवा रहे हैं, यहाँ तक कि पुलिस सिपाहियों को भी भगवा पट्टा पहना रहे हैं। हिंदुओं को यह मान राष्ट्रवाद के सुस्थापित होने से ही मिल रहा है, इसके चलते अब राष्ट्रवाद स्वीकार्यता के केन्द्र में आ गया है। यह एक प्रकार से राष्ट्रवाद की ही जय-जयकार है।

राज्यधर्म से धर्मराज्य तक

महाभारत में उल्लेख मिलता है कि प्रारम्भ में न राज्य था, न राजा, न दण्ड था न दाण्डिक। लोग अपनी सहज धर्म भावना से परस्पर सुख एवं शान्तिपूर्वक निवास करते थे। कालान्तर में इस व्यवस्था की समाप्ति हो गयी तथा लोग स्वार्थी, लोभी तथा विलासी हो गये। समाज में घोर अराजकता फैल गयी। बलवान निर्बलों को उत्पीड़ित करने लगे। मनस्मृति में कहा गया है कि

"अराजके हि लोकेघस्मिन्सर्वतो विद्रद्रते भयात्।
रक्षार्थमस्य सर्वस्य राजान्मसृजत्प्रप्रभु:।।"

अर्थात् इस संसार में राजा के न रहने से सर्वत्र हाहाकार मचने लगा, इसलिए इस जगत के रक्षार्थ ईश्वर ने राजा का निर्माण किया। प्राचीन भारत में राज्य संबंधी चिंतन का राजधर्म, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र व दंडनीति आदि नामों से उल्लेख है। इसके कर्तव्य की परिधि में मानव-जीवन के सभी पक्ष समाहित हैं जिहें धर्म से जोड़ते हुए इसे 'राजधर्म' निरूपित किया।

शासन का सर्वाधिक प्रचलित रूप क्योंकि राजतंत्र ही था तथा राजा के पास शक्ति होने से समस्त अधिकारी तथा संस्थायें उसी से अधिकार ग्रहण करते थे, अत: राजपद को स्मृति आदि ग्रन्थ देवता के समान पवित्र और प्रतिष्ठित मानते रहे हैं। उदाहरण के लिए नेपाल में राजा को विष्णु का अवतार और यहाँ गढ़वाल में राजा को 'बोलाँदा बद्री' कहा जाता था। दुर्जनों को दण्ड देना तथा सज्जनों को पुरस्कृत करना तथा प्रजा का भौतिक एवं नैतिक उत्थान उसका कार्य था। वेदों तथा उपनिषदों में राज्य का मुख्य उद्देश्य प्रजा का सर्वांगीण विकास बताया गया है। अग्निपुराण के अनुसार 'जो राजा अपनी प्रजा की भली भांति रक्षा नहीं करता, उसके यज्ञ तथा तपस्या आदि निष्फल हैं, प्रजारक्षण के कर्त्तव्य से च्युत राजा नरक को जाता है।' राजा में देवता का अंश यद्यपि लाक्षणिक माना जाता था, किन्तु राज्य विधान साक्षात् देवप्रदत्त माने जाते थे जिसका अनुपालन राजा के लिए अनिवार्य होता था। राजा का राज्याभिषेक उचित धार्मिक विधि-विधान द्वारा किया जाता था और इस अवसर पर राजा को धर्म की रक्षा की शपथ भी लेनी पड़ती थी। उदाहरण के लिए राजा वेणु को भी प्रतिज्ञा करनी पड़ी थी कि "श्रुति स्मृतियों में जो धर्म कहा गया है, मैं उसका पालन करूंगा और कदापि मनमानी नहीं करूंगा।"

भारत में राज्य व्यवस्था के विकास के साथ-साथ कई प्रणालियों पर चिंतन होता रहा। समय-समय पर कई प्रकार की राज्य व्यवस्थायें चलन में रहीं, संघीय अथवा सम्मिलित राज्यों के भी उदाहरण हैं, जैसे उत्तर वैदिक युग में कुरु-पांचाल राज्यों का एक संघ था। सिकन्दर के आक्रमण के समय सिन्ध तथा पंजाब तथा बुद्धकाल में गंगाघाटी के मैदानों में कई गणराज्य विद्यमान् थे जिनमें मालव, अर्जुनायन, लिच्छवि, मद्रक, शाक्य, मोरिय आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनका शासन केन्द्रीय समितियों अथवा संस्थागारों के माध्यम से संचालित होता था।

पंजाब में मालव तथा क्षुद्रक गणों का संघ राज्य था। इनमें सर्वव्यापक राजतंत्र की प्रणाली ही रही, जिसका प्रमुख राजा होता था। राजा के लिए उस समय के विचारकों ने कई नियमों की रचना की। इन्हें लागू करने के लिए एक ओर मंत्रियों का प्रावधान किया तो दूसरी ओर राजगुरु, आचार्य और राजपुरोहित के रूप में राजा के मार्गदर्शन की व्यवस्था की। आचार्य चाणक्य (विष्णुगुप्त), भारद्वाज, पाराशर और कात्यायन आदि बहुत से विचारकों ने राज्यव्यवस्था को लेकर बहुत से मतों का प्रतिपादन किया। अपनी विद्वता के चलते ऐसे आचार्य राज्य व्यवस्था को भी निर्देशित करते थे। इन आचार्यों में से अधिकांश के धर्म से भी जुड़े होने के कारण धर्म व राजनीति का आपस में। मिल गये।

सत्ता के साथ षड्यंत्र सदैव से जुडे रहे हैं, इसलिए राजसत्ता जहाँ धर्म को नियंत्रित करने का प्रयास करती थी, वहीं धार्मिक सत्ता राज्य को अपने अधीन रखना चाहती थी। ऐसा विश्व के सभी देशों में होता आया है, यूरोप के देशों में तो चर्च और राज्य का टकराव काफी चर्चित रहा। दोनों एक दूसरे के क्षेत्र में हस्तक्षेप करने और एक-दूसरे पर हावी होने का कोशिशों में लगे रहते थे। इसी के परिणामस्वरूप वहां 'सेकुलर' शब्द प्रचलन में आया अर्थात राज्य व्यवस्था में चर्च का कोई हस्क्षेप न हो अथवा राज्यसत्ता धर्म के मामलों से अलग रहे। मुस्लिम देशों में भी ऐसा टकराव देखने को मिला, जब राज्य व्यवस्था पर धर्म का नियंत्रण हो गया और राज्य के नियम धार्मिक व्यवस्थाओं के अनुसार बना दिए गए। वहां राज्य सत्ता व धर्म अलग भले ही दिखते हों किन्तु राज्य धार्मिक सत्ता की उपेक्षा नहीं कर सकता, राज्य पर अक्सर धर्म ही हावी रहता आया है। इतिहास में उल्लेख है कि इल्तुतमिश ने मुस्लिमवर्ग की सहानुभूति प्राप्त करने तथा शरा की औपचारिकता को पूरा करने के लिए बगदाद के खलीफा से स्वीकृति पत्र प्राप्त किया था। इसे भारत में औरंगजेब के शासनकाल के उदाहरण से भी समझा जा सकता है, जब इस्लामी

कट्टरपंथियों के उकसावे पर बलात् धर्म परिवर्तन के लिए राज्य सत्ता द्वारा भारी खून खराबा किया गया। इन टकरावों के विपरीत भारतीय चिंतन में राज्य सत्ता और धर्म का संघर्ष प्रायः बहुत कम हुआ। एक तो राजा को देवता के समकक्ष रखने का प्रचलन और दूसरे, धर्माचार्यों की सत्ता के प्रति अनाशक्ति इसके मुख्य कारण रहे।

ऐसा माना जाता है कि प्राचीन भारत में गणतंत्रों का उदय प्रारम्भिक वैदिक काल तथा राजतंत्र के बाद हुआ। जनतंत्रीय या गणतंत्रीय विचार का शाश्वत प्रवाह भारतीय समाज में सदैव विद्यमान रहा है। 'गणतंत्र' शब्द 'गण' और 'तंत्र' के योग से बना है। 'गण' संख्या सूचक है, वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत तथा अन्य साहित्य में जहाँ भी इसका उल्लेख आया है, यह समूहार्थक है। 'तंत्र' एक शासन-प्रक्रिया है जो एक जनसमूह द्वारा संचालित की जाती है और जिसकी प्रभुता गण (बहुत सारे लोगों) में निहित होती है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता सामूहिक जीवन की प्रक्रिया का विकास है। राज्य के गठन एवं संचालन से लेकर लोकहितकारी कार्यों हेतु विधि-विधानों का निर्माण तथा सभी के सुख और कल्याण की भावना का इसमे समावेश होता है। भारतीय चिन्तन में धर्म का लक्ष्य भी सभी का सुख और सभी का कल्याण है, अतः राज्यव्यवस्था के साथ इसके टकराव की सम्भावना नहीं रहती। इन चिन्तन में धर्माधिष्ठित राज्य की अवधारणा निहित है कि राज्य धर्म के आधार पर व्यवस्था चलाये, किन्तु यह धर्म कोई पंथ या सम्प्रदाय विशेष न हो कर सर्व कल्याणकारी प्रवृत्ति का द्योतक होता है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की यह अवधारणा धर्म और राज्य को एक दूसरे का पूरक बना देती है।

वाह रे बचपन – गहथ के परांठे

ह्यूंद और खरसौ, ये दो शब्द बचपन में मुझे कई बार सुनने को मिले। मुझे ये तो नहीं पता कि इनका उद्‌गम कहां से हुआ किन्तु इतना जरूर याद है कि जाड़े के दिनों को ह्यूंद और गर्मियो को खरसौं कहते थे। शब्द याद इसलिए हैं कि सर्दियों में हमारा परिवार पिताजी के साथ देहरादून आ जाता था और गर्मियाँ शुरू होते ही अपने गाँव में। गाँव, यानि पन्द्रह बीस परिवारों वाली बस्ती जो टिहरी गढ़वाल में चम्बा के सामने लगभग 4500 फीट की ऊँचाई पर बसी है। गाँव से लगभग मील भर नीचे हेंवल नदी बहती है और इतनी ही दूरी पर ऊपर नागराजा धार का मैदान है, जिसे नागदेव पथल्ड के नाम से जाना जाता है। पहाड़ी पर बसे होने के कारण गांव का मौसम सुहावना रहता है और छोटा होने के करण काफी साफ सुथरा भी।

उन दिनों बड़े शहरों में जाकर बसने का रिवाज नहीं था।गांव के पुश्तैनी मकान को ही घर माना जाता था और शहर में रहने के लिए बनाई गई व्यवस्था को डेरा। इन डेरों में प्राय: परिवार के कमाने वाले सदस्य रहते थे जो बीच-बीच में अपने घर आया जाया करते थे। ऐसे डेरे, उसमें रहने वाले के अलावा गांव व रिश्तेदारी से आने वालों का भी ठौर होते थे और कभी कभार, मेले-त्यौहार के दौरान इसमें रहने वाले का परिवार भी आकर इनमें ठहर जाता। धीरे-धीरे इन्हें बस्ती और छानी जैसे प्रचलन का हिस्सा मान लिया गया। पहाड़ों में लोग गर्मियों ऊँचे और सर्दियों में निचले इलाकों में चले आते हैं, निचले इलाकों की बस्तियों के लिए गर्मियों में उपरी इलाके में रहने की व्यवस्था और ऊपरी इलाकों में सर्दियों में रहने के लिए निचले आवास को छानी कहते हैं। छानी अर्थात अस्थाई आवास। शहरों वाले डेरे थी तब अस्थायी आवास जैसे ही होते थे, जहाँ पहाड़ी क्षेत्रों से आने वाले परिवार सर्दियों में रहा करते थे।

शिक्षा की आवश्यकता ने आने जाने के इस चलन में कुछ परिवर्तन कर दिया, इससे डेरों पर परिवारों का ठहराव बढ़ गया और पहाड़ों पर जाने का सिलसिला गर्मियों की छुट्टियों तक ही सिमट कर रह गया। संयुक्त परिवारों में इस नये चलन ने काफी टकराव पैदा कर दिया। शहर में रहने का खर्च सुविधायें और गांव का मतलब कठोर जीवन। हमारा परिवार अर्थात माता-पिता, मैं और दो छोटी बहिनें थीं, बाकी परिवार जिसमें दादा-दादी और पिताजी के भाईयों के बच्चे व पत्नियां सम्मिलित थे, की आलोचना के केन्द्र में आ गया। दादा-दादी चाहते थे कि

पिताजी कमाने के लिए देहरादून में रहें और हम लोग सबके साथ गांव में, जबकि पिताजी हमारी शिक्षा के लिए हमें शहर में ही रखना चाहते थे। जब तक हम छोटे थे और गाँव के स्कूल में पढ़ते थे, तब तक तो सब ठीक चलता रहा। सर्दियों में दो-तीन महीने शहर में और बाकी समय गाँव में रह लिये। लेकिन इसके बाद तनाव बढ़ने लगा, गाँव-घर का काम कौन करेगा? खेती बाड़ी और पशुओं का क्या होगा? जमीन, जायदाद कौन संभालेगा? पिताजी घर के सबसे बड़े थे परिवार के बिखराव का कारण नहीं बनना चाहते थे। इन्होंने तय किया कि मांजी गाँव में ही रहेगी और मैं पिताजी के साथ शहर में। मैं तब दस वर्ष का ही हुआ था कि उत्सुकता के चलते पिताजी के साथ शहर चला आया। गाँव से तीन-चार मील पैदल और फिर वहीं बदल कर देहरादून।

कहाँ गाँव का खुला वातावरण और कहाँ शहर की छोटी सी कोठरी, वह भी सड़क से सटी हुई। दिन भर हो हल्ला और शोर शराबा। पिताजी अपने पुश्तैनी पेशे पंडिताई और कर्मकाण्ड में व्यस्त रहते। सुबह सवेरे उठना, दो समय की संध्या और जजमानी में जाना। यह उनकी दिनचर्या थी, खाना बनाने का अभ्यास नहीं था। जैसे तैसे कुछ बनाकर मुझे खिला देते। आसपास की बस्ती कुछ अच्छी नहीं थी, इसलिए पिताजी को डर सताता था कि उनके बच्चों की संगत में बेटा कहीं बिगड़ न जाय। आते जाते वे मुझे कमरे में बंद कर बाहर से ताला जड़ देते थे। पिता जी मुझे पढ़ाना लिखाना चाहते थे, रोज स्कूल भी भेजते लेकिन सिटीबोर्ड के स्कूलों में कुछ अच्छा माहौल नहीं था, गन्दी गन्दी गालियाँ और झगड़े, वहां भी दोस्ती नही हो सकती थी। पिताजी गुस्से वाले थे। सख्त हिदायत थी घर से सीधे स्कूल और वहां से सीधे घर, न संगी, न साथी, न खेल न कूद। ऐसे में मांजी की याद मुझे बहुत सताती और रह-रह कर गाँव की याद भी, लेकिन बस में कुछ नहीं थान तो मांजी यहां आ सकती थी और न मैं उनके पास, उस जमाने में मोबाइल और टेलीफोन तो दूर, चिठ्ठी पत्री तक कई दिनों में पहुचँती थी। बन्द कमरे में खिड़की पर बैठकर मैं आते-जाते लोगों देखता और खूब रोता। ऐसे रोने का पिताजी पर उल्टा असर होता था, वे खीझ उठते और गुस्से में एक आध धौल भी जड़ देते, फिर उन्हें अपनी गलती का एहसास होता और मुझे छाती से चिपका कर समझाते कि वे तो खुद सबके साथ गाँव में रहना चाहते हैं लेकिन वहाँ खायेंगे क्या, इसलिए मजबूरी में यहां पड़े हैं। पिताजी की बात तब मुझे बिल्कुल समझ नहीं

आती थी लेकिन मानने के अलावा कोई चारा भी नहीं था। इम्तेहान पूरे होने तक यहाँ रहना जरूरी था।

वैसे भी शहर में मेलजोल मतलब तक ही सीमित रहता है किसी को भी दूसरे से बात करने की फुर्सत नहीं। बाजार में खूब भीड़ होती थी लेकिन पहचानने वाला कोई नहीं। गर्मियाँ शुरू होने से कुछ पहले गाँव जाने का तय हुआ। मेरे पैरों पर जैसे पंख लग गये, पिताजी गाँव छोड़ने के लिए साथ आये और पाँच-सात दिन रह कर वापिस हो गयेमेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। माँ का दुलार उनके हाथ का बना खाना और उनकी छाती से चिपक कर सोना, ऐसे उल्लास से भर देते कि हर पल उनके साथ रहने का मन करता। मैं घर के बड़े बेटे की पहली संतान, वह भी बेटा, सबसे बड़ा होने से सबका दुलारा था। माँ की आँखों का तारा, मांजी भी कभी मुझे आँखों से ओझल नहीं होने देती। बीच-बीच में हुक्के की गुड़गुड़ाहट के साथ दादा जी के मजेदार किस्से और शाम के वक्त दादी की कहानियाँ, दिन में डंगर चुगाने के लिए खेतों से सटे जंगल में जाना और दोस्तों के साथ मौज मस्ती, खेलकूद और रामलीला की नकल के संवाद, समय का पता भी नहीं चलता। गाँव की कोई बड़ी बूढ़ी जब मिलती तो पाँचों उंगलियाँ मिलाकर मेरी ठोढी को छूती और फिर उन उंगलियों को चूमती, कोई-कोई तो रोट या अरसा (गढ़वाल की परम्परागत मिठाइयाँ) भी खिला देते। छुट्टी के दो महीने मांजी के साथ गाँव में ऐसे बीत गये जैसे बस एक दो दिन ही हुये हों। इधर घर में मेरी शहर वापसी की तैयारी चल रही थी कि किसके साथ और कैसे जायेगा क्योंकि लेने के लिए पिताजी नहीं आ रहे थे और मांजी को गाँव में ही रहना था। रात को सोते समय मुझे छाती से चिपकाकर मांजी ने मुझे आँसुओं से भिगो डाला। मुझे लग गया कि कुछ तो गड़बड़ है। सुबह जागने पर पता लगा कि मुझे अगले दिन ही अन्य परिवार के ताऊजी के साथ शहर वापिस जाना है।

हमारे गाँव से देहरादून आने के लिए बस सुविधा तो थी लेकिन तीन मील दूर नागनी से, वहाँ तक पैदल आना होता था। उस समय सड़कें संकरी थी और गेट सिस्टम चलता था। नागनी पहला गेट पड़ता था जहाँ से चढ़ने वालों की भारी भीड़ रहती। बसें टिहरी से ही पूरी भर कर चलती थीं और नागनी में कोई नही उतरता था, सीटें मिल पाना भारी कठिन होता था। सीट की इंतजार में कई बार दो-दो, तीन-तीन दिन तक नागनी में बासा (रात का ठहराव) करना पड़ता। बसों में आगे

से पीछे की ओर फर्नेनुमा सीटें होती थी जिन पर लोग आमने सामने बैठते थे और बहुत सारे लोग उल्टियाँ करते मिलते। ऐसी परेशानियों को देखते हुए लोग बस के स्थान पर परम्परा गत पैदल मार्ग से यात्रा करना बेहतर समझे थे। इससे पैसे की भी बचत हो जाती थी। इस मार्ग से देहरादून 30-32 किमी बैठता था और अगले दिन वहां पहुंचना होता।

गाँव से अकेले ताऊजी ही शहर जाने वाले थे। इसलिए मुझे उन्हीं के साथ भेज दिया गया। ताऊ जी बस से जाने को तत्पर नही थे लेकिन मांजी ने अनुनय विनय कर उन्हें इसके लिए तैयार कर लिया। सुबह सवेरे जगाकर मुझे तैयार कर दिया। साथ में थैले में गहथ (कुलथ की दाल) के भरे हुए परांठे भी रख दिए कि रास्ते में भूख लगेगी। गाँव से एक-डेढ मील दूर धार के मोड़ तक मांजी मुझे छोड़ने आयी। ताऊ जी साथ थे ही, ताई जी भी वहाँ तक आयी। सुबह तक तो मैं खुश था, लेकिन मांजी साथ नहीं जा रही यह पता चलते ही मैं रोने लगा मांजी ने बहुत समझाया कि वे भी जल्द ही शहर आ जायेंगी, किन्तु मुझे विश्वास नहीं था। मैं उनसे चिपट गया कि मैं नहीं आऊंगा, माँ जी की आंखों से आंसू टपकने लगे। मुझे अपने से अलग रख पाना सरल नहीं था। ताई जी ने किसी तरह मुझे अपनी ओर खींचा और मेरा हाथ ताऊजी के हाथों में थमा दिया। मुझे माँ पर बहुत गुस्सा आया कि मेरे साथ क्यों नहीं आ रही। जो मन में आया बकने लगा कि 'आगे कभी मेरा मुंह नहीं देखेगी, समझ ले कि तेरा बेटा मर गया है। तू सबसे गन्दी माँ है' साथ में कुछ धमकियाँ भी दे दी कि रास्ते में नदी में कूद जाऊँगा, बस से छलांग लगा दूंगा।

ताई जी हैरान थी, देखो तो इस छोकरे को। इतना छोटा और कैसी कैसी बातें उन्होंने माँ के कंधे थपथपाकर उन्हें संभालने की कोशिश की। माँ ने मुँह में

कपड़ा रख लिया कि मुझे उनका रोना दिखाई न दे। ताऊ जी मुझे थैला समेत खींच कर आगे बढ़ गये। मैं रोते सुबकते उनके साथ चलने लगा, रह-रह कर पीछे देख लेता, मांजी वहीं धार पर खड़ी रहीं। चादर से मुँह ढके हुए। धीरे-धीरे मैं उनकी आँखों से ओझल हो गया। मैं बहुत दुखी था किन्तु मांजी कितनी दुखी होगी, इसका कोई अनुमान नहीं था। मेरी चुभती बातों ने निश्चय ही उन्हें छलनी कर दिया होगा।

नागनी में बसें नहीं थीं, पता लगा कि वे पीछे से ही खचाखच भर कर आ रही हैं लोग तीन-तीन दिनों से वहाँ पड़े थे। बच्चों के स्कूल खुलने की वजह से सबको शहर जाना था आगे दो-तीन दिन तक बस में बैठने की बारी आने की उम्मीद नहीं थी। मैं खुश हो गया कि अब शहर जाने से बच जाऊँगा लेकिन ताऊ जी ने दूसरा रास्ता निकाल लिया कि पैदल रास्ते चल पड़ेंगे, इससे वे पैसे भी बच जाएंगे जो माँ ने उन्हें किराये आदि के लिए दिये थे। उन दिनों ऐसी यात्रा सामान्य बात थी और ताऊजी इसके अभ्यस्त थे। मैं छोटा था लेकिन ताऊ जी को भरोसा था कि धीरे-धीरे ही सही लेकिन इतनी दूरी मैं तय कर लूंगा। वे मुझे लेकर नागनी से पैदल रास्ते पर बढ़ गये।

ताऊ जी को मेरा खयाल था इसलिए वे थोड़ी-थोड़ी दूरी पर किसी के मिलने पर वे परिचय बढ़ाने लगते शकिस गांव के हैं श्रीमान? घर में कौन-कौन हैं? बच्चे कहाँ-कहाँ ब्याहे हैं? घर में पशु कितने हैं? वगैरह। जवाब मिलने पर कुछ और सवाल और अपना परिचय देना, ताऊजी खूब मजेदार बातें करते और बीच-बीच में मजाक भी। मुझे इससे सुस्ताने का मौका मिल जाता और कुछ जानकारी भी। उन दिनों जगह-जगह ताजे पानी के स्रोत भी थे। बीच-बीच में पानी पीने के लिए रुक जाते। इस सबसे थकावट महसूस नही होती थी और कितनी दूरी तय कर ली, पता ही नहीं चलता था। ताऊजी के पास अपना थैला था जिसमें कोदे के सात-आठ टिक्कड़ (मंडुवे की मोटी रोटियां) थी और मेरे पास भरे परांठों वाला अपना थैला। दोपहर का खाना इसी से होना था और यह रात को भी काम आ सकता था इसलिए चिन्ता की कोई बात नहीं थी। माँ की याद पीछे छूट कर अब रास्ते के दृश्य मन पर छाने लगे थे। रास्ते में बड़े छोटे गाँव, लहलहाते सीढ़ीनुमा खेत, बांज और बुरांस के जंगल, सरसराती हवा और छोटी-बड़ी पहाड़ियों की चोटियां, सब कुछ मनोरम था।

बचपन में कई बातें अनायास सीखने को मिल जाती हैं, जैसे चलते समय कोई छींक मार दे तो अपशगुन होता है, या खाली बर्तन दिख जाये तो भी अच्छा

नहीं होता। इसके विपरीत रास्ते पर भरा हुआ बर्तन लिए कोई महिला दिख जाये तो वह बहुत शुभ माना जाता है। संस्कार गहरे थे अथवा बात मन में बैठी थी इसलिए मुझे याद थी। रास्ते में एक महिला भरा हुआ बंठा (पीतल की गागर) लिए दिख गयी। माँ ने रास्ते के लिए कुछ पैसे दिये हुए थे। मैंने महिला को झुकने का इशारा कर पैसे उसके बंठे में डाल दिये। महिला ने जमीन छूकर हाथ माथे से लगा आभार जताया और आगे बढ़ गई। ताऊजी ने यह सब देखा और बिगड़ पड़े कि मैंने यह क्या कियामैं हैरान था समझ नहीं पाया कि क्या गड़बड़ हो गयी। ताऊजी ने बताया कि महिला दलित वर्ग से थी, उन्होंने यह उसके हाव-भाव से जान लिया था।

क्या इसे फेंक दूं? कंधे पर लटके थैले को उतारते हुए मैंने ताऊजी से पूछा। वे बड़े थे और मुझे उन्हीं से निर्देश लेना था। अभी रहने देआगे किसी को दे देंगे। वैसे इनका बिगड़ा क्या होगा? तूने तो बंठे में ही पैसे डाले थे? ये तो अच्छा शगुन है खाना फेंक कर इसे अपशगुन क्यों बनायें ? ताऊजी ने मेरी ओर देखा। परांठे माँ ने बहुत प्यार से बनाये थे, इन्हें मैं भी यों ही नहीं त्यागना चाहता था। मैंने गर्दन हिला कर सहमति दे जता दी।

हम लोग शहर जा रहे हैं, वहाँ यह सब कौन सोचता है? होटलों में तो सब साथ खाते हैं, कौन साथ बैठा है, किसने बनाया, जानते तक नहीं? तो हम ही क्यों परेशान हों। ताऊजी ने अपनी मंशा जाहिर कर दी। आगे जाकर पानी का स्रोत आया गया, ताऊजी ने वहीं मेरा थैला खुलवा लिया परांठे स्वादिष्ट थे और पर्याप्त भी, ताऊजी तृप्त हो गये। दरियादिली दिखाते हुए उन्होंने कोदे के टिक्कड़ वहाँ से होकर वापसी कर रहे खच्चर वालों को बांट दिये।

लगभग 24 मील चल चुकने के बाद रात का अंधेरा छाने लगा ताऊ जी ने पास के ही एक गाँव में ठहरने का निश्चय किया। यहाँ उनकी रिश्तेदारी थी। परिवार वालों ने खूब आवभगत की, खासतौर पर मेरी, क्योंकि मैं छोटा होते हुए भी इतनी दूर पैदल चला था, वे इसके लिए मेरे माता-पिता को भी सराह रहे थे। इस पर मुझे फिर से माँ की याद आ गयी, किन्तु थकान ने इस ओर अधिक नहीं सोचने दिया।

अगले दिन दोपहर बाद हम शहर पहुचँ गये, पूरा माजरा जानकर पिता जी को बहुत गुस्सा आया कि बच्चे को इतना पैदल चलाया। वे ताऊ जी पर बहुत

बिगड़े पर साथ ही मेरे इतना चल लेने पर चकित थे। ष्अब भी इसे बच्चा कह रहा है। इसके साहस को दाद दे, इसने हिम्मत नहीं दिखाई होती तो अब तक नागनी में ही पड़े होते। ताऊजी ने मेरी तारीफ शुरू कर दी।

ताऊजी के साथ पैदल चलने के अनुभव ने मुझे आत्मविश्वास से भर दिया। माँ की कमी तो अब भी खलती थी, किन्तु याद उतनी नहीं सताती थी पिताजी द्वारा दिया गया यह भरोसा कि वे मुझे लेकर जल्दी ही गाँव वापिस जायेंगे और माँ को साथ लेकर आयेंगे, बहुत सहारा देता था। दो-तीन महीने इसी भरोसे कट गये दशहरा निबटते ही गाँव जाना तय हो गया।

पिताजी ने बस पकड़ी और मुझे लेकर नागनी से सात मील आगे चम्बा पहुँच गये। जहाँ का बाजार बड़ा था और गाँव का रास्ता थोड़ा सरल और उतार वाला। पिताजी के पास कपड़े-लत्ते की पोटली थी और मेरे पास खाने पीने का सामान, मिठाइयाँ वगैरह रास्ते में फिर से एक महिला सिर पर बंठा लिए सामने से आती दिख गई वह दलित थी या सवर्ण, यह तो मैं तय नहीं कर पाया लेकिन इतना तय कर लिया कि पिछली बार वाली गलती नही दोहरानी हैमैं आगे बढ़ गया एक डेढ मील चलकर बहेड़ा का छोटा बाजार आ गया। पिताजी वहाँ एक चाय की दुकान पर रुक गये वहाँ अंदर एक और ताऊजी बैठे थे जो हाव-भाव से कड़क नजर आ रहे थे।

दुकान के बाहर पिताजी को कई सारे परिचित मिल गये उनमें हमारे गाँव के हजामत बनाने वाला और शादी ब्याह में पुड़खियाँ (दोने पत्तल) बनाने वाला दलित भी दिख गया। उसने दूर से ही 'स्यमनान् ठाकुर' (सेवा मानना श्रीमान) कह कर अभिवादन किया। पिताजी ने उसका हालचाल जानकर उससे चाय पीने के लिए पूछा उसने हामी भर दी और दुकान के बाहर रखे बैंच पर बैठ गया ताऊ जी को उसका ऊपर बैठना सहन नहीं हुआ और वे आपत्ति जता कर वहाँ से चले गये।

'आज पता नहीं इन्हें क्या हो गया।' दुकानदार ताऊजी का नाम लेकर बोल पड़ा। रोज तो इसी से लेकर बीड़ी पीते हैं। पिताजी कुछ न बोल आगे बढ़ गये। आगे चलकर चढ़ाई आ गयी और हम सुस्ताने बैठ गये। पिताजी ने मुझे समझाया ऐसी बातें सुनकर परेशान नहीं होते। जातिवाद हर कहीं है। गाँवों में फुटकर है जबकि शहरों में थोक में होता है। यहाँ दिखाकर होता है और वहाँ छिपाकर । पिताजी की बात मैं तुरंत समझ गया, पिछली बार ताऊजी को देख जो चुका था।

उनियालों का मिथिला से गढ़वाल आगमन : एक अध्ययन

उनियालों के अतीत के विषय में मुख्यत: तीन मान्यतायें प्रचलित हैं: पहली, उनका सम्बन्ध 'ओणी' गांव (पौड़ी गढ़वाल) से है, दूसरी, वे बिहार से आये 'ओझा' (और/अथवा 'झा') मैथिल ब्राह्मण हैं और तीसरी, वे देवी (भगवती राजराजेश्वरी) के उपासक हैं। इसके अतिरिक्त एक मान्यता यह भी है कि उनियाल 13वीं/14वीं शताब्दी में (अन्य मान्यता के अनुसार 839 ईस्वी में) गढ़वाल में आये, जयानन्द और विजयानन्द नाम के दो सगे अथवा अलग-अलग गोत्रों (कश्यप एवं भारद्वाज) वाले ममेरे-पुफेरे (अन्य मान्यता के अनुसार चचेरे, ओझा और झा) भाइयों के वंशज हैं। एक प्रचलित कथानक यह है कि मिथिला से आये एक तांत्रिक (ओझा) बालक के चमत्कार से अत्यन्त प्रभावित होकर गढ़वाल के तत्कालीन महाराजा ने उसे भूमि दान देकर यहीं बस जाने का अनुरोध किया, वही बालक उनियालों का पूर्वज है। एक अन्य कथानक यह है कि मिथिला से आये ब्राह्मणों का गढ़वाल के तत्कालीन शासक से श्रेष्ठत्व को लेकर कुछ विवाद हुआ। ब्राह्मण आगे जाना चाहते थे, जो राजा को स्वीकार नहीं था। अपने-अपने आराध्य पर भारी भरोसे के चलते दोनों अपने पक्ष पर अड़े रहे और दोनों की निष्ठाओं का मान रखते हुए वहां एक नदी प्रकट हो गई। दोनों ने इसे ईश्वर का न्याय माना, राजा ने ब्राह्मणों को गुरु मान कर स्थान (जागीर) प्रदान कर दी और वे यहीं (श्रीनगर के निकट) बस गये, कालान्तर में वे ही उनियाल (ओझा गुरु) कहलाये। एक अन्य कथानक यह है कि मिथिला से आये विद्वान ब्राह्मण के साथ उनकी पत्नी व दो छोटे बालक भी थे, इनमें एक उसकी बहिन का पुत्र था, जिसे उसकी पत्नी ने अपना दूध पिला कर पाला था। उनियालों के दो गोत्र होने के पीछे इसे आधार बताया जाता है। इन कथानकों के पर्याप्त प्रचलन में होने पर भी विद्वानों में एकमत नहीं है, किन्तु पहली तीन मान्यताओं पर प्राय: सर्वसम्मति है।

उनियाल मिथिला से गढ़वाल में आये थे, इस सर्वमान्य धारणा के चलते यह उत्सुकता होना स्वाभाविक है कि मिथिला में वे किस स्थान से व कब आये थे तथा वहां इनकी स्थिति क्या और कैसी थी। इसे समझने के लिए पहले मिथिला को जान लें। नेपाल की तराई और उत्तरी बिहार से मिल कर बना क्षेत्र मिथिला कहलाता है। यह चार नदियों से घिरा हुआ है, पूर्व में कोसी (महानन्दा), पश्चिम में गण्डक, दक्षिण में गंगा और उत्तर में बागमती। प्रशासनिक दृष्टि से यह इलाका अब 'तिरहुत' के नाम से जाना जाना जाता है। कोसी के पूर्व में स्थित जिलों को भी

मिथिला का ही विस्तार माना जाता है, इसके अतिरिक्त नेपाल के दस जिले भी मिथिला में सम्मिलित किये जाते हैं। मिथिला के निवासियों को मैथिल कहा जाता है और उनकी भाषा मैथिली है।

दैवीय संयोग से इन पंक्तियों के लेखक को बिहार में दो वर्षों तक रहने का अवसर मिला। मिथिला व उससे मिले क्षेत्रों में (लगभग 25 स्थानों पर) लेखक ने छः माह से भी अधिक समय बिताया है। देवी की कृपा ही मानी जानी चाहिए कि मिथिला में निरीक्षण के लिए लेखक को मिली पहली शाखा (भारतीय स्टेट बैंक की) 'राहिका' थी जो राजराजेश्वरी स्थान से कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर है और उसके तत्कालीन शाखा प्रबन्धक 'झा' ही थे। वहां लेखक को माँ भगवती राजराजेश्वरी के दर्शन का भी सौभाग्य मिला। माँ राजराजेश्वरी के विषय में मैथिली में यह कहा गया है :

''मधुबनी के 12 किलोमीटर उत्तर में बहरवन बेलाही गांव के निर्जन स्थान

में बिंदुसर पोखर (तालाब) के पास माता राजराजेश्वरी विराजमान हैं, (मधुबनी जिले के खजौली प्रखण्ड बेलही गांव में स्थित)। यह मन्दिर 'राजराजेश्वरी स्थान' के रूप में आदिशक्ति मातृदेवी पार्वती एवं शिव के रमणीय स्थल के तौर पर आदिकाल से ही प्रसिद्ध है। तालाब के किनारे बरामदे की सीढ़ियों के ऊपर गर्भग्रह स्थित कक्ष में शालिग्राम शिला के गौरीशंकर की विलास मुद्रा में युगल मूर्ति के दर्शन होते हैं। माँ राजराजेश्वरी के इस धाम में परब्रह्म की महाशक्ति के रूप में प्रागैतिहासिक काल से पूजा होती रही है। कहा जाता है कि बौद्ध काल में ब्राह्मण धर्म के विरोध होने के कारण देव विग्रह को क्षति पहुँचाई गई थी और उसे पास की चंद्रभागा नदी में डाल दिया गया था। कालांतर में फणिवार मूल के वत्स गोत्रीय मंगरौनी ग्रामवासी शिवभक्त महात्मा रूपी उपाध्याय जी ने दैवकृपा से इस युग्म मूर्ति को गौरीकुंड (चंद्रभागा) नदी से निकाल कर पुनः स्थापित किया। राजराजेश्वरी सृष्टि, स्थिति एवं प्रलय की कर्ता करुणामय श्रृंगारिक एवं ओजस्वी रूप में श्रद्धालुओं के सब प्रकार के दुखों को निवारण करने के लिए विराजमान हैं और सब भक्तों को आशीष देती हैं। भक्त लोगों में विश्वास है कि शारदीय नवरात्र में जो लोग माँ के दरबार में पहुंचते हैं, उनकी सारी मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती हैं।''

विषय में आगे बढ़ने से पहले मैथिल ब्राह्मणों के बारे में जान लेना उचित रहेगा। विषय काफी विस्तृत है, क्योंकि स्कन्द पुराण के सह्याद्री खण्ड के अनुसार भारत भर में दस ब्राह्मण समुदाय फैले हुए हैं, देश के भूगोल के क्रम में इन्हें दो समूहों में बांटा गया है। इनमें सारस्वत, कान्यकुब्ज, गौड़, उत्कल व मैथिल उत्तरी समूह में सम्मिलित हैं जबकि दक्षिणी समूह में द्रविड़, तैलव्य, कर्नाट, मध्यदेश और गुर्जर समुदायों का समावेश होता है।

मिथिला क्षेत्र में ब्राह्मण कई शताब्दियों तक बसते रहे। बृहदारण्य कोपनिषद बताता है कि राजा जनक ने एक बार वेदों में पारंगत ब्राह्मणों की श्रेष्ठता जानने के लिए एक मिथिला बुलाये गए थे। विद्वानों का मानना है कि 'शकद्वीप' (बंगाल एवं उड़ीसा के समुद्रतटीय क्षेत्र) के ब्राह्मणों का एक समूह 'सूर्य उपासना' के लिए उत्तरी बिहार में आकर बसा था। सन 850 में बंगाल में राजा देवपाल के निधन तथा पाल साम्राज्य के क्षीण होने पर हिंसा व अस्थिरता के वातावरण में पूर्वी भारत के कई हिस्सों से ब्राह्मणों का मिथिला की ओर पलायन हुआ। पुस्तकों में 11वीं से 13वीं शताब्दी तक त्रिभुक्ति (तरहुत) के कई राजाओं द्वारा कोलान्च (सम्भवतः कन्नौज) के ब्राह्मणों को आमंत्रित किये जाने भी उल्लेख है। ऐसा माना जाता है कि 14वीं शताब्दी तक मिथिला में ब्राह्मणों का बाहुल्य हो गया था और विशुद्ध ब्राह्मणत्व सुनिश्चित करने के लिए वहाँ इनका (गोत्र व जाति के आधार पर) सारिणीकरण

होने लगा। महाराजा हरिसिंहदेव के समय इसे मैथिल ब्राह्मणों के 'पंजी प्रबन्धन' के रूप में मान्यता मिली जो विवाह आदि प्रयोजनों में उपयोगी भूमिका निभाने लगा।

मैथिल ब्राह्मण समाज अनेक उपाधियों से अलंकृत था, जैसे ओझा, झा, मिश्र, पाठक, चौधरी, शर्मा, प्रतिहस्त, ठाकुर, कुमर, सिंह, शुक्ल, पादरी, खाँ, राय, सादा, ईश्वर, मंडल, सरस्वती, उपाध्याय, आचार्य व स्नातक आदि। इनमें से जो अध्यापन वृति करते थे, उन्हें उपाध्याय (प्राकृत ब्याकरण के अनुसार झा तथा ओझा उपाध्याय का अपभ्रंश हैं) की उपाधि दी गई थी, इसी उपाध्याय से ओझा एवं ओझा से झा हुए। इनमें से विशिष्ट विद्वानों को महामहोपाध्याय की पदवी प्राप्त हुई।

मिथिला में शताब्दी के आसपास ओइनीवार ओझा ब्राह्मणों का शासन रहा है जो ओइनी नामक स्थान के रहने वाले थे। 'ओणी' से 'ओइनी' की साम्यता के चलते यह अनुमान है कि इनका आपस में कुछ सम्बन्ध हो सकता है। उल्लेखनीय है कि गढ़वाल में यह मान्यता भी प्रचलित है कि प्रसिद्ध कवि विद्यापति और राजनीतिज्ञ / अर्थशास्त्री चाणक्य (कौटिल्य) उनियालों के पूर्वजों में से थे। महाकवि विद्यापति ने अपनी काव्य रचना 'कीर्तिलता' में ओइनी एवं 'ओइनीवार' के विशय में कहा है कि ओइनी राजवंश पूरी दुनिया में प्रसिद्ध है। कोई ऐसा व्यक्ति नहीं, जो इसकी सेवा न करता हो। अन्य कहीं भी ब्राह्मण व राजा एक ही नहीं होते।

इस विषय पर पंजीकार पं. मोदानन्द झा द्वारा लिखित 'मूल पंजी' में यह

वर्णन मिलता है : इसमें 'कश्यप' गोत्र के मूलों का वर्णन है जिसमें 'ओइनी' मूल सम्मिलित है। ओइनी को सदैव श्रेष्ठ अैर स्वधर्मप्रवर्तक के रूप में वर्णित किया गया है। पंजी प्रबन्धन में सामवेद की कौथुमा शाखा के अन्तर्गत एक और यजुर्वेद की माध्यन्दिनी शाखा के अन्तर्गत उन्नीस गोत्र दिये गये हैं जिनमें कश्यप गोत्र (29 मूल स्थान एवं कश्यप, अवत्सर व नैध्रुव प्रवर) तथा भारद्वाज गोत्र (9 मूल स्थान एवं भारद्वाज, अंगिरस व बार्हस्पत्य प्रवर) सम्मिलित किये गये हैं। 'पंजी प्रबन्धन' का विषय बहुत विशाल होने व इस तक उचित पहुंच न होने के चलते गोत्रों के विषय में यहां इससे अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता, फिर भी अवलोकन से यह विषय बहुत विशाल होने व इस तक उचित पहुँच न होने के चलते गोत्रों के विषय में यहाँ इससे अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता, फिर भी अवलोकन से यह सामने आता है कि कश्यप गोत्र के 'ओइनिहा' की तेरहवीं पीढ़ी के कीर्तिनारायण का विवाह भारद्वाज गोत्र (बेलौंच मूल) के परमानन्द की पुत्री से हुआ था। यह विवरण दोनों गोत्रों के सपिण्ड नहीं होने का प्रमाण देता है।

एक बात बहुत स्पष्ट है कि 'कश्यप' गोत्र के अन्तर्गत 'ओइनी' मैथिल ब्राह्मणों का एक मूल है और 'झा' एवं 'ओझा' मैथिल ब्राह्मण जातियां हैं। ओइनी, ओणी, ओइनिवार और उनियाल में साम्यता (अपभ्रंश व ग्राम्यीकरण सहित) को देखते हुए यहां 'ओइनी' पर ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है। उपरिलिखित 'मूलपंजी' में कहा गया है कि 'उमापति का पुत्र विद्यापति, उसका बेटा जयपति, उसका बेटा हिंगुक, उसका बेटा ओइनिहा हुआ जो ओइनी गाँव का संस्थापक है। उसका बेटा अतिरूप, उसका बेटा गोविंद, उसका बेटा लक्ष्मण, उसके बेटे राजा पंडित कामेश्वर, रामेश्वर, हरिश्वर, त्रिपुर, तेवाडी, सलखन और गोधिका हुए।'

पुरानी पुस्तकों में 'ओइनी' ग्राम की भौगोलिक स्थिति पर कोई जानकारी उपलब्ध नहीं मिलती, सिवाय इसके कि इसे किसने बसाया था। वर्तमान मिथिला में भी इस नाम का स्थान नहीं मिल पाया है किन्तु तिरहुत (पुरानी मिथिला में सम्मिलित क्षेत्र) इलाके के सिवान जिले में दरौली ब्लॉक के अन्तर्गत 120 परिवारों के साथ 705 जनसंख्या (2011 की जनगणना के अनुसार) वाले एक अल्पज्ञात गांव का पता अवश्य चला है, उसकी इतनी ही विशेषता है कि गांव का साक्षरता प्रतिशत (73.91) व लैंगिक अनुपात (1143) है जो बिहार के साक्षरता औसत (61. 80) व लैंगिक अनुपात (918) से काफी ऊँचे हैं। कोई अन्य उल्लेखनीय जानकारी गाँव के विषय में नहीं मिल पाई।

यदि विद्वानों के मत को मानें तो यह हो सकता है कि इस गाँव के पुराने लोगों को राजा के द्वारा अन्यत्र (बेहतर स्थान/ अधिक उपजाऊ) भूमि (दान/

जागीर/ जमींदारी आदि के तौर पर) उपलब्ध करा दिये के कारण वे यहां से चले गये हों। ऊपर उल्लेख भी है कि तिरहुत में ओइनी के ओनिवरों का शासन रहा है जो ईस्वी1327 से 1532 तक माना जाता है। यदि हम ऊपर माँ राजराजेश्वरी के मन्दिर के स्थान, कश्यप गोत्र तथा भारद्वाज गोत्र के मूल स्थानों (में से कुछ) को जोड़ते हुए खोज करते हैं तो इनकी अवस्थिति बिहार के मधुबनी जिले के खजौली (तहसील एवं ब्लॉक) में मिल जाती है। दोनों गोत्रों के मूल स्थानों का आस-पास होना और भगवती राजराजेश्वरी के मन्दिर से निकटता से यह संकेत काफी मजबूती से मिलता है कि गढ़वाल में उनियालों का आगमन इसी क्षेत्र से हुआ है।

13वीं व 14वीं शताब्दी के दौरान तिरहुत पर कई बाहरी आक्रमण हुए जिनमें राज्य तथा इससे जुड़े कुछ इलाके नासिर शाह, रुकनुद्दीन बरबक शाह, सिकन्दर लोदी, अल्लाउद्दीन हुसैन शाह और उसके पुत्र नसरत शाह के अधीन भी रहे और अन्ततः ओनिवरों का सामाज्य समाप्त हो गया। बाहरी राजनीतिक दबावों के अलावा, ओनिवार परिवार ने भीतरी झगड़ों का भी सामना किया, क्योंकि तिरहुत शासक बनने के लिए भाई आपस में एक दूसरे से होड़ करते रहे। इस दौरान मिथिला यद्यपि भारत में ज्ञान का बहुत बड़ केन्द्र बन चुका था किन्तु निरन्तर राजनीतिक अस्थिरता बनी रही और विद्वानों को शासन का पर्याप्त संरक्षण उपलब्ध नहीं रह सका।

मिथिला में विद्वानों के बाहुल्य, राजनीतिक अस्थिरता में उन्हें राज्याश्रय न मिल पाने और देश के अन्य भागों में ज्ञान के प्रसार की इच्छा के कारण ब्राह्मणों ने इस अवधि में मिथिला से बाहर जाना आरम्भ कर दिया। सह्याद्री खण्ड में 16 ब्राह्मण परिवारों के मिथिला से गोमाचंल (आधुनिक गोवा) जाने का उल्लेख है। इसी प्रकार अन्य प्राचीन पुस्तकों में 75 परिवारों का 14वीं शताब्दी में व्रज (मथुरा-आगरा) जाने का वर्णन मिलता है। इन स्थितियों में इस बात की सम्भावना अधिक है कि मिथिला से विद्वान ब्राह्मणों का गढ़वाल में आगमन इसी दौरान हुआ हो।

ऊपर कहीं उनियालों के 839 ई. में मिथिला से आने की बात आयी है, किन्तु यह किसी भी दृष्टि से सन्तुष्ट नहीं करती, क्योंकि उस अवधि का मिथिला के इतिहास में कहीं उल्लेख नहीं है, इसे 13वीं शताब्दी से आरम्भ माना जाता है और पंजी प्रबन्धन 14 वीं शताब्दी में हुआ। कवि विद्यापति, जिन्हें उनियालों का पूर्वज माना जाता है, उनका कार्यकाल भी 14वीं शताब्दी रहा है। गढ़वाल के इतिहास में राजाओं की परम्परा भी राजा अजयपाल (1358 से 1370) से आरम्भ होती है, जिन्होंने देवलगढ़ को अपनी राजधानी बनाया था। उनियालों को लेकर

ऊपर दिये गये दो कथानकों में क्योंकि राजा की चर्चा (प्रभावित होने अथवा विवाद होने) है, अतः यह प्रायः सिद्ध है कि उनियालों का गढ़वाल आगमन इसके बाद ही हुआ है। भगवती राजराजेश्वरी की प्रतिष्ठा क्योंकि देवलगढ़ में हुई है, अतः यही तर्कसम्मत है कि उनियालों का आगमन देवलगढ़ के गढ़वाल की राजधानी रहने के दौरान ही हुआ है। यह बात भी तर्क की कसौटी पर खरी उतरती है कि मिथिला की 'ओइनी' व 'ओनियार' पृष्ठभूमि के चलते उन्होंने अपने बसने के स्थान का नामकरण भी 'ओइनी' किया हो सकता है जो ग्रामीण बोलचाल में 'ओणी' के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

ऊपर मैंने कहा है कि गोत्रों के विषय में अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता। ऐसे में उनियालों के दो गोत्रों के पीछे की वास्तविकता सामने नहीं आ सकती। मिथिला की पंजी पद्धति गोत्रों को लेकर किसी भी प्रकार के समझौते को नकार देती है, वहाँ इन्हें लेकर बहुत सारे वर्गीकरण हैं, उदाहरण के लिए 'सपिण्ड', 'सगोत्र' और 'सप्रवर' आदि। यह सर्वज्ञात है कि दोनों गोत्रों वाले उनियालों के बीच आपस में विवाह सम्बन्ध नहीं होते। ऐसे में मैथिल परम्परा के अनुसार इनके सपिण्ड होने की सम्भावना ही अधिक है। ऊपर दिये गये तीन कथानकों का संदर्भ लें तो दो ब्राम्हण बालकों के आने की बात की काफी सीमा तक पुष्टि हो जाती है। दो गोत्र होने के सम्बन्ध में यह सम्भावना ही अधिक है कि अन्य गोत्र के भाई (मामा, बुआ अथवा मौसी के बेटे) के साथ-साथ आने व साथ-साथ रहने के कारण स्थानीय समाज ने उन्हें सगा भाई मान लिया हो। उत्तरी बिहार के कुछ भागों मे भूस्वामी ब्राह्मणों की जातियों को 'भारद्वाज' गोत्र के अन्तर्गत भी रखा जाता है, जिनमें 'भूमिहार' ब्राह्मण विशेष तौर पर सम्मिलित हैं। भारद्वाज का सम्बन्ध यहां 'भूमिधर' (भूमिहार नहीं) ब्राह्मण से भी हो सकता है। सम्भव है कि गढ़वाल के राजा ने मिथिला से आये दो भाइयों में से एक को जागीर दी हो और दूसरे ने उसे भारद्वाज के रूप में मान्यता दी हो। इस विषय में अनुमान से अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता।

अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि मिथिला (बिहार के मधुबनी जिले के राहिका के पास कहीं) से ओइनी मूल के दो अलग गोत्रों (कश्यप व भारद्वाज) वाले ओइनीयार (ओझा व झा उपनाम के ब्राह्मण बटुक) पुफेरे-ममेरे भाई 14वीं शताब्दी में देवलगढ़ के राजधानी रहने के दौरान गढ़वाल में आकर तत्कालीन राजा के सौजन्य से बसे थे।

हिन्दी साहित्य में पर्यावरण चेतना के विविध आयाम

प्रकृति मानव के लिए आदि काल से ही कुतूहल का विषय रही है, इसके अनन्त विस्तार से चमत्कृत होने और इनके पीछे के रहस्यों तक पहुँचने का प्रयास भी मानव के विकास के साथ-साथ तीव्र होता रहा है। प्रकृति अपनी सुन्दरता से आकर्षित करती है, अपनी विविधता से सम्मोहित करती है और अपनी कृपा से अभिभूत भी करती है। यही कारण है कि प्रकृति कवियों, लेखकों व चित्रकारों की प्रेरणा बनते हुए प्रायः उनका केन्द्रीय विषय रही है। विश्व की किसी भाषा का साहित्य हो, प्रकृति का चित्रण प्रत्येक में मिलता है। भारत में तो प्रकृति पूजन की गहन परम्परा है जो वेदों व पुराणों से लेकर लोक गीतों तक में दिखाई देती है। पंच महाभूतों, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश को प्रकृति का उपहार मानते हुए इनकी पूजा की जाती है और शरीर को भी इन्हीं घटकों का संयोजन माना जाता है। प्रकृति को पूज्य मानने से यह रक्षणीय बन जाती है, जन्म देने वाली माता के समान, जिससे हमें पोषण मिलता है।

पर्यावरण की आधुनिक परिभाषा इसे हमारे जीवन को प्रभावित करने वाले सभी जैविक, अजैविक तत्वों, तथ्यों, प्रक्रियाओं और घटनाओं के समुच्चय से निर्मित इकाई मानी जाती है। पर्यावरण को मनुष्य के संदर्भ में परिभाषित किया जाता है, जिसमें मनुष्य को एक अलग इकाई और उसके चारों ओर व्याप्त अन्य समस्त वस्तुओं को पर्यावरण माना जाता है। एक प्रकार से वह भौतिक व नैतिक वातावरण का द्योतक है, अर्थात भौतिक एवं सांस्कृतिक दशाओं का सम्पूर्ण योग। भारतीय चिन्तन में इसका उल्लेख प्रकृति और पुरुष के रूप में होता है। अध्यात्म में जड़ को पुरुष और चेतन को प्रकृति माना गया है और सृष्टि को, विशेषकर पृथ्वी को, इन्हीं का संयोग माना जाता रहा है। चेतन के अन्तर्गत मनुष्य, पशु-पक्षी, कीट-पतंगादि रखे गये, तो जड़ के रूप में पाषाण और वृक्ष आदि माने गये, इन्हें स्थावर व जंगम में भी विभाजित किया गया। शास्त्रों का यह सैद्धांतिक पक्ष व्यवहार में आते-आते बदल गया और जड़ अर्थात पर्वत, वृक्षादि को प्रकृति तथा मनुष्य आदि को पुरुष कहा जाने लगा। साहित्य तक आते प्रकृति स्त्री स्वरूपा हो गई। जड़ और चेतन का भेद ही मिट गया, सब प्रकृति के अन्दर आ गये और मानव इससे बाहर होकर पुरुष कहा जाने लगा। इस भेद को पुरुष व स्त्री संज्ञक दिखाते हुए एक दूसरे का पूरक

बनाया जाता है। यहाँ उपभोग एवं पोषण के बीच पुरुष किसी प्रेमिका व माता का जो सम्बन्ध स्त्री के साथ बनाता है, कुछ वैसा ही प्रकृति को लेकर भी होता है।

भारतीय साहित्य में प्रकृति व पुरुष के सम्बन्धों की मिठास, और एक-दूसरे को भारतीय साहित्य में प्रकृति व पुरुष के सम्बन्धों की मिठास, और एक-दूसरे को लेकर बनते-बिगड़ते मनोभावों को लेकर काफी कुछ कहा गया है, चाहे वह प्रेयसी के रूप में हो अथवा पालनकर्ता को लेकर। हिन्दी साहित्य भारतीय चिन्तन के पक्ष को प्रकृति के मनोरम चित्रण के साथ आगे बढ़ाता है। प्रकृति को वह सत्यम-शिवम्-सुन्दरम का उद्घोष मानते हुए इसके संरक्षण की बात कहता है। शब्द रूप में साहित्य में पर्यावरण अथवा इसके साथ संरक्षण जैसे शब्दों का प्रचलन भले ही अधिक न हुआ हो किन्तु प्रकृति एवं सात्विकता पर बल देते हुए इसे सहेज कर रखने के उपक्रम हिन्दी साहित्य में अनेकों कवियों व लेखकों द्वारा हुए हैं। साहित्य की यह दृष्टि पर्यावरण की आधुनिक धारणा के काफी निकट है। जहां एक ओर मानव, उसकी भोगवृत्ति और बढ़ी हुई आवश्यकता है तो दूसरी ओर प्रकृति है, जिसमें पर्वतों, वृक्षों, नदियों, समुद्रों तथा धरातल के साथ-साथ पशु-पक्षियों एवं कीट-पतंगादि भी सम्मिलित हैं। प्राचीन काल में प्रकृति की विविधता एवं सुन्दरता ही नहीं, इन्हें संरक्षित करने का भी वर्णन मिलता है जो प्रकृति प्रेम के रूप में सामने आता है।

उदाहरण के तौर पर श्रीरामचरितमानस में महाकवि तुलसीदास कई स्थानो पर अपनी चौपाइयों में, जैसे

''नव पल्लव फल सुमन सुहाये'' (बालकाण्ड, 227),
''सैलु सुहावन कानन चारू'' (अयोध्या काण्ड, 132),
''विटप विशाल लता अरुझानी'' (अरण्य काण्ड, 38),
''विकसे सरसिज नाना रंगा'' (अरण्य काण्ड, 39) तथा
''सुन्दर वन कुसुमित अति सोभा'' (किष्किंधाकाण्ड,13)

में प्रकृति का बहुत मनोरम वर्णन किया गया है।

किष्किधा काण्ड की इन पंक्तियों से आगे लगभग 40 चौपाइयों में तो प्रकृति की कृपा और इसके कोप को लेकर कई उपमायें दी गई हैं, जो जनसामान्य का विलक्षण चरित्र चित्रण करती लगती हैं।

आधुनिक साहित्य में बीसवीं सदी के मध्य तक रचनाकारों ने इसी परम्परा

का अनुसरण जैसा किया है। प्रकृति का नैसर्गिक सौन्दर्य मन व मस्तिष्क ही नहीं, शरीर को भी किस प्रकार से प्रभावित करता है, 'वाणभट्ट की आत्मकथा' (स्व. हजारी प्रसाद द्विवेदी) में इसका वर्णन कुछ ऐसे किया गया है :

''इसी मनोरम सरोवर को देखकर उत्कण्ठित का चित्त भी विश्राम पा सकता है, विरही का हृदय भी शान्त हो सकता है, उन्मत्त का मस्तिष्क भी निर्मल बन सकता है, उकताये हुए मनुष्य को भी शान्ति मिल सकती है।''

'मधुशाला' के रचयिता (स्व. डॉ. हरिवंश राय बच्चन) ने 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' में प्रकृति (गंगा-यमुना) के योगदान को इस प्रकार याद किया है:

''उस जल धारा की आठ सौ मील लंबी यात्रा का, जो हिमालय की यमुनोत्री में जन्म लेकर मीलों श्रृंग-मालाओं के बीच चक्कर काटती, घने जंगलों में फिरती, चौरस मैदानों में उतरती, न जाने कितनी भूमि को उर्वरा बनाती, न जाने कितने खेतों को सींचती, अनेकानेक ग्राम, नगर, महानगर, को धन्य करती, कितनों को पावन तीर्थों का गौरव देती, सतत संवेग प्रवहमान, अंत में क्रमशः क्वचित् श्रांत-शिथिल होती गंगा के वक्षस्थल से संयुक्त, भुजपाशों में आबद्ध, उसी में खो जाती है, उन्हीं में समा जाती है।''

प्रकृति एवं पुरुष के सम्बन्ध को स्व. रामधारी सिंह 'दिनकर' ने अपने कालजयी महाकाव्य 'उर्वशी' में इन पंक्तियों में व्यक्त किया है :

'' मोह मात्र ही नहीं, सभी ऐसे विचार बन्धन हैं,
जो सिखलाते हैं मनुष्य को, प्रकृति और परमेश्वर
दो हैं, जो भी प्रकृत हुआ, वह दूर हुआ ईश्वर से,
ईश्वर का जो हुआ, उसे फिर प्रकृति नहीं पायेगी।''

'अनामदास का पोथा' में स्व. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने नायिका 'जाबाला' के मुख से प्रकृति का वर्णन इन वाक्यों में करवाया है :

''जानती है, अनादि काल से तितली फूल के इर्द-गिर्द चक्कर काट रही है, लता वृक्ष को आच्छादित करके उल्लसित हो रही है, बिजली मेघ के साथ आंख-मिचौनी खेल रही है, कुमुदिनी चन्द्रमा की प्रतीक्षा में व्याकुल है। किसी ने तो इन बातों की ओर ध्यान नहीं दिया, किसी ने इसका रहस्य समझने का दावा नहीं किया, सब कुछ तो चुपचाप अपनी-अपनी गति से चल रहा था। कहाँ जाने एक

कवि आ गया। उसने चिल्लाकर कहा, 'मुझे मालूम है, मैं इस गुप-चुप चल रही प्रेम-वार्ता को पहचान गया हूं सुनो संसार के स्त्री-पुरुषों, मैं आंखों की भाषा जानता हूँ, मैं भुजाओं की भाषा जानता हूँ, मैं लुका-चोरी की भाषा जानता हूँ, मैं सब जान गया हूँ।''

यह सर्वज्ञात है कि साहित्य समाज का ही दर्पण है। समाज की स्थिति 19वीं शताब्दी में ऐसी थी कि तब तक औद्योगिक व नगरीय विकास इतना व्यापक नहीं था, सड़कों के विस्तार, नदियों पर बांधों के न बनने व किनारों पर बसावट न होने के कारण उनमें संकुचन भी नहीं था। वनों का व्यापारिक दोहन न होने से उनके साथ-साथ वन्यजीव भी सुरक्षित थे, उष्मा के सीमित उपयोग के कारण वायुमण्डल भी सुरक्षित था, अत: भयभीत होने का उस समय कोई विशेष कारण नहीं था। सामान्यत: लोक शिक्षा के तौर पर जो कुछ सामने आता था, साहित्य में भी उसी का उल्लेख होता था। 20वीं शताब्दी में अनेकों कारणों से प्रकृति पर खतरा दिखने लगा, इसके उत्तरार्द्ध में तो यह भयावह हो गया तथा 21वीं शताब्दी में चिन्ता और बढ़ गई। यह सारी स्थिति साहित्य में कई स्तरों पर प्रकट होने लगी, इस पर कवितायें, कहानियां और अन्य रचनायें सामने आ रही हैं। रचनाकारों ने अपनी लेखनी से इस ओर जो प्रयास किया है, उसकी कुछ बानगी यहां दी जा रह है :

डॉ. कीर्ति केसर अपने आलेख 'मैं पहाड़! मेरी आवाज सुनो' में कहती है:

''... मैं पहाड़ उसी का हिस्सा हूँ, जब इसको कोई हानि होती है तो शिव कुपित होते हैं और ताण्डव करते हैं, यानि विनाश होता है....'

डॉ. डीएन प्रसाद अपनी कविता 'गंगाजल' से यह आह्वान करते हैं :

''रे मनुष्य! अब भी सोच, जल ही जीवन है।
गंगा तुम्हारी माँ है, माँ को प्रदूषित करते हैं भला?''

अनुमय मिश्र ने अपने लेख 'संसार सागर के नायक' में तालाब बनाने की परम्परा पर खोजपूर्ण विवरण देते हैं कि देश के सभी भागों में, राजस्थान, कच्छ, मालवा, कोंकण, उड़ीसा, बिहार और दक्षिणी राज्यों में जल संरक्षण के लिए कैसे सैकड़ों हजारों तालाब बनाये जाते रहे हैं।

'कम्पनी का पानी' कहानी में सुश्री कमलेश चौधरी पक्षियों के माध्यम से बताती हैं कि आम जन के लिए उपलब्ध पानी को बोतलों में भर कर उसे किस

प्रकार दुर्लभ बना दिया गया है, यहाँ तक कि पक्षी तक इसके लिए तरस रहे हैं।

'पर्यावरण इतिहास से भूगोल तक' में कवयित्री शुभद्रा पांडेय कुछ यों कहती है–

"धरती उगलेगी लावा, बादल तरसेंगे बूंदों को
नदियों की रेत पर, बेहोश होगी नावें
पेड़ों की सूखी डाल पर, नहीं उगेंगे जंगल"

लावण्या शाह अपनी कविता में पुराने दृश्यों को याद करते हुए कहती हैं :

"कुछ पुराने पेड़ बाकी हैं, अभी तक गांव में
नीम, पीपल, आम लहराते खड़े हैं, ध्यान में
सघन बदली दबे पांव आती लुटाती हर्ष जब,
ले नमी संध्या उतरती सुन्दरी सी गांव में"

प्रभा डोगरा की कविता 'कब बरसोगे?' बादलों के मुँह से कुछ यों कहलाती है :

"....जब देवदार की की लम्बी टहनियों की बाहें,
पत्तों की नम उंगलियों से चन्दा के मुख को धोयेंगी, तब बरसूंगा मैं।"

नयी रचनाओं में यह पक्ष अधिकाधिक मुखर हो रहा है कि हमारे आसपास का दृश्य अब पहले जैसा सुन्दर नहीं रह गया है। यहां तक कि कभी बहुत सुन्दर माने जाने वाले स्थान भी अब कोई प्रेरणा नहीं भरते। परिवेश की यह पीड़ा केवल सुन्दरता की चिन्ता तक ही सीमित नहीं रह गई है, साहित्य में यह जीव-जगत पर बढ़ते संकट को भी सामने लाने लगी है। रचनाकार जहां चिन्ता बांटने लगे हैं वहीं इससे पार पाने के उपायों पर बल देते हुए लोगों से आगे आने का आव्हान भी करते दिखाई देने लगे हैं। पर्यावरण पर यह चेतना आगे हिन्दी साहित्य में और भी तीव्र होकर सामने आयेगी, ऐसी आशा की जानी चाहिए।

जल संकट : समस्या और समाधान

उत्तराखंड के पर्वतीय इलाकों में दुल्हन जब ससुराल में आती है तो सबसे पहले उसे गांव के जल स्रोत पर ले जाकर उसकी पूजा कराई जाती है। पहाड़ों में कई स्थानों के नाम के अंत में **'नौला'** शब्द लगाया जाता है, जिसका अर्थ जलधारा होता है, अर्थात उक्त जलधारा वाला स्थान। श्वांस के बाद जल जीवित रहने के लिए दूसरी सबसे बड़ी आवश्यकता है, पुराने सभी नगर जल के कारण ही नदियों के पास बसे हैं। कहीं पर भी, रहने के लिए सबसे पहले पानी की उपलब्धता सुनिश्चित की जाती है। सरल शब्दों में कहें तो जल हमारे जीवन का मूल आधार है, यह जीवन का पर्याय है, जल के बिना जीवन की कल्पना तक नहीं की जा सकती है। जल की आवश्यकता केवल पीने के लिए ही नहीं, अपितु दैनन्दिन क्रियाकलापों के अलावा कृषि, पशु व मत्स्य पालन, वनरोपण और अग्निशमन के लिए भी पड़ती है। अमेरिकी विज्ञान लेखक लोरान आइजली ने कहा था कि 'हमारी पृथ्वी पर अगर कोई जादू है, तो वह जल है।'

प्रकृति ने उपहार में हमें प्रचुर जल भंडार दिया है, भूमि के तल पर, नीचे और ऊपर वायुमण्डल में भी। पृथ्वी का तीन चौथाई भाग समुद्र है इसमें भरे हुए जल को प्रकृति मौसमी चक्र के द्वारा धरती तक पहुंचाती है, समुद्र का जल गर्मी के मौसम में ताप से वाष्प बन, बादलों के रूप में यात्रा कर, पर्वतों की शीत वायु के संपर्क में आने के बाद बारिश और बर्फ के रूप में धरती को मिलता है। ऊँचे इलाकों में यह बर्फ के रूप में जमा हो जाता है और अन्य क्षेत्रों में धरती के नीचे संग्रहित होता है। जल का काफी अंश पेड़ पौधों के द्वारा संजोया जाता है और यह हमारे वायुमंडल में भी उपलब्ध रहता है जिसे वनस्पतियाँ ग्रहण कर धरती तक पहुँचाती है। प्रकृति का यह जल चक्र अनादिकाल से अनवरत चलता आ रहा है।

प्रकृति प्रदत्त इस चक्र को नियंत्रित भी प्रकृति ही करती है, धरती पर बर्फ, वनस्पतियों और झीलों तालाबों आदि के रूप में जल संग्रहण की प्राकृतिक व्यवस्था इसमें निरंतरता बनाए रखती है। धरती पर बढ़ती जनसंख्या और उसकी आवश्यकताएँ घटते-सिकुड़ते जंगल और विभिन्न प्रकार के प्रदूषण से उपजे अधिक तापमान ने प्रकृति के बहुमूल्य चक्र को बाधित कर दिया है, जिसका परिणाम अतिवृष्टि, अनावृष्टि और भारी जल संकट के रूप में सामने आ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के चलते ग्लेशियर पीछे खिसकते जा रहे हैं और भूजल के भोगवादी भारी दोहन से इसका स्तर बहुत नीचे चला गया है। जंगल और पेड़-पौधे कम होने से वायुमंडल से जल को धरती पर पहुँचाने का क्रम तो गड़बड़ाया ही है, शुद्ध वायु

का संकट भी आ खड़ा हुआ है। पानी की उपलब्धता व गुणवत्ता दोनों का संकट लगातार बढ़ता जा रहा है, इसे लेकर उपस्थित हुआ संकट गंभीर तो है ही, बहुआयामी भी हो गया है। आँकड़े बताते हैं कि विश्व के 1.5 अरब लोगों को पीने का शुद्ध पानी नही मिल रहा है और 2030 तक पूरी दुनिया में जरूरत के अनुपात में 40 प्रतिशत पानी कम हो जायेगा। भारत भी इससे अछूता नहीं रहेगा क्योंकि दुनिया की 17 प्रतिशत आबादी भारत में बसती है जबकि इसके मुकाबले पानी की उपलब्धता मात्र 4 प्रतिशत ही है। प्रति व्यक्ति सालाना जल की उपलब्धता के मामले में भारत चीन, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों से बहुत पीछे है। पानी के प्रति लोगों में जागरुकता का अभाव है, इसके लिए पहले पानी के संकट की भयावहता को समझना होगा।

जल को लेकर सामने आ रहे इस संकट से निपटने के लिए सबसे पहले वर्तमान जल नीति को व्यापक एवं प्रभावी बनाना पड़ेगा। इसके अन्तर्गत बहते जल को रोकना, भूजल का संचयन, पुनर्भरण (भूमि, जल, वनस्पति, प्राणियों और मानवीय संसाधनों द्वारा), संरक्षण, पुनरुत्पादन और विवेकपूर्ण उपयोग को सम्मिलित करना होगा। इसके अतिरिक्त कुछ निवारक उपायों पर ध्यान दिये जाने की भी आवश्यकता है। भूमिगत जल के अनियन्त्रित दोहन को रोकना, औद्योगिक कचरे को जलस्रोतों में मिलाने से रोकना, वनों की अन्धाधुन्ध कटाई को बन्द करना, घरेलू कार्यों में जल के आवश्यकता से अधिक उपयोग को नियन्त्रित रखना, कृषि में प्रयुक्त होने वाले कीटनाशकों, रासायनिकों व उर्वरकों आदि के प्रयोग को नियन्त्रित करना तथा जल क्षेत्रों में साबुन, डिटर्जेण्ट आदि के उपयोग पर प्रतिबन्ध लगाना आदि कुछ उपाय हैं, जिन्हें तत्काल अमल में लाया जाना चाहिए।

जल संकट से राहत पाने की दिशा में वर्षा के जल का अधिकतम संग्रहण एवं उचित संरक्षण अच्छे परिणाम दे सकता है। एक आंकलन के अनुसार यदि देश की कुल भूमि का 5 प्रतिशत अथवा 150 लाख हेक्टेयर भूमि क्षेत्र का गहराई तक पानी के संरक्षण के लिए प्रयोग किया जाए तो वर्षा के जल को संग्रहित करने के लिए 50 से 100 प्रतिशत क्षमता के दोहन पर 370 से 750 लाख हेक्टेयर मीटर जल मिल सकता है। घरों में जल का अधिक उपयोग करने वालों पर कर भार लगाया जाना, छोटे-छोटे बाँध बनाकर बर्फ के पिघलने व वर्षा से प्राप्त होने वाले जल को एकत्रित कर उसे बहुउदेश्यीय प्रयोग के लिए रोका जाना, तालाबों आदि के चारों ओर पक्के घाट बनाना, चेकडैम बनाकर वर्षा जल को बह कर चले जाने से रोकना, घरों में वर्षा जल संग्रह की व्यवस्था करने के साथ अतिरिक्त पानी को पक्की नाली द्वारा अन्य संग्रहण केन्द्रों पर पहुँचाना तथा ढलाव के क्षेत्र में सघन वृक्षारोपण कराया जाना आदि भी ऐसे उपाय हैं जो इस ओर अच्छा योगदान कर

सकते है। भूजल का स्तर बढ़ाने के लिए सोकपिट्स का निर्माण भी एक सस्ता, सुलभ और प्रभावी उपाय है, कुछ स्थानों पर इसके अच्छे परिणाम मिले है।

इन पंक्तियों के लेखक का बचपन एक पहाड़ी गाँव में बीता है, छोटा होने के बाद भी गाँव के चारों ओर प्राकृतिक जल स्रोत थे। इनमें एक में खूब मोटी धार थी और यह बारहों महीने चलता था, दूसरे धारे की जड़ों का पानी इतना मीठा था कि उसे केवल पीने के लिए सुरक्षित रखते थे। इस स्रोत के चारों ओर **'किनगोड़'** पौधे की घनी झाड़ियाँ थीं। एक अन्य स्रोत काफल के पेड़ के नीचे था, जहाँ जल कुंड बना था और यह हमेशा भरा रहता था। चौथा स्रोत गाँव से ऊपर पहाड़ी पर था, जिसके आसपास **'तुंगला'** नामक पौधे की झाड़ियाँ बहुतायत में थीं। प्रत्येक स्रोत के पानी का स्वाद एक दूसरे से अलग और विशिष्ट था, और गांव में पानी की भरपूर व्यवस्था थी। अब इन चार स्रोतों में से केवल एक ही बचा है जिसमें बूंद-बूंद कर पानी टपकता है, दो स्रोत बरसों पहले सूख चुके हैं और एक का तो अब पता ही नहीं कि वह था कहाँ पर। गर्मियों में गाँव में पानी का अकाल पड़ जाता है और वहाँ जाने का कार्यक्रम बनने पर गाँव से तुरंत संदेश आता है कि आओ तो जरूर, लेकिन गाँव में पानी बिल्कुल नहीं है, पानी के अभाव में लोगों ने अपने पशु तक बेच दिए हैं। यह हाल पहाड़ों के लगभग सभी गाँवों का है, आंकड़े बताते हैं कि हिमालय क्षेत्र के करीब 26 हजार जलस्रोत गंगा नदी में मिलते हैं, इनमें से कई के सूखने के समाचार है। जब पहाड़ से पलायन के कारणों पर चर्चा होती है तो इसे ओर कोई नहीं सोचता कि जब गाँव में पीने का पानी तक नहीं होगा तो वहाँ लोग रहेंगे किस तरह! इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि लोगों को पहाड़ों पर रहने के लिए प्रोत्साहित के लिए वहाँ सबसे पहले पर्याप्त मात्रा में पानी की व्यवस्था बनानी होगी।

हमारी विकास की अवधारणा की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि योजनाओं में पैसे की बंदरबांट पहली प्राथमिकता बन जाती है। निर्णय लेने वाले राजनेता हों या नौकरशाह, इंजीनियर अथवा ठेकेदार, सभी इसमें अपनी भागीदारी देखते हैं। योजना का आकार जितना बड़ा होगा, पैसा भी उतना ही अधिक आएगा, इसलिए टंकिया बनाने और पाइप लाइन बिछाने का काम तो हो जाता है किंतु जल स्रोतों में पर्याप्त पानी उपलब्ध रहे, इसकी ओर ध्यान नहीं दिया जाता। पहाड़ों में इसी प्रवृत्ति के चलते बड़ी संख्या में ऐसे हैंड पंप लगा दिए गए हैं जिनसे पानी की

बूंद तक नहीं टपकती। इस रवैये के चलते जल संकट का समाधान कैसे होगा? अतः हमें प्राथमिकता के आधार पर ही नहीं, बल्कि युद्ध स्तर पर जल स्रोतों के पुनर्जीवन का काम करना होगा। यह कार्य थोड़ा समय लेने वाला और श्रमसाध्य तो अवश्य है, किंतु कम खर्चीला होने के साथ-साथ निश्चित परिणाम देने वाला भी है। जल स्रोतों का पुनर्जीवन कई प्रकार से हो सकता है।

- सबसे पहले वर्षा जल को ले। पहाड़ों में अच्छी मात्रा में वर्षा होती है, इससे जलस्रोतों को रिचार्ज करने में किया जा सकता है। इसके लिए स्रोतों के आसपास के नालों-खालों में बहने वाले पानी के कुछ अंश को स्रोतों के नजदीक पहुँचाना होगा, जो छोटी-छोटी नालियाँ (बौले अथवा गूल) बनाकर किया जा सकता है। स्रोत के आसपास चारों ओर छोटे-छोटे गड्ढे खोदकर नदियों के जल को इनमें संगृहीत किया जाता है, जिसे धरती धीरे-धीरे सोख लेती और स्रोत के पानी के रूप में वापिस लौटाती है।
- दूसरा उपाय स्रोत के चारों ओर ऐसी झाड़ियों का रोपण करना है, जिनकी पत्तियाँ वायुमंडल से पानी सोख कर इसे जड़ों के द्वारा धरती के अंदर पहुँचाती है। ऐसी एक ज्ञात झाड़ी **'किनगोड़'** है। ये झाड़ियाँ धनी होनी चाहिए और संरक्षित भी होने चाहिए ताकि जंगली पशु इन्हे खा न सकें।
- तीसरा तरीका पहाड़ों पर बड़ी मात्रा में चौड़ी पत्ती वाले वृक्षों का रोपण कर घना जंगल विकसित करने का है। वृक्षों की कई प्रजातियाँ वायुमंडल से पानी सोखती हैं और धरती तक पहुँचाती हैं, पहाड़ों में 'बांज' वृक्ष को इस काम के लिए बहुत कारगर माना जाता है। अभी स्थिति यह है कि पहाड़ों में व्यापारिक दोहन के लिए लगाये गये संकुल प्रजाति के चीड़ आदि के पेड़ बहुतायत में हैं जो अपने आसपास जमीन का सारा पानी सोख लेते हैं। इनकी जगह चौड़ी पत्ती के फलदार वृक्ष लगाए जाने चाहिए जो फलोद्यान के रूप में आजीविका का भी बड़ा साधन बन सकते हैं।
- तेज ढलान वाली पहाड़ियों पर सीढ़ीनुमा खेत भूस्खलन का बहुत बड़ा कारण बनते हैं, ऐसे स्थानों पर खेती रोककर धरती पर जड़ों के माध्यम से पकड़ बनाने वाले परंपरागत वृक्षों का रोपण होना चाहिए, जिनसे भूक्षरण तो रुकेगा ही, जल संचयन भी हो सकेगा। ढलान के निचले हिस्से पर में नए जलस्रोत विकसित हो सकते हैं।
- पुराने जल स्रोतों के पुनर्जीवन के साथ-साथ नए स्थान भी चिन्हित किए जाने चाहिए, विशेष कर वे स्थान, जहाँ दो-तीन नाले आकर मिलते हों। वहाँ पर कुंड

अथवा निकासी की व्यवस्था के साथ अस्थाई झील जैसी संरचना के माध्यम से पानी का संग्रह किया जा सकता है। आसपास घने पेड़ लगाकर इसे मजबूती भी दी जा सकती है।

- पहाड़ों पर खेती पर आधारित जीवनशैली के स्थान पर फलोद्यान पर निर्भर आजीविका अपनाने के कई लाभ हैं। इससे एक ओर जहाँ प्रचुर वर्षा जल की उपलब्धता बढ़ेगी, वहीं शुद्ध वायु भी मिलेगी। फलोद्यान से आर्थिक गतिविधियाँ बढ़ेंगी और मधुमक्खी पालन जैसे क्रियाकलापों को बल मिलने के अतिरिक्त चारे की प्रचुरता होगी जिससे पशुपालन बढ़ने के साथ-साथ प्राकृतिक खाद भी मिलेगी।

- नदियों के पानी को पम्प द्वारा ऊपर पहाड़ की चोटियों पर ले जाने और इसे गदेरों में बहा कर बिजली पैदा करने के बाद पुनः नदी में छोड़ देने का विचार पर्यावरणविद काफी समय से दे रहे हैं। इसकी व्यावहारिकता का परीक्षण कर इसे अपनाने पर भी विचार किया जा सकता है।

ऊपर बताए हुए कुछ उपायों पर देश-विदेश में कई स्थानों पर काम हो चुका है। इजराइल ने समुद्र के पानी का शोधन कर जल संकट से निजात पाई है और रवांडा में चलाए गए संयुक्त उपक्रम के कारण वहां जल स्रोतों को पुनर्जीवित किया गया है। हमारे देश में बिहार के सीतामढ़ी और महाराष्ट्र के नांदेड़ में भी सोकेट पिट के माध्यम से भूजल का स्तर बढ़ाने के कुछ सफल प्रयोग किए गए हैं। अतः उचित प्रयास हों तो तो हमारे पहाड़ों पर भी सार्थक परिणाम मिल सकते हैं किन्तु यहाँ कुछ परिस्थितियां चुनौती दे रही हैं। इनमें पहली है, स्वयं कुछ न कर, हर बात के लिए सरकार की ओर देखना, जिसके चलते जनभागीदारी सुनिश्चित नहीं की जा सकती। दूसरी बात, गाँवों का निरंतर सूना पड़ते जाना है, बहुत सारे गाँव जनविहीन हो चुके हैं अथवा इनमें बहुत थोड़े परिवार बचे रह गये हैं, इनमें से भी अधिकांशत वृद्ध अथवा महिलाएं व बच्चे हैं। कार्यशील आयु के लोग नौकरी और व्यवसाय के लिए में गाँवों से दूर हैं। ऐसे में जनभागीदारी हो भी तो कैसे? सरकार के पास एक तो बजट का टोटा है और मानव संसाधन की भी तंगी है, इसलिए यक्ष प्रश्न यह है कि गाँव में जल स्रोतों की पुनर्जीवन की योजना परिवान कैसे चढ़ेगी। उत्तर एक ही है कि गाँव में रहने वाले और वहाँ से जाकर बाहर बस चुके लोगों के साथ स्वयंसेवी संस्थाएं, उद्यमी और सरकार मिलकर इस ओर कारगर अभियान चलाएं। सरकार और वित्तीय संस्थाएं ऐसे प्रकल्पों के लिए धन उपलब्ध कराएं और जितनी अधिक संभव हो, इनमें जनभागीदारी सुनिश्चित की जाए। संगठित एवं संकल्पित प्रयासों से ही सार्थक परिणामों की आशा की जा सकती है।

परिवार का साथ

सृष्टि के पास सोशल मीडिया पर अधिक सक्रिय रहने का समय नहीं था, फिर भी आजकल फेसबुक पर न होने को पिछड़ा ही माना जाता है। सृष्टि के अकाउंट पर मित्रों में सहपाठी, सहेलियाँ, रिश्तेदार और पड़ोसी, बस ये ही थे, नए मित्र अनुरोधों की वह उपेक्षा ही करती। नाक-नक्श सुंदर होने से उसकी प्रोफाइल फोटो अच्छी दिखती थी, इसलिए इस पर प्रशंसा के कमेंट आते रहते थे। अच्छे लगते तो वह इन्हें लाइक कर देती, किंतु पिछले कुछ दिनों से किसी के द्वारा बार-बार कमेंट आ रहे थे। तीन-चार लाइक्स के बाद उसे अनुरोध आने लगे कि वह अपना नंबर दे दे ताकि उसे मैसेज किये जा सकें।

बार-बार अनुरोध भेजने वाले को लेकर सृष्टि को उसके बारे में जानने की उत्सुकता हुई, उसकी कवर फोटो देखी तो किसी तीर्थस्थल की थी, जहाँ भीड़ में साधु-संत भी दिख रहे थे। उसका प्रोफाइल चित्र आकर्षक था, सुंदर चेहरा, माथे पर तिलक और दाहिने हाथ में कलावा बंधा था, नाम भी आधुनिकता था, 'मोहित'। इतना विवरण अनुरोध करने वाले में रुचि जगाने के लिए पर्याप्त सा था किंतु सृष्टि सावधान थी, कि उसे इतना तो पता होना ही चाहिए कि वह क्या करता है, शिक्षा का स्तर क्या है और परिवार व परिवेश कैसा है। अगले अनुरोध के उत्तर में उसने कमेंट किया कि उसके बारे में जरूरी बातें जान लेने के बाद ही वह

मित्रता को आगे बढ़ा पाएगी।

मोहित नाम वाले फेसबुक यूजर का उत्तर जैसे तैयार था, उसने काफी दूर के एक दूसरे शहर का नाम लेते हुए बताया कि उसकी अपनी ट्रैवल एजेंसी है और वह ग्रेजुएट है, उसके परिवार का ट्रांसपोर्ट का बिजनेस है और वह माता-पिता की अकेली संतान है। उसमें एक फोटो भी अटैच कर दी, जिसमें उसके पीछे चार-पाँच लग्जरी बसें खड़ी दिख रही थीं और उसके अगल-बगल ड्रेस में ड्राइवर-कंडक्टर जैसे लगने वाले लोग भी थे। एक सामान्य से निम्न मध्यवर्ग की युवती, जो स्वयं भी एक संस्थान में नौकरी करने लगी थी और जिसकी सहपाठियों के विवाह की बातें चल रही हों, उसके मन में अपने भावी जीवन को लेकर कुछ कल्पनाएं होती ही हैं, संपन्न परिवार का पढ़ा लिखा, कमाऊ और सुन्दर दिखने वाला युवक इसके ढांचे में उपयुक्त बैठता है। सृष्टि के मन में थोड़ा संदेह जरूर पनपा, किंतु युवक का शहर बहुत दूर होने से पुष्टि करने के लिए कोई स्रोत नहीं था, इसलिए विश्वास करना पड़ा। उसने अपना नंबर दे दिया।

अगले ही दिन से सृष्टि को युवक के फोन आने लगे, जिनमें सृष्टि की खूब तारीफ करने के साथ युवक अपने आगे के खुशहाल जीवन के बारे में बात करता, इसके बाद वह सृष्टि को लेकर देखे गए सुंदर सपनों का आकर्षक विवरण देने लगा। सृष्टि को प्रभाव में आया जान, जल्दी ही उसने बताया कि अब वह उसके बगैर नहीं रह सकता, इसलिए दो-तीन दिन में वह उनके शहर में आ रहा है। उसने होटल का नाम और तारीख बताते हुए साथ में अनुरोध किया कि सृष्टि उससे मिलने के लिए वहाँ आ जाए और इस बारे में किसी को न बताए, सही समय आने पर वह खुद बता देगा।

सृष्टि ने युवक के विषय में यद्यपि अभी तक किसी को नहीं बताया था किंतु वह संस्कारित परिवार से आती थी, होटल में अकेले आने की बात सुनकर तनाव में आ गई। उसे लगा कि होटल में जाने के लिए किसी को साथ में लेना या कम से कम इस बारे में बताना व सलाह लेना ठीक रहेगा। उसने प्रेम विवाह कर घर बसाने वाली अपनी एक रिश्तेदार सहेली को संपर्क कर पूरी बात बता दी। सहेली के घर में भारी तनाव चल रहा था, मायके वालों ने उससे संबंध तोड़ दिए थे और ससुराल वाले लड़के को फंसाने व दहेज न मिलने जैसे बहाने बना कर उसे दुत्कार रहे थे, मन भर जाने के बाद लड़का भी उसकी उपेक्षा कर रहा था। उसे

बार-बार पछतावा होता था कि उसने परिवार से विद्रोह क्यों किया। उसने सृष्टि को सारा आगा-पीछा बताते हुए समझाया कि वह सबसे पहले अपने परिवार को विश्वास में ले। परिवार में जिसे वह सबसे निकट मानती हो, उसे इस बारे में बता दे। उसने कहा कि थोड़ा हो-हल्ला हो सकता है किन्तु कोई भी परिवार अपनी लड़की का बुरा नहीं चाहता, बातचीत से कोई न कोई रास्ता निकल ही आता है।

किसी तरह हिम्मत जुटाकर सृष्टि ने अपनी माता को बताया कि उसे एक लड़का पसंद आ गया है, वे उसे मिलने की अनुमति दे दें। माता ने मामले की गंभीरता समझा कर, रात में पूरी बात पिता को बता दी कि ठंडे मन से ही कोई निर्णय लें। पिता ने सुबह उठकर अपने एक प्रशासनिक अधिकारी मित्र से संपर्क किया, जिसने अपने संपर्कों से होटल में छानबीन करवाई। पता लगा कि बताए गए दिन उस होटल में मोहित नाम से कोई बुकिंग नहीं है, अलबत्ता किसी स्थानीय व्यक्ति द्वारा एक कमरा मोहसिन नाम से बुक कराया गया है, जिसका पता मोहित के बताए गए शहर का ही है। अधिकारी ने दिए गए पते पर जानकारी करवाई तो ज्ञात हुआ कि मोहसिन नाम का टैक्सी ड्राइवर वहाँ रहता है, जो विवाहित है और आठवीं पास भी नहीं है। अधिकारी ने सृष्टि के फेसबुक अकाउंट से चित्र का मिलान करवाया तो यह मोहसिन का ही निकला। जांच से साफ हो गया था कि मोहित नाम का युवक बन कर मोहसिन नाम के दूसरे समुदाय के विवाहित व्यक्ति द्वारा सृष्टि को अपने जाल में फंसाया जा रहा था।

जांच पड़ताल में अधिकारियों को दो दिन लग गए, इस बीच वह तीसरा दिन आ गया, जब युवक को सृष्टि से मिलने होटल में आना था। सृष्टि घर से निकलने ही वाली थी कि उसके पिता सामने आ गए और साथ में मित्र अधिकारी भी। उन्होंने सृष्टि से जांच रिपोर्ट पढ़ कर आगे का कदम उठाने का आग्रह किया। सच्चाई जान कर सृष्टि के पैरों तले जमीन खिसक गई, वह बाल-बाल बच गई थी। होटल के कमरे में अकेले पहुँचने पर उसके साथ क्या-क्या हो सकता था, यह सोचते ही उसकी रूह कांप गई। उसने अनुभवी सहेली से सलाह न ली होती और परिवार से विद्रोह कर बैठती तो वापसी का कोई रास्ता नहीं बचता। परिवार और परिवार के संस्कारों ने उसे बचा लिया था। वह अंदर जाकर माँ से लिपट गई।

राष्ट्र निर्माण में युवाओं की भूमिका

वर्णाश्रम व्यवस्था के अंतर्गत हमारे देश में मनुष्य की आयु को एक सौ वर्ष मानकर इसे चार आश्रमों में विभाजित किया गया था। 25 वर्ष ब्रम्हचर्य, अगले 25 वर्ष गृहस्थ तथा उसके बाद वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम का विधान था। ब्रह्मचर्याश्रम की मध्य आयु से ग्रहस्थ आश्रम की मध्यवय युवावस्था कहलाती थी। पुरानी कहावत के अनुसार बारह बरस का बेटा तलवार और बारह बरस की बेटी घर बार थाम लेते थे। अन्तर्राष्ट्रीय चलन और भारत की औसत आयु के संदर्भ में अब 15 वर्ष से लेकर 34 वर्ष तक का आयु वर्ग युवा माना जाता है।

सीआईए की वर्ल्ड फैक्ट बुक के अनुसार 2016 में भारत की कुल अनुमानित जनसंख्या 128. 19 करोड़ में से 75.60 करोड, अर्थात 58.98 प्रतिशत लोग 15 से 54 वर्ष की आयु वर्ग में हैं जबकि 35.05 करोड़ (27.34 प्रतिशत) जनसंख्या 14 वर्ष के नीचे वाली है। 2011 की भारत की जनगणना के अनुसार देश की कुल आबादी 121.09 करोड़ में से 42.20 करोड़ (34.85 प्रतिशत) लोग 15 से 34 आयु वर्ग में थे जबकि 37.24 करोड़ (30.67 प्रतिशत) 14 वर्ष से कम के थे। जनसंख्या के ये आंकड़े बताते हैं कि देश की 66 प्रतिशत आबादी 35 वर्ष से नीचे की आयु वाली है। इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि भारत युवा आबादी वाला देश है और आगे के पन्द्रह-बीस वर्षो तक देश के सारे कार्यकलाप इसी पीढ़ी की क्रियाशीलता पर निर्भर होंगे।

युवाओं की भूमिका किसी भी देश के लिए महत्वपूर्ण होती है। देश की रक्षा तो युवाओं के कन्धे पर होती ही है, कृषि, उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवायें, वाणिज्य, पर्यटन, वानिकी, वैज्ञानिक अनुसन्धान और सेवा क्षेत्र के अलावा सरकारी उपक्रम भी युवाओं के बूते ही चलते हैं। युवा अपनी इन भूमिकाओं को प्रभावी तरीके से तभी निभा सकते हैं जब वे इन कार्यो के लिए पूरी तरह सक्षम हों। इसमें सबसे पहली आवश्यकता उनके उत्तम स्वास्थ्य की है, स्वस्थ होने पर ही युवा अपना पूरा योगदान दे सकता है। देश के कई भागों में युवा पीढ़ी नशे की गिरत में है जो उनके स्वास्थ्य ही नहीं, पूरे जीवन व उसकी गुणवत्ता के लिए बड़ा खतरा है। इसके अतिरिक्त प्रौढ़ावस्था में होने वाला मधुमेह भी युवाओं में तेजी से फैल रहा है जिससे उनकी कार्यक्षमता तथा प्रदर्शन पर कुप्रभाव पड़ता है। टीवी व इन्टरनेट आदि में व्यस्तता से सैर व खेलकूद के लिए भी युवा समय नहीं निकाल पाते, यह भी चिन्ता का विशय है।

स्वाथ्य के बाद शिक्षा दूसरा ऐसा विषय है जो युवाओं के लिए भारी महत्व रखता है, अच्छी शिक्षा व समुचित प्रशिक्षण ही उन्हें इस योग्य बनाता है कि वे जीवन में मिलने वाली विभिन्न भूमिकाओं को सफलतापूर्वक निभा सकें। हमारे

देश में शिक्षा का क्षेत्र काफी उपेक्षित रहा है, अच्छे शिक्षण संस्थान बहुत थोड़े से हैं, जिन पर भारी दबाव है और मात्र 1-2 प्रतिशत पात्र युवा ही इनमें प्रवेश ले पाते हैं। बचे हुए युवा कुकुरमत्तों की तरह उग आये निजी संस्थानों में जाने को विवश हैं जहां उन्हें उचित स्तर की शिक्षा नहीं मिल पाती। ये संस्थान बहुत मंहगे भी हैं और साधनहीन युवा इनमें भी नहीं जा पाते। एक और कठिनाई युवाओं को सही दिशा न मिल पाने की भी है, माता-पिता यदि अशिक्षित हैं तो वे बच्चे के भविष्य के विषय में ठीक से सोच तक नहीं सकते जबकि पढ़े लिखे लोग अधिक महत्वाकांक्षा के चलते बच्चों पर अपनी रुचि वाले विशेष क्षेत्रों में जाने का दबाव बनाते हैं।

माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर युवाओं के भविष्य के नियोजन के लिए सरकारी स्तर पर कोई कारगर नीति नहीं है और इस मामले में युवाओं व उनके अभिभावकों को विशेषज्ञ परामर्श भी उपलब्ध नहीं होता। परिणाम यह होता है कि युवा अपनी रुचि एवं प्रतिभा के क्षेत्र में नहीं जा पाते और सामाजिक व पारिवारिक कारणों से अन्य क्षेत्र अपना लेते हैं जहां वे स्वयं तो दबाव में रहते ही हैं, स्वाभाविक प्रदर्शन भी नहीं कर पाते। युवाओं की रुचि व प्रतिभा की पहचान पूर्वमाध्यमिक स्तर ही हो जाती है, उसके अनुसार उनकी आगे की शिक्षा व नियोजन हो, ऐसा सोचना भी अभी दूर की कौड़ी है क्योंकि प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा व्यवस्था बहुत ही लचर है। राजनीतिक हस्तक्षेप, शिक्षक संगठनों के दबाव, उपेक्षा तथा भ्रष्टाचार आदि के कारण कुछ नया सोचा तक नहीं जा सकता। जब तक यह परिस्थिति नहीं बदलती, युवाओं के उचित नियोजन व स्तरीय शिक्षण का काम भी उपेक्षित रहेगा। देश को भी इस उपेक्षा की कीमत चुकानी पड़ रही है।

किसी भी नागरिक की भांति युवाओं को भी जीवन चलाना होता है, परिवार, उसके भविष्य व आवश्यकताओं के लिए उन्हें भी आजीविका चाहिए। उनके परिश्रम एवं योग्यता का उपयोग राष्ट्र व समाज के हित में हो और आजीविका आदि के रूप में उन्हें स्वयं भी इनका लाभ मिले, इसके लिए निरन्तर व

स्थायी व्यवस्था सुनिश्चित हो, राज्य का यह दायित्व है। उत्तम स्वास्थ्य, उचित शिक्षा और सम्मानपूर्वक जीवनयापन की व्यवस्था मिल कर युवा को उत्पादक बना देते है। समर्थन, प्रोत्साहन, स्पर्धा, चुनौती, लगन और धुन आदि तत्व उसमें उसमें ऐसी तत्परता व ऊर्जा भर देते हैं कि वह तेजी से शीर्ष की ओर बढ़ने लगता है। किशोर अवस्था से ही यदि जीवन की दिशा का बोध होने लगे और उसके अनुसार उचित वातावरण उपलब्ध हो तो किसी भी युवा की प्रगति अच्छी होना तय है। परिवार के साथ-साथ राज्य का भी यह दायित्व होता है कि वह इस ओर पर्याप्त व्यवस्था बनाये और युवाओं को ऐसा वातावरण दे। खेल आदि ऐसे आयोजन होते हैं जो युवाओं में टीम भावना उत्पन्न करने के साथ-साथ विजयी व सफल होने का संकल्प भी भरते हैं। यह सब शिक्षा के साथ-साथ ही होना चाहिए जिसकी स्थिति पर ऊपर चर्चा हो चुकी है, अत: वही चिन्ता इस मामले में भी है।

युवाओं को लेकर समाज की सोच क्या है और चलन कैसा है, इसे समझने के लिए विभिन्न क्षेत्रों को देखने पर जो चित्र उभरता है, वह बहुत अच्छा नहीं है। सेना में जवान, यदि आगे पदोन्नत नहीं होता तो, मात्र 34 वर्ष की आयु में सेवानिवृत हो जाता है। कुछेक अपवादों को छोड़ दें तो अच्छा खिलाड़ी भी 34-35 वर्ष का हो जाने पर खेल से अलग हो जाता है। नये उभरे आईटी क्षेत्र में सब कुछ युवाओं हाथें में है और जिस तेजी के साथ नई तकनीक आती जा रही है, उसकी गति का साथ केवल युवा ही दे सकते हैं। जोखिम वाले और कड़ी स्पर्धा के क्षेत्र में भी केवल युवा ही टिक सकते हैं, इसके विपरीत आयुसीमा पर पहुंचने के बाद सेवानिवृति कर दिये नागरिक अधिकारी केन्द्र व राज्य सरकारों में फिर से, नये पदों पर, आ रहे हैं। न्यायपालिका तथा सेना में भी कुछ मामलों में यह चलन दिख रहा है। विशेषज्ञता का निश्चित ही महत्व होता है किन्तु विसंगति तो यह है ही। राजनीति में तो और भी बुरा हाल है, स्व. मोरारजी देसाई 82वें वर्ष में प्रधानमंत्री बने थे, 80-85 की आयु पर पहुंच चुके लोग भी पद पाने के लिए लालायित नजर आते हैं और 47 वर्ष के हो जाने पर भी राहुल गांधी अभी युवा ही कहलाते हैं। बड़ी आयु के लोग पदों से अलनग नहीं होंगे तो युवाओं के लिए राह कैसे बनेगी? हालांकि यह देखना सुखद है कि रा.स्व.संघ तथा भाजपा जैसे कुछ सामाजिक व राजनीतिक संगठनों में 75 वर्ष की आयु पार कर चुके लोगों को सक्रिय भूमिकाएं नहीं दी जा रही हैं।

स्वतत्रंता प्राप्ति के समय 15-35 आयु वर्ग के लोग 70 वर्ष बीत जाने के बाद अब 85-105 की आयु के होते, स्वाभाविक रूप से इनमें से अब गिने-चुने ही जीवित हैं। पीढ़ी के आंकलन के लिए 20 वर्ष को आधार मानने पर इनसे अगली पीढ़ी वाले वृद्ध हो चुके हैं जबकि उसके बाद वाले प्रौढ़ावस्था में है। आजादी के

बाद की चौथी-पांचवीं पीढ़ी के इस समय के लोग युवा कहे जा सकते हैं और देश की सारी आशायें उन्हीं पर टिकी हैं। देश की प्रगति में युवाओं के योगदान का सबसे अधिक महत्व होता है किन्तु इसका अलग से मूल्यांकन करना काफी कठिन है, क्योंकि इस आयु वर्ग के बाद भी अगले 20-25 वर्षों तक वे सक्रिय रूप से कार्यरत होते हैं। अत: योगदान का मूल्यांकन करने के स्थान पर आजादी के समय से लेकर अब तक के 70 वर्षों में युवाओं की समग्र स्थिति पर बात करना अधिक उपयुक्त होगा। उस समय के वातावरण एवं परिस्थितियों की तुलना में अब कितना अन्तर है और युवाओं पर उसका क्या प्रभाव पड़ रहा है, इसे समझ लेने से बातें काफी कुछ स्पष्ट हो जायेंगी।

आजादी से पूर्व देश का सारा ध्यान अंग्रेजों को निकाल बाहर करने पर ही था, आजादी मिलने के बाद देश की दिशा क्या होगी, इसे लेकर कोई स्पष्ट मत नहीं था। क्या आर्थिक नीतियां होंगी, शिक्षा व्यवस्था कैसी होगी और विकास का स्वरूप क्या होगा, ऐसे विषयों पर सम्यक् विचार नहीं हो पाया था। देश के नेतृत्व में युवा जोश और आदर्श तो था किन्तु अनुभव नहीं था फिर भी, उस समय समाज में क्योंकि नैतिकता का वातावरण था अत: व्यवस्था स्थापित हो गई। कई संविधानों का अध्ययन कर बना एक नया संविधान लागू हो गया किन्तु कोई स्परूट दिशा न होने के कारण नीति व नियोजन का काम तदर्थवाद पर चलता रहा। उस समय शिक्षा का स्तर ठीक नहीं था और स्थिति भी अच्छी नहीं थी किन्तु शिक्षकों के प्रति समाज में उच्च आदरभाव था और वे नैतिकता के प्रतीक माने जाते थे, अत: छात्रों को प्रेरित करने में समर्थ थे। शैक्षिक पाठ्यक्रम में भी आदर्श जीवन का आग्रह होता था, महापुरुषों के उदाहरण सामने रख कर प्राचीन मूल्यों एवं मान्यताओं के प्रति सम्मान रखना सिखाया जाता था। परिवारों में भी वातावरण धार्मिक रहता था और आख्यानों, कथाओं व प्रवचनों आदि से सदाचरण की सीख मिलती थी। छोटी आयु में मिला ऐसा परिवेश युवाओं को नैतिक राह पर चलने में सहायता करता था, इसका परिणाम समाज पर भी दिखाई पड़ता था।

देश के नीति नियन्ताओं को ऐसी अच्छी विरासत को आगे बढ़ाना चाहिए था किन्तु उनके सामने कोई स्पष्ट लक्ष्य न होने से इस पर चोट होने लगी। धर्मनिरपेक्षता के नाम पर देश के महापुरुषों एवं मानबिन्दुओं को पाठ्यक्रम से हटा दिया गया, 'ग' से 'गणेश' के स्थान पर 'ग' से 'गधा' पढ़ाने जैसे कदम उठाये गये। धर्म में आस्था व नैतिकता का स्थान आडम्बर व प्रदर्शनप्रियता ने ले लिया। समाजवाद के नाम अपनाई गई आर्थिक नीति में उत्तरदायित्व सुनिश्चित न होने से अराजकता और अकर्मण्यता की स्थिति आ गई। इसके उत्तर व विकल्प के रूप में आये पूँजीवाद से उपजे व्यक्तिवाद ने आर्थिक एकाधिकार, बेतहासा संचय व

उपभोक्तावाद की प्रवृत्ति को बढ़ाया जिससे सम्पन्नता के प्रदर्शन की होड़ मच गई। विलासितापूर्ण जीवन व अधिकाधिक संचय की भूख ने भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिया और यह समाज पर हावी हो गया। नैतिकता अपना महत्व खोती गयी और समाज में अपनी स्थिति सुरक्षित बनाने के लिए आपाधापी होने लगी। भ्रष्टाचार सरकारी व्यवहार से आगे निकल कर दैनिक जीवन का अंग बन गया। घटतौली, मिलावट, नकली उत्पाद, जमाखोरी, कालाबाजारी आदि सामान्य बातें हो गई। राष्ट्रीय स्तर से लेकर स्थानीय उपयोग की हर वस्तु इससे प्रभावित हो गई, यहां तक कि रक्षा के क्षेत्र तक में भ्रष्टाचार की चर्चा होने लगी। मानवीय मूल्यों के क्षरण से जीवन के हर क्षेत्र में गिरावट आती गई। देश व समाज को संचालित करने वाली राजनीति में अपराध व धन का बोलबाला हो गया जिससे भ्रष्टाचार को प्रश्रय मिलता गया। किशोरों एवं युवाओं को पहले मिलने वाले अच्छे परिवेश के स्थान पर अब वे विषाक्त वातावरण में रहने को अभिशप्त हो गये।

एक सीमा से आगे जाकर पतन सभी को व्यथित करने लगता है। एक क्षेत्र में भ्रष्टाचार करने वाला उससे इतर क्षेत्रों में जब इसका शिकार बनने लगता है तो चाहता है कि भ्रष्टाचार मिट जाये, अन्य क्षेत्रों के लोग उसके क्षेत्र के बारे में भी यही सोचते हैं। मुक्ति की आवश्यकता दबाव बनाने लगती है और उपाय खोजे जाने लगते हैं। इसमें यक्ष प्रश्न यह होता है कि ऐसा करे कौन? इसका स्वाभाविक उत्तर है युवा शक्ति! उनमें चुनौती स्वीकार करने, कुछ नया करने का उत्साह और आत्मोसर्ग तक करने का जोश होता है। 1973-75 के दौरान युवाओं ने गुजरात में 'नव निर्माण आन्दोलन' और हिन्दी इलाके में 'समग्र क्रान्ति आन्दोलन' चला कर भ्रष्टाचार के विरुद्ध लड़ाई लड़ी और इससे भयभीत उस समय की केन्द्र की सरकार को देश में आपातकाल लागू करना पड़ा। युवाओं ने इस आपातकाल का भी सफल प्रतिकार किया और देश पर तानाशाही थोपने वाली सरकार को उखाड़ फेंका।

युवाओं के प्रतिरोध व जनता के आक्रोश के चलते सरकार तो चली गई किन्तु गहरी जड़ें जमा चुका भ्रष्टाचार और तेजी से फैलता गया। एक के बाद एक बड़े-बड़े काण्ड सामने आने लगे और केन्द्र में संप्रग-2 सरकार के कार्यकाल के दौरान तो इनका आंकड़ा 12 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच गया। इससे त्रस्त जनता को मुक्ति का मार्ग नहीं सूझ रहा था कि एक बार फिर युवा शक्ति उठ खड़ी हुई किन्तु इस बार उसका उद्देश्य मात्र सत्ता परिवर्तन नहीं था, बल्कि वह भ्रष्टाचारमुक्त वैकल्पिक व्यवस्था भी देना चाहती थी। व्यवस्था परिवर्तन के लिए कमर कस चुके युवाओं ने जाति व धर्म से ऊपर उठ कर 2014 में केन्द्र में ऐसी सरकार स्थापित करवा दी, जिस पर सत्ता में तीन वर्ष की अवधि में एक भ्रष्टाचार

का कोई छोटा सा भी आरोप नहीं लगा है। युवाओं की एक विशेषता यह होती है कि वे गतिशील व क्षमतावान नेतृत्व चाहते हैं जो कड़े कदम उठाने में संकोच न करता हो। देश के वर्तमान नेतृत्व में युवाओं को यह विशेषता दिखती है जिससे वे आश्वस्त हैं और दृढ़तापूर्वक साथ दे रहे हैं। राजनीतिक स्थिरता देकर देश को विकास की राह पर ले जाने में युवाओं का यह योगदान अमूल्य है।

स्वास्थ्य, शिक्षा व रोजगार की समुचित व्यवस्था करना जहां सरकारों का दायित्व है, वहीं नैतिक वातावरण देकर उत्तरदायी नागरिक बनाना परिवार व समाज का कर्तव्य होता है। हमारे देश की संस्कृति एवं प्राचीन ज्ञान ऐसा करने में समर्थ हैं किन्तु इन्हें नष्ट करने के लिए आक्रामक राजनीति, सामाजिक व तथाकथित धार्मिक अभियान चलाये जा रहे हैं। पिछले एक हजार वर्षों से ऐसे प्रयास हो रहे हैं। इसी के अन्तर्गत ज्ञान के भण्डार नालन्दा जैसे उच्च विश्वविद्यालय जला दिये गये, आस्था के केन्द्र ज्योतिर्लिंग, युगों से प्रेरणा देने वाले राम और कृष्ण की जन्म भूमि जैसे बहुत सारे मानबिन्दु तोड़ दिये गये। राष्ट्र को सुखी, सम्पन्न एवं सबल बनाने के लिए इन मानबिन्दुओं का भारी महत्व है। ये देश के युवाओं में राष्ट्रभाव को विकसित करते हैं और इसके लिए समर्पित होने के लिए प्रेरित करते हैं। आजादी के बाद देश ने धर्मनिरपेक्षता की नीति अपना ली और सरकारें इस ओर से उदासीन हो गई। आजादी के समय जो राष्ट्रभाव विकसित हुआ था, वह फीका पड़ने लगा। युवाओं में यदि राष्ट्र व समाज के प्रति अपनत्व और चिन्ता करने का भाव नहीं होगा तो केवल अपने लिये ही जीने के अभ्यास से वे इनके प्रति उदासीन हो जायेंगे और राश्ट्र सब प्रकार से पिछड़ जायेगा।

ऐसी बातें केवल सरकारों पर नहीं छोड़ी जा सकतीं, समाज को ही आगे आना होता है और जहां देश के मूल्य व मान्यताओं को मिटाने का कुचक्र चल रहा हो, वहां समाज का दायित्व और भी बढ़ जाता है। हमारे देश का सौभाग्य है कि यहां बालकों, किशोरों एवं युवाओं में चरित्र, अनुशासन व राष्ट्रभाव भरने के लिए सक्षम सामाजिक संगठन कार्यरत हैं और प्रभावी भूमिका निभा रहे हैं। जीवन के हर क्षेत्र में इन संगठनों की पहुंच है और कार्यकर्ताओं की सक्रियता राष्ट्र को वैभवशाली बनाने के लिए व्यापक जागरूकता पैदा कर रही है। देश के युवा उत्साहपूर्वक व्यक्ति निर्माण में लगे राष्ट्रवादी संगठनों से जुड़ कर प्रशिक्षित हो रहें और उपयोगी एवं उत्तरदायी नागरिक के रूप में ढ़ल रहे हैं। युवाओं की हर पीढ़ी में इनकी संख्या एवं अनुपात में भारी बढो़त्तरी हो रही है। इस दृष्टि से देखें तो राष्ट्र निर्माण में 1947 के मुकाबले आज के युवाओं की भूमिका कहीं अधिक महत्वपूर्ण है।

उत्तराखण्ड का आर्थिक परिदृष्य एवं बैंकिंग व्यवस्था

विकास शब्द का सामान्य अर्थ 'वृद्धि, विस्तार व उन्नति' होता है राज्य के मामले में यह नागरिकों की सम्पन्नता तथा सेवाओं और सुविधाओं का विस्तार माना जाता है। नागरिकों की सपन्नता का सीधा-साधा सम्बन्ध उनकी आय से है जो रोजगार, सम्पत्ति व सहायता से प्राप्त होती है। राज्य के विकास के लिए पहली आवश्यकता संसाधनों की होती है जिससे रोजगार सृजन और रोजगार के अवसरों में वृद्धि कर नागरिकों की क्रय शक्ति बढ़ने के साथ-साथ उनकी खुशहाली तो सुनिश्चित की जा सके। विकास की यह धुरी धन (अर्थ) पर ही चलती है।

उत्तराखंड के हालिया आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार राज्य में प्रति व्यक्ति आय वर्ष 2016-16 के लिए 1,61, 102 रुपये आंकलित की गई थी जो देश की प्रति व्यक्ति आय एक 1,03,870 से काफी अधिक है किंतु जिला स्तर पर देखने से ज्ञात होता है कि इसमें बहुत अधिक विचलन है जैसे कि रुद्रप्रयाग जिले में यह महज 83,521 रुपये ही है। सर्वेक्षण का मानना है कि मैदानी व शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा पहाड़ी व ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी तथा अन्य सामाजिक आर्थिक विषमताओं की प्रबलता अधिक है। आंकड़ों की भाषा में इसे कहें तो हरिद्वार, देहरादून व उधमसिंह नगर जिलों की प्रति व्यक्ति आय क्रमश: 2,54,050, 1,95,925, व 1,87,313 रुपये के मुकाबले रुद्रप्रयाग, टिहरी गढ़वाल व उत्तरकाशी जिलों में प्रति व्यक्ति आय महज 83,521, 83,662 व 89,190 है। इसका सीधा-सीधा अर्थ यह हुआ कि पर्वतीय क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियाँ अपेक्षाकृत काफी कम हैं। इसे उत्पन्न हुई विषमता का परिणाम पलायन तथा बहुत सारे पर्वतीय गाँवों के जनशून्य हो जाने के रूप में सामने आ रहा है। **(स्रोत : उत्तराखण्ड सरकार, आर्थिक सर्वेक्षण 2017-18)**

किसी भी क्षेत्र में आर्थिक गतिविधियाँ इनमें आने वाले धन पर निर्भर करती हैं जो वेतन-भत्ते अथवा पेंषन, सरकारी व गैर-सरकारी सहायता, सम्पत्तियों (अथवा संसाधनों), के साथ ही औद्योगिक (विनिर्माण आदि), व्यापारिक, व्यावसायिक (पेशेवर), कृषि (सहायक क्रियाकलापों सहित) गतिविधियों तथा वनोपज आदि के दोहन से प्राप्त होता है। सरकारी कार्यो यथा भवनों, पुलों, सड़कों व नहरों के निर्माण व रख-रखाव के लिए आने वाला पैसा भी इसमें योगदान करता है। पर्वतीय क्षेत्रो की समस्या यह है कि यहाँ बड़े उद्योग स्थापित नहीं हो सकते और न ही बड़े स्तर पर वाणिज्यिक गतिविधियाँ चल सकती हैं। जनसंख्या का कम

घनत्व और नागरिकों के पास आय के साधन न होने से पेशेवर क्रियाकलाप भी बेहद सीमित हैं। कृषि कार्य आय की अपेक्षा बेहद दुष्कर व श्रम साध्य है, क्षेत्र बहुत सीमित है और बन्दर-सुअर जैसे जंगली जानवरों का भय ऊपर से है, इसी प्रकार वनोपजों के दोहन का दायरा भी सीमित है। ऐसे में आर्थिक गतिविधियों को गति देना कठिन चुनौती बन जाता है। इस मुख्य आधार को पुष्ट किये बिना आर्थिक विकास सम्भव नहीं है। यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि सरकार की अपनी सीमायें होती हैं, वेतन और सहायता बहुत अधिक मात्रा में और लम्बे समय तक नहीं दिये जा सकते, विशेषकर उत्तराखण्ड जैसे राज्य में जहाँ सरकार को घाटे का बजट (2017-18 के लिए आंकलित बजट 38046.03 करोड़, घाटा रु. 5416.61 करोड़) प्रस्तुत करने के साथ ही कर्ज (2017-18 में 8010 करोड़) भी लेना पड़ता है जो बजट का 21.50 प्रतिषत बैठता है।

आर्थिक गतिविधियों को सुचारु रुप से चलाने और गति देने के लिए वैकल्पिक वित्तीय स्रोत होने आवश्यक हैं, यह कमी बैंक पूरी करते हैं। बैंकों के पास सामान्य नागरिकों, संस्थाओं एवं सार्वजनिक उपक्रमों का धन भी जमा होता है जिसे विकास कार्यो में लगाए जाने से रोजगार सृजन होता है, लोग आत्मनिर्भर होते हैं और आर्थिक रुप से समृद्ध भी, जिसका लाभ अंततः राज्य को ही मिलता है। बैंकों का ऋण आमतौर पर दो प्रकार का होता है, पहला भवन, वाहन व उपभोक्ता वस्तुओं के लिए होता है तथा दूसरा रोजगार व व्यवसाय वृद्धि के लिए होता जिसमें उद्योग, वाणिज्य, सेवा क्षेत्र और कृषि कार्य आदि सम्मिलित हैं। उत्तराखंड में

आवासीय एवं अन्य उपभोक्ता ऋणों का विस्तार मुख्यत: मैदानी क्षेत्र में ही हो रहा है, पलायन आदि के चलते पहाड़ी क्षेत्रों में इनका आधार सिकुड़ता जा रहा है। बड़े उद्योगों, व्यापक वाणिज्य गतिविधियों और सेवा क्षेत्र की सीमित संभावना के कारण व्यावसायिक ऋणों का विस्तार भी कठिन है तथा सिंचाई एवं अन्य सुविधाओं के अभाव में कृषि क्षेत्र भी बहुत आशा नहीं जगाता। ऐसे में फलोद्यान ही ऐसा क्षेत्र दिखाई देता है जो, यदि सफल हो जाए तो, न केवल कृषि अपितु इसकी सहायक गतिविधियों का विस्तार कर पर्यटन के नए द्वार भी खोल सकता है और पलायन के स्थान पर लोगों को वापस आने को भी प्रेरित कर सकता है। इस समय उत्तराखंड में बैंकिंग सुविधाओं का स्तर कुछ ऐसा है : **(स्रोत : एस.एल.बी.सी. रिपोर्ट, दिसम्बर 2017)**

पर्वतीय जिलों में जनसंख्या के आधार पर बैंक शाखाओं की उपलब्धता यद्यपि संतोषजनक मानी जा सकती है किंतु क्षेत्रफल को देखते हुए यह बहुत कम लगती है। उदाहरण के लिए उत्तरकाशी, चमोली व बागेश्वर जिलों में प्रति 1000 वर्ग किलोमीटर पर क्रमश: 7.73, 11.58 व 14.67 शाखाएं हैं, जबकि देहरादून, उधम सिंह नगर व हरिद्वार जिलों में इतने क्षेत्रफल पर क्रमश: 179.40, 134.32 व 113.14 शाखाएं हैं। पर्वतीय जिलों में अधिकांश शाखाएं मुख्य अथवा सहायक मार्गों के कस्बों पर स्थित हैं, दूरदराज के गाँव अभी भी बैंकिंग सुविधा से वंचित हैं। राज्य में यद्यपि शाखाओं के अतिरिक्त राज्य में 2667 एटीएम, 1662 बिजनेस करॉस्पोडेन्ट और 7787 पॉइंट ऑफ सेल्स भी उपलब्ध हैं किंतु विकास गतिविधियों में इनका योगदान प्राय: नगण्य है। प्रदेश में अभी भी 2,000 से कम आबादी वाले 10,437 गांव बैंकिंग सुविधाओं से वंचित है, इनमें पौड़ी गढ़वाल 1,905, पिथौरागढ़ में 1,341, टिहरी गढ़वाल व नैनीताल में 1,062 प्रत्येक तथा अल्मोड़ा के 1,056 सम्मिलित हैं। बैंक शाखाओं पर लाभप्रदता बनाए रखने का दबाव होता है और पर्याप्त आर्थिक क्रियाकलापों के बिना यह संभव नहीं है। निरन्तर होता पलायन छोटे केंद्रों पर स्थित शाखाओं के बंद होने का कारण भी बन सकता है और इलाके के बैंकिग सुविधाओं से वंचित होने का भी।

इन परिस्थितियों में बैंकिंग एवं विकासात्मक गतिविधियों को आपस में प्रभावशाली रूप से जोड़ना ही उचित विकल्प बचता है, किंतु इच्छुक व्यक्तियों की अनुपलब्धता एवं उद्यमिता का अभाव इसमें भारी अवरोध है। इसके अतिरिक्त गांवों में बहुत सारी भूमि बंजर है और इसका स्वामित्व उन लोगों के पास है जो बाहर जाकर बड़े नगरो आदि में बस गए हैं। गांवों में रह गए लोगों के पास बहुत कम भूमि बची है और जो है भी, वह बिखरी हुई है, इसका वाणिज्यिक उपयोग नहीं हो

सकता। यदि बाहर गए लोगों की स्वामित्व वाली भूमि का उपयोग हो सके तो इसके आधार पर आर्थिक गतिविधियों को उत्पादक एवं लाभप्रद बनाया जा सकता है। इसके लिए हिमाचल प्रदेश के विकास का मॉड्यूल सामने हमारे सामने है जिसका आधार बागवानी और पर्यटन है। हिमाचल में शिमला, कुल्लू, मनाली व धर्मशाला आदि केन्द्रों पर खूब पर्यटक आते हैं, वहाँ अधिकांशत सैर-सपाटे और कुछ मात्रा में साहसिक का पर्यटन ही अधिक है। उत्तराखंड की भौगोलिक संरचना तथा जलवायु प्रायः हिमाचल प्रदेश के ही समान है, यहाँ मसूरी, नैनीताल, रानीखेत आदि पर्यटक केंद्रों में सैर-सपाटे के पर्यटन के साथ ही बद्री, केदार, गंगोत्री, यमुनोत्री, हरिद्वार, ऋषिकेश, हेमकुंड साहिब, पिरान कलियर आदि प्रसिद्ध केन्द्रों के कारण बहुत बड़ी मात्रा में धार्मिक पर्यटन भी होता है। साहसिक और प्राकृतिक पर्यटन के लिए भी यहाँ अच्छे अवसर हैं। सुरक्षित यातायात, सुन्दर ठहरने की व्यवस्था और स्थानीय उत्पादों को लोकप्रिय बनाकर उन का उत्पादन और विपणन रोजगार के बहुत बड़े अवसर उपलब्ध कराते हैं किंतु अधिकांश पर्यटक मुख्य सड़कों तक ही सीमित रहते हैं। उन्हें गाँवों में आकर्षित करने के लिए ऐसे आकर्षण उत्पन्न किये जाने आवष्यक हैं जो उन्हें लालायित कर सकें। यह एकाएक संभव नहीं है, इसके लिए पहले स्थानीय लोगों को गाँव में रहने के लिए प्रेरित करना जरूरी है। उनकी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ उन्हें सम्मानजनक, रुचिकर एवं सुविधायुक्त जीवन भी देना होगा। फलोद्यान इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है, इसमें श्रम, लागत और जोखिम अपेक्षाकृत कम है और उत्पादकता बहुत अधिक। इसके साथ जुड़ी बहुत सारी सहायक गतिविधियाँ इसे आकर्षक और लाभप्रद भी बना देती हैं जिससे सम्भावनाओं के नये द्वार खुल सकते हैं।

उपरोक्त कथन से यह बात उभर कर सामने आती है कि आर्थिक गतिविधियों को चलाने के लिए चार पक्ष जिम्मेदार होते हैं। इनमें पहला पक्ष राज्य सरकार है जो राज्य एवं इसके नागरिकों की उन्नति एवं विकास के लिए जिम्मेदार है। दूसरा पक्ष उद्यमी हैं, जो परिश्रम, नियोजन एवं संसाधनों के बल पर आर्थिक विकास के इच्छुक रहते हैं। तीसरा पक्ष वे लोग हैं जो भूमि के स्वामी तो हैं किंतु इसका उपयोग न कर इसे व्यर्थ बनाए हुए हैं। चौथा पक्ष बैंक आदि वित्तीय संस्थाएं हैं जो क्रियाकलापों के लिए धन उपलब्ध कराकर इन्हें संभव कर सकती हैं। इनमें से प्रत्येक की अपनी परिस्थितियां हैं, सरकार की वित्तीय सीमाएं हैं और विवशताएं भी होती हैं। उद्यमी संसाधनों के अभाव और जटिलताओं के कारण हतोत्साहित रहते हैं। किसी सार्थक पहल के अभाव में व्यर्थ पड़ी भूमि के स्वामी इसकी

उपयोगिता से अनभिज्ञ रहते हैं और वित्तीय संस्थाएं अपने ऋणों की सुरक्षा की चिंता से अपरिक्षित क्रियाकलाप में भागीदारी से बचती हैं। ऊपर सारणी में सीडी रेशो (जमा व ऋण अनुपात) की चर्चा की गई है जो उधम सिंह नगर, हरिद्वार और नैनीताल में क्रमश: 123, 72 व 48 जबकि अल्मोड़ा, पौड़ी गढ़वाल व रुद्रप्रयाग जैसे जिलों में महज: 22, 24 व 26 ही। बैंकों पर भारतीय रिजर्व बैंक और राज्य सरकार के स्तर से सीडी रेशो बढ़ाने के लिए भारी दबाव रहता है किंतु समुचित ऋण प्रस्तावों के अभाव में वे असहाय दिखाई देते हैं। यदि इन कठिनाइयों का निराकरण कर समुचित कार्य योजना बनाई जा सके तो इस दिषा में सार्थक परिणाम होते हैं।

कार्य करने के लिए बहुत से क्षेत्र हैं, इनमें छोटी जल-विद्युत योजनाओं से लेकर सौर ऊर्जा एवं पवन ऊर्जा तथा वनोत्पादों पर आधारित कुटीर उद्योग, कृषि एवं पशुपालन जैसी सहायक कृषि गतिविधियाँ आदि बहुत से कार्य जो उत्पादक व लाभप्रद माने जाते हैं। यहाँ केवल फलोद्यान की चर्चा की जा रही है, बाहर जाकर बस गये लोगों के नाम पर बहुत मात्रा में पुश्तैनी भूमि है, जिससे उन्हें मोह है लेकिन किसी प्रकार का लाभ नहीं क्योंकि यह बंजर पड़ी है। सरकार उपयुक्त कार्य योजना बना कर भूमि का अधिग्रहण कर सकती है और इसके प्रतिफल के रूप में सहकारी संस्था अथवा स्वयं सहायता समूह बना कर ऐसी भूमि के स्वामियों को अंशधारक बना सकती है। यह भूमि इच्छुक व्यक्तियों को सहकारी संस्था अथवा स्वयं सहायता समूह के माध्यम से फलोद्यान हेतु लाभप्रद अवधि तक के लिए पट्टे पर दिया जा सकता है। वित्तीय संस्थायें पूरी योजना का आंकलन कर तथा लाभप्रदता की गणना कर दीर्घकालीन, मध्यकालीन व फसली ऋण दे सकती हैं। प्रदेश सरकार बिना किसी वित्तीय भार के इसमें योगदान कर सकती है। फलोत्पादन व औद्यानिकी प्राथमिकता के क्षेत्र में आते हैं अत: वित्तीय संस्थाओं के लक्ष्य के अनुरूप ही है। सरकार की भूमिका तृतीय पक्ष के जमानतकर्ता के रूप में होनी चाहिए ताकी वित्तीय संस्थाए इस ओर अरुचि न दिखायें। सरकार कपने विभिन्न विभागों के माध्यम से प्रकल्प की सफलता सुनिश्चित कर सकती है, इसके अन्तर्गत तकनीकी सहायता, प्रशिक्षण, उन्नत प्रजाति के बीज और पौधों की व्यवस्था, खाद, कीटनाशक और आवश्यक सहायक उपकरणों की व्यवस्था, भण्डारण और विपणन आदि में सहयोग करने के साथ साथ सिंचाई और वैकल्पिक ऊर्जा के उपाय आदि सम्मिलित हैं।

योजना को व्यापक और सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि मृदा (Soil) की उपयुक्तता तथा भूमि की उपलब्धता आदि का परीक्षण कर क्लस्टर

एप्रोच अपनाया जाए, तो परिणाम बहुत अच्छे हो सकते हैं। उदाहरण के लिए एक गाँव व उसके आसपास के गाँवों एक ही प्रकार के फलों का उत्पादन होने से वे स्थान उन फलों के लिए अपनी विषिश्ट पहचान बना सकते है। इससे विभिन्न कार्यदायी व सहायक संस्थाओं में तालमेल आसान हो सकेगा। अलग अलग ऊचाँई, तापमान और मृदा प्रकार, सिंचाई व्यवस्था, यातायात सुविधा आदि को देखते हुए इन स्थानों का वर्गीकरण और प्राथमिकता निर्धारण की जा सकती है। फल और जूस के क्षेत्र में अब बड़ी कम्पनियाँ प्रवेश कर रही हैं जो उत्पादन से पहले ही पूरे-पूरे खेतों का सौदा कर लेती हैं। कई फसलों के तो बीमे की भी सुविधा है और कोई प्रकोप आदि होने पर आर्थिक हानि से बचा जा सकता है। भण्डारण की नयी नयी तकनीकें भी प्रयोग में हैं, फलोद्यान से पैकिंग और ट्रांसपोर्टेशन के क्षेत्र में भी उद्योग के अवसर पैदा होंगे। जूस, जैली और जैम बनाने के लिए कुटीर उद्योग भी पनप सकते हैं।

एक बार प्रवासी लोग फलोद्यान की इस गतिविधि से जुड़ जाते हैं तो उनका अपनी मिट्टी की ओर लौटना सम्भव हो सकता है, यही नहीं, उनकी आने वाली पीढियाँ भी अपने मूल से जुड़ सकती हैं। प्रवासी लोगों के आवागमन से गाँवों में न केवल सहकारिता व सौहार्द का वातावरण बन सकेगा बल्कि आय भी बढ़ेगी, भूमि का सदुपयोग होगा और चीड़ जैसे हानिकारक वृक्ष भी नहीं पनपेंगे। जंगली जानवरों से निजात मिलेगी और वर्षा का क्षेत्र भी बढेगा जिसके कई लाभ हैं। गाँव से पलायन रोकने और वहाँ की चहल-पहल लौटाने की दिशा में यह एक बड़ा कदम होगा। ताजे फलों के लोभ में पर्यटक भी आकर्षित होंगे और उनका उचित स्वागत-सत्कार फलोद्यान को पर्यटन से भी जोड़ सकता है। फलोद्यान और पर्यटन मिल कर इस राज्य का कायाकल्प कर सकते हैं। राज्य के आर्थिक सर्वेक्षण पत्र में इसे रेखंकित किया भी गया है : ''प्रदेश के लगभग 60 प्रतिशत परिवार कृषि पर आधारित हैं,

अत: प्रदेश के विकास का Core engine कृषि/बागवानी ही हो सकता है। हमें बागवानी आधारित एकीकृत कृषि को बढ़ावा देने तथा होमस्टे/ग्रामीण पर्यटन से पारिवारिक आय को बढ़ाने की आवश्यकता है। कृषि में हमारा अप्रोच मृदा से बाजार (Soil to Market) होना आवश्यक है।''

जय भोले नाथ! जय हो प्रभु!

प्राय: कहा जाता है कि तीर्थाटन और देवदर्शन का अवसर सौभाग्य से ही मिलता है, यह भी कि जब ईश्वर की इच्छा होती है तभी इसका संयोग बनता है अथवा जब वहाँ से बुलावा आता है, तभी यात्रा सम्भव हो पाती है। इन पंक्तियों के लेखक ने स्वयं इसका अनुभव किया है। वर्ष 2011 तक द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से ग्यारह के दर्शन कर लेने के उपरान्त श्री केदारेश्वर ज्योतिर्लिंग की यात्रा ही शेष रह गई थी। तब से इसके लिए प्रयास हो रहे थे, जून 2013 में इसका यात्रा कार्यक्रम निश्चित हुआ था किन्तु प्रस्तावित तिथियों से पहले ही केदारघाटी में

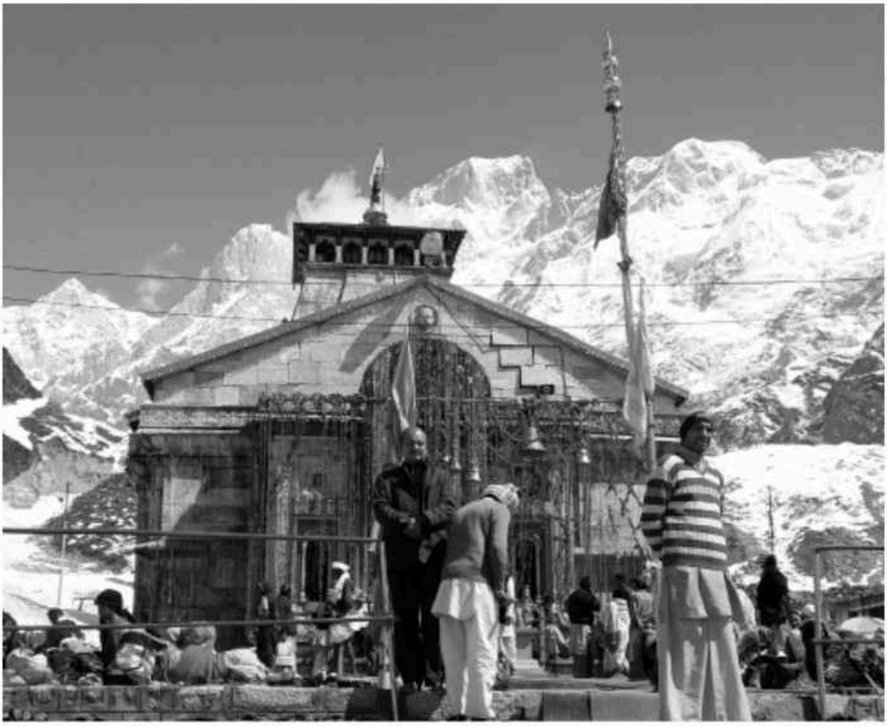

जलप्रलय हो गया। बाबा के दर्शन की इच्छा इस वर्ष जाकर पूर्ण हो पाई जब विगत पहली मई को सपरिवार श्री केदारनाथ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। श्री केदारेश्वर के दर्शन सुख का वर्णन गिरा की सामर्थ्य से बाहर है, इसलिए इसका वृतांत न देकर यहां द्वादश ज्योतिर्लिंग स्तोत्र तथा श्री शिव महापुराण की भाषा (हिन्दी) मूल रूप में दी जा रही है। इसके साथ श्री केदारनाथ का संक्षिप्त परिचय भी है।

उत्तराखंड में हिमालय पर्वत की गोद में केदारनाथ मंदिर बारह ज्योतिर्लिंग में सम्मिलित होने के साथ चार धाम और पंच केदार में से भी एक है। यहाँ की प्रतिकूल जलवायु के कारण यह मंदिर अप्रैल से नवंबर माह के मध्य ही दर्शन के लिए खुलता है। पत्थरों से कत्यूरी शैली में बने इस मंदिर के बारे में कहा जाता है कि इसका निर्माण पांडव वंशी जनमेजय ने कराया था। यहाँ स्थित स्वयंभू शिवलिंग अति प्राचीन है। आदि शंकराचार्य ने इस मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया था। केदारनाथ पर्वत शिखर के पाद में, चौरीबारी हिमनद के कुंड से निकलती मंदाकिनी नदी के समीप स्थित केदारनाथ मंदिर ऊँचाई पर अवस्थित है। यह मंदिर वास्तुकला का अद्‌भुत व आकर्षक नमूना है।

केदारनाथ धाम की बड़ी महिमा है। उत्तराखंड में गंगोत्री एवं यमुनोत्री के साथ बद्रीनाथ और केदारनाथ, प्रधान तीर्थ हैं, इन दोनों के दर्शनों का बड़ा ही माहात्म्य है। केदारनाथ के संबंध में लिखा गया है कि जो व्यक्ति केदारनाथ के दर्शन किये बिना बद्रीनाथ की यात्रा करता है, उसकी यात्रा निष्फल जाती है और केदारनाथ सहित नर-नारायण मूर्ति के दर्शन का फल, समस्त पापों का नाश तथा मोक्ष की प्राप्ति बतलाया गया है।

केदारनाथ मंदिर का वास्तुशिल्प अनूठा है। मंदिर एक छह फीट ऊँचे चौकोर चबूतरे पर बना हुआ है। मंदिर में मुख्य भाग मंडप और गर्भगृह के चारों ओर प्रदक्षिणा पथ है। बाहर प्रांगण में नंदी बैल वाहन के रूप में विराजमान हैं।

श्री केदारनाथ द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक है। इसकी पूजा प्रातःकाल में शिव-पिंड को प्राकृतिक रूप से स्नान कराकर उस पर घी-लेपन से आरम्भ की जाती है। तत्पश्चात धूप-दीप जलाकर आरती उतारी जाती है। इस समय यात्री-गण मंदिर में प्रवेश कर पूजन कर सकते हैं, लेकिन संध्या के समय भगवान का श्रृंगार किया जाता है। उन्हें विविध प्रकार के चित्ताकर्षक ढंग से सजाया जाता है। भक्तगण दूर से केवल इसका दर्शन ही कर सकते हैं। केदारनाथ के पुजारी मैसूर के जंगम ब्राह्मण ही होते हैं।

भगवान शंकर महिष की पीठ की आकृति-पिंड के रूप में श्री केदारनाथ में पूजे जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि जब भगवान शंकर, महेश के रूप में अंतर्ध्यान हुए, तो उनके धड़ से ऊपर का भाग नेपाल की राजधानी काठमाण्डू में प्रकट हुआ, जहाँ पशुपतिनाथ का मंदिर है। शिव की भुजाएं तुंगनाथ में, मुख रुद्रनाथ में, नाभि मदमदेश्वर में और जटा कल्पेश्वर में प्रकट हुए। इसलिए इन चार

स्थानों सहित श्री केदारनाथ को पंचकेदारकहा जाता है। यहां शिवजी के भव्य मंदिर बने हुए हैं।

जून 2013 में आई भीषण आपदा में भी केदारनाथ मन्दिर सुरक्षित रहा, पर्वत से टूट कर मन्दिर के पीछे आई एक शिला ने बाढ़ का सारा दबाव अपने ऊपर ले लिया था, इसे भीम शिला का नाम दिया गया है। यह भी एक रहस्य है कि हाल ही में अप्रैल 2015 में नेपाल में आये भीषण भूकम्प में पशुपतिनाथ मन्दिर भी पूर्णत: सुरक्षित रहा। शिव महापुराण की कथा के अनुसार भगवान शिव के केदारनाथ में अवस्थित हाने समयउनके महिष रूप का अगला भाग ही नेपाल में पशुपतिनाथ के रूप में प्रकट हुआ था।

लेखक को द्वादश ज्योतिर्लिंग के साथ देश के अनेक प्रसिद्ध शक्तिपीठों, देश के चारों धामों, चारों कुम्भ क्षेत्रों, सातों मोक्ष तीर्थों, भगवान राम से सम्बन्धित सभी प्रमुख स्थानों, भगवान कृष्ण के जन्म स्थान, सिद्धि विनायक मन्दिर, हनुमत तीर्थ, भगवान बुद्ध के पूरे परिपथ, भगवान महावीर की जन्मस्थली सहित जैन तीर्थो तथा सुप्रसिद्ध स्वर्णमन्दिर में जाने का सौभाग्य मिला है। इसके अतिरिक्त मुस्लिमों एवं ईसाइयों के कुछ श्रद्धा केन्द्रों को देखने का भी अवसर मिला है। इस सब के लिए जीवन में

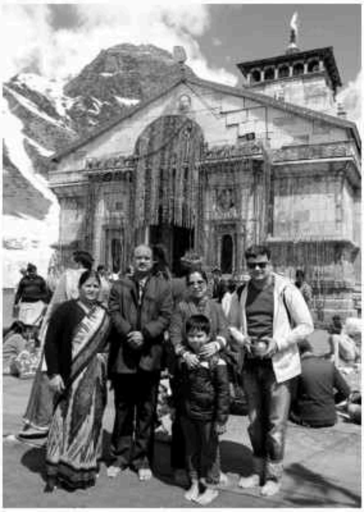

कोई विशेष योजना बनी हो, ऐसा निश्चय ही नहीं था किन्तु यह सम्भव हो पाया तो इसके पीछे अवश्य ही ईश्वरीय इच्छा होगी। जीवन में ऐसा भी संयोग बना कि एक ही दिन में चार शंकराचार्यो ;कांची के पीठाधीश, उनके उत्तराधिकारी, दक्षिण के एक वैष्णव शंकराचार्य तथा दक्षिण की ही एक अन्य पीठ के शंकराचार्यद्ध से भेंट का अवसर मिला। सौभाग्य एवं संयोग ने साधु संतों के सानिध्य का भी अवसर दिया जिसमें नैमिसारण्य के दण्डीस्वामी (ब्रह्मलीन) नारदानन्द सरस्वती एवं अखण्ड बोध आश्रम की श्री माँ पूर्णप्रज्ञा प्रमुख हैं। तीर्थो में आनन्दातिरेक

के भी अनेक अवसर आये जो अविस्मरणीय हैं। तिरुपति देवएयानम् में ऐसा ही एक प्रसंग उपस्थित हुआ जब भगवान की डोली का मार्ग खुला रखने के लिए दर्शनार्थियों को एक ओर किया जा रहा था किन्तु चार में से एक डोलीवाहक ने लेखक को बुलाकर डोली उसके कांधे पर रख दी जिसे मुख्य मन्दिर तक ले जाने का पुण्यलाभ मिला। इसी यात्रा में आकस्मिक रूप से श्रीकालहस्ति जाने का सुअवसर भी मिल गया था, जो दक्षिण भारत का प्रसिद्ध शिवमंदिर है।

हाल ही में श्री केदारनाथ यात्रा से पहले भी ऐसा ही सुन्दर क्षण आया जब बिना किसी पूर्व योजना के प्रसिद्ध शक्तिपीठ श्री कालीमठ के पुण्य दर्शन हो गये। विषय उपलब्धि के तौर पर लेने का नहीं, अपितु ईश्वर के समक्ष नतमस्तक होने का है, कि सामान्य गृहस्थ होते हुए भी लेखक पर उसने तीर्थाटन के लिए सन्यासियों जैसा स्नेह बरसाया। यह स्नेह 'गगरी' के सम्मानित पाठकों से साझा करने का लोभ संवरण कर पाना लेखक के लिए कठिन है।

श्रीदेव सुमन का सुरम्य चम्मा

बात सीधे अमर षहीद श्रीदेव सुमन से आरम्भ न कर हम हाल ही में सम्पन्न हुए फुटबॉल के सबसे बडे आयोजन के विश्व कप से करते हैं, जिसके फाइनल मैच में विजेता फ्रांस ने क्रोशिया को पराजित किया। बहुतों ने तो इस देश का नाम सुना तक नहीं होगा, जिसकी जनसंख्या महज 41 लाख 63 हजार 631 है, यह उत्तराखंड तो छोड़िये, इसके 10 पर्वतीय जिलों की जनसंख्या 48 लाख 50 हजार 274 (2011 की जनगणना के अनुसार) से भी बहुत कम है। छोटे से देश क्रोशिया ने विश्व कप की प्रबल दावेदार माने जाने वाली अर्जेंटीना, आइसलैंड, डेनमार्क, रूस और इंग्लैंड जैसी टीमों को परास्त किया। आखिरकार इस छोटे से देश में, जिसके पास अपना फुटबॉल क्लब तक नहीं है, ऐसी क्या विशेष बात है कि उसने अपने प्रदर्शन से विश्व भर के लोगों का दिल जीत लिया? कहना पड़ेगा कि उस देश की माटी में कुछ तो है, जो उसके युवाओं में ऐसा जज्बा भर देती है।

हमारे देश भारत की माटी में भी बहुत सारी विशेषताएं हैं। यहाँ की सभ्यता और संस्कृति अति प्राचीन है, जिसने विश्व को शांति का उपदेश दिया। इस माटी से उपजे बौद्ध धर्म ने चीन, जापान, म्यांमार, इंडोनेशिया और कोरिया सहित पूर्वी दुनिया के सभी देशों तक अपना विस्तार किया। भारत के 'वसुधैव कुटुंबकम' और 'सर्वे भवंतु सुखिन:' जैसे चिंतन ने पूरे विश्व को प्रभावित किया है। यहाँ से निकले योग को दुनिया के अधिकांश देशों ने मान्यता दी है और अपनाया भी है। पश्चिम के बहुत सारे विद्वान मानते हैं कि विश्व में शांति और सद्भाव भारत में विकसित ज्ञान और अध्यात्म के बल पर ही मिलेगा। भारत की माटी में जन्मा सिख संप्रदाय विश्व के अनेक भागों में, वहाँ की समृद्धि में ही नहीं, मानवता के लिए अपना योगदान देते हुए सराहना पा रहा है। विश्व के अनेक देशों में फैले हुए इस्लाम में, जहाँ आपस में निरंतर संघर्ष और युद्धोन्माद का वातावरण है, वहीं भारत में इसके 72 से भी अधिक मत-मतांतर आपस में शांति के साथ रह रहे हैं। कट्टरता में जकड़ा होने के बावजूद यहां का मुस्लिम समुदाय अपेक्षाकृत अच्छा माना जाता है, यह भारत की माटी की विशेषता है। 'विविधता में एकता' और 'सर्व धर्म सम भाव' यहाँ की सबसे बड़ी शक्ति है।

हमारा प्रदेश उत्तराखंड, जो उत्तरांचल नाम से भारत का 28वाँ राज्य बना था, बहुत सी विशेषताएं लिए हुए हैं। इस प्रदेश को देवभूमि कहा जाता है, हिंदुओं के चार प्रसिद्ध धामों में से एक, श्री बद्रीनाथ यहीं पर है तथा द्वादश ज्योतिर्लिंगों में

सम्मिलित श्री केदारनाथ भी इसी पवित्र भूमि में है। जीवनदायिनी मां गंगा का उद्गम गंगोत्री और देश की बड़ी नदियों में सम्मिलित भगवान कृष्ण की क्रीडा साक्षी जमुना भी यही यमुनोत्री से प्रारंभ होती है। सिखों का पवित्र तीर्थ हेमकुंड साहिब और मुस्लिमों की आस्था का केंद्र पिरान कलियर भी इसी राज्य में है। पांचवें धाम के रूप में विकसित जागेश्वर के अलावा बैजनाथ, कटारमल का सूर्य मंदिर और पाताल भुवनेश्वर सहित अनेकों तीर्थस्थल यहाँ पर हैं। महाभारत युद्ध में विजय के बाद पांण्डवों ने इसी प्रदेश में स्वर्गारोहण किया था।

देवभूमि के साथ उत्तराखंड वीर भूमि है। ऐसा माना जाता है कि यहां के लगभग सभी परिवारों से युवा भारत की सेना और अर्ध सैनिक बलों में सेवा देते हैं, प्रदेश में बहुत बड़ी जनसंख्या पूर्व सैनिकों की है। इस प्रदेश की प्रसिद्ध गढ़वाल राइफल और कुमाऊं रेजिमेंट कई युद्धों में अपना पराक्रम दिखा चुकी हैं। यहाँ के युवाओं के लिए सेना में जाना गर्व की बात मानी जाती है और इंडियन मिलिट्री एकेडमी से पास आउट होने वाले सैन्य अधिकारियों में यहाँ के युवाओं की काफी बड़ी संख्या होती है।

देवभूमि और वीरभूमि होने के साथ यह राज्य शिक्षा के लिए भी प्रसिद्ध है। देश की राजधानी देहरादून कौरव और पांडवों के कुलगुरु आचार्य द्रोणाचार्य कर्मभूमि रही है। ऐसा माना जाता है कि कोटद्वार के पास कण्वाश्रम महाकवि कालिदास का वास थी। आज भी देहरादून में प्रसिद्ध दून स्कूल सहित अनेकों बड़े शिक्षा संस्थान है तथा मसूरी और नैनीताल भी शिक्षा के बड़े केंद्र के रूप में जाने जाते हैं। अपने बच्चों को देहरादून में शिक्षा दिलाना देश के कई भागों में गौरव की बात मानी जाती है। इस प्रदेष की माताएं अपना पेट काटकर और अनेकों कष्ट सहकर भी बच्चों को पढ़ाती-लिखाती है और उसी का परिणाम है कि इस राज्य की साक्षरता दर अनेक प्रदेशों (राष्ट्रीय औषत 74.04 प्रतिशत) की तुलना में काफी ऊंची (79.63 प्रतिशत) है।

देवभूमि, वीरभूमि व ज्ञानभूमि उत्तरांचल तपोभूमि भी है। यह अनेक ऋषि-मुनियों की तपस्थली रही है, अनेकों साधु सन्यासी हिमालय की कंदराओं में पुण्यसलिला भागीरथी के किनारे साधना करते रहे हैं। जलमग्न हो चुका टिहरी नगर प्रसिद्ध संत स्वामी रामतीर्थ की तपोभूमि रहा है, स्वामी विवेकानंद जी भी अनेक बार यहां आए हैं। देश के चार कुंभ क्षेत्रों में से एक हरिद्वार साधु-संतों का प्रमुख आवास रहती आयी है और ऋषिकेश को ज्ञान, ध्यान एवं योग का केंद्र माना जाता है। यहां बलिदान की परंपरा भी बहुत पुरानी है, इस प्रदेश में जहां तीलू रोतेली

जैसी वीरांगना ने जन्म लिया, वहीं कर्मठ वीर माधो सिंह भंडारी ने असंभव को संभव करने का अनोखा उदाहरण भी प्रस्तुत किया।

उत्तराखण्ड वीर बलिदानियों की भूमि भी है। चौरासी दिनों के उपवास के बाद आत्मोत्सर्ग करने वाले प्रसिद्ध बलिदानी अमर शहीद श्रीदेव सुमन ने भी इसी पुण्य भूमि में जन्म लिया था और यहीं उनका बलिदान भी हुआ। वे केवल बलिदानी ही नहीं थे, अप्रतिम स्वतंत्रता सेनानी भी थे, जिन्होंने अपनी मातृभूमि को गुलामी की बेड़ियों से मुक्त कराने के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया। उन्होंने जीवन भर अथक परिश्रम और अटूट संघर्ष के द्वारा वह ऊंचाई प्राप्त कर ली, जहां कोई विरला ही पहुँच सकता है। पवित्र भारत भूमि के कंकर-कंकर में शंकर का वास माना जाता है, इस देश के हर कोने में बलिदानियों का जन्म हुआ है। वीर शिवाजी, महाराणा प्रताप, गुरु गोविंद सिंह, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, पहले स्वतंत्रता संग्राम के नायक मंगल पांडे, उनके बाद चंद्रशेखर आजाद, भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु, अशफाक उल्ला खान, गणेश शंकर विद्याथएँ और परम वीर चक्र विजेता अब्दुल हमीद सहित देष मर मिटने वालों की सूची बहुत लम्बी है। उन को जन्म देने वाली भूमि, उनका गाँव, गली-मौहल्ला, जिला और प्रदेश, सभी धन्य हैं। ऐसी वीर प्रसूता भूमि की गणना करते समय अनायास ही श्रीदेव सुमन के गांव जौल़ (पट्टी बमुण्ड, जिला टिहरी गढ़वाल) का नाम भी स्मरण हो जाता है। यह छोटा सा गाँव 'चम्मा' नामक कस्बे (नगर पंचायत) के निकट है। जब-जब श्रीदेव सुमन और उनके गाँव 'जौल़' की चर्चा होती है तो स्वाभाविक रूप से चम्मा का भी ध्यान हो आता है। हिमाचल प्रदेश के प्रसिद्ध जिले 'चम्बा' के साथ नाम की साम्यता होने के कारण 'चम्मा' को भी अब प्राय: 'चम्बा' के तौर पर ही जाना जाता है।

जब हम चम्मा की चर्चा करते हैं तो इसे अपने महान राष्ट्र और गर्व करने योग्य राज्य के सारे गुणों के साथ इसी कड़ी में आगे गुंथती माला के मोती के रूप में पाते हैं। इस नगरी की पहले 'चम्मा खाल़' के रूप में एक छोटे से स्थान के रूप में पहचान थी। गढ़वाली में खाल़ उस स्थान को कहते हैं जहाँ दो पर्वतों के बीच में आवागमन के लिए निचला स्थान (दर्रा) होता है और उसके नीचे किसी नदी का उद्गम। चम्मा शब्द 'अचंभा' अथवा गढ़वाली शब्द 'चम्म' (गायब) का पर्याय है। कहा जाता है कि यहां किसी व्यक्ति के विश्राम करते समय अप्सराओं ने उसका हरण (गायब) कर लिया था। चम्मा में प्रत्येक वर्ष 8 गते (प्रतिष्ठा) वैशाख को एक थौल़ (मेल) का आयोजन होता है, जहां लैंसडाउन से गढ़वाल राइफल की एक टुकड़ी आकर प्रथम विश्वयुद्ध के 'विक्टोरिया क्रॉस' विजेता गबर सिंह की प्रतिमा

को सैल्यूट करती है। परम पराक्रमी गबर सिंह चम्मा के पास के मंज्यूड़ गांव के निवासी थे। चम्मा के आस-पास के बहुत सारे गांव सैन्य बहुल हैं और इनकी आबादी में बहुत बड़ी संख्या पूर्व सैनिकों की है। चम्मा से उत्तर में, हिमालय पर्वत श्रृखला की बंदरपुंछ जैसी हिमाच्छादित चोटियां विहंगम दृष्य उपस्थित करती हैं। इसके उत्तर और पूरब की ओर से भागीरथी नदी बहती है और पश्चिम में पर्वत की चोटी पर माँ सुरकंडा देवी का सुप्रसिद्ध मंदिर है। दक्षिण में हेंवल नदी बहती है जिसके किनारे जड़दार गाँव है, जिसे माँ सुरकंडा का मायका माना जाता है। इस गाँव के विजय जड़धारी 'बीज बचाओ आंदोलन' के सूत्रधार हैं। चम्मा टिहरी जिले का बहुत बड़ा जंक्शन है, जहाँ से ऋषिकेश, मसूरी, टिहरी (जलमग्न), उत्तरकाशी, नई टिहरी, रानीचौरी और नागदेव पथल्ड के लिए सात सड़कें जाती हैं। पुराने समय से ही यह बहुत सारी सांस्कृतिक शैक्षिक और सामाजिक गतिविधियों का केंद्र रहता आया है। गढ़वाल विश्वविद्यालय, बादशाही थौल परिसर तथा पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय का रानीचौरी परिसर इससे मिला हुआ है। गर्मियों में सैलानियों के आकर्षण का बड़ा केंद्र काणाताल और पर्यटन के प्रमुख केंद्र के रुप में विकसित हो रही टिहरी झील इससे कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर हैं। हाल ही में उत्तराखंड की राजधानी देहरादून में चर्चित आंदोलनकारी और प्रखर लेखक स्वगएँय कुंवर प्रसून की पुण्यतिथि पर एक गोष्ठी का आयोजन हुआ था, वे चम्मा के पास 'कुड़ी' गाँव के रहने वाले थे। चम्मा और उसके आसपास के लोग अपनी कर्मठता के साथ चुनौती स्वीकार करने वाले स्वभाव के लिए जाने जाते हैं। एक छोटे से स्थान से एक बड़े नगर के रूप में यहां के लोगों ने असाधारण उद्यम से व्यापार व व्यवसाय के प्रत्येक क्षेत्र में वर्चस्व स्थापित किया है। उन्होंने किसी का मुंह नहीं ताका बल्कि सभी क्षेत्रवासियों ने मिल कर स्वयं को योग्य एवं समर्थ सिद्ध करते हुए यह उपलब्धि हासिल की है।

अमर शहीद श्रीदेव सुमन की आरंभिक शिक्षा-दीक्षा चम्मा में ही हुई थी। यहीं उनमें वह जज्बा विकसित हुआ जिसके चलते वे जनता को दासता से मुक्त कराने वाले युद्ध का अग्रिम सेनानी बन गये। पास ही के ग्राम जौल् में 12 मई, 1915 को जन्म लेने के बाद, 1930 में मात्र 15 वर्ष की आयु में वे देहरादून के सत्याग्रही जत्थे में शामिल होकर 14-15 दिन की जेल भुगत आये। वहीं कुछ समय अध्यापकी करने के बाद लाहौर से उच्च शिक्षा लेकर जनजागरण के लिए पत्रकारिता को अपना लिया और भाई परमानन्द के अखबार 'हिन्दू', फिर 'धर्म राज्य' तथा इलाहाबाद में 'राष्ट्र मत' नामक समाचार पत्रों से जुड़ गये।

'गढ़देश-सेवा-संघ' की स्थापना करने के बाद उन्होंने 1938 में जिला गढ़वाल और राज्य गढ़वाल की एकता का नारा बुलन्द कर दिया। 1939 को देहरादून में 'टिहरी राज्य प्रजा मण्डल' की स्थापना हुई, जिसमें श्रीदेव सुमन संयोजक मन्त्री चुन लिए गये। अगस्त 1942 में आरम्भ हुए 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के दौरान 29 अगस्त को उन्हें देवप्रयाग में ही गिरतार कर लिया गया और 10 दिन मुनि की रेती जेल तथा ढ़ाई महीने देहरादून जेल में रखने के बाद 15 महीने आगरा जेल में नजरबन्द रखा गया। इतने संघर्षों के बावजूद उनका चम्मा से जुड़ाव कम नहीं हुआ और 19 नवम्बर, 1943 को आगरा जेल से रिहा होने के बाद वे फिर से चम्मा में डट गये। चम्मा में ही 27 दिसम्बर, 1943 को उन्हें टिहरी राजसत्ता द्वारा गिरतार कर लिया गया। चम्मा से उनकी यह अन्तिम बिदाई सिद्ध हुई क्योंकि इसके बाद 30 दिसम्बर, 1943 से 25 जुलाई, 1944 तक 209 दिन इन्होंने टिहरी की नारकीय जेल में बिताये, जिनमें 3 मई 1944 से आरम्भ हुआ उनका वह 84 दिनों का ऐतिहासिक उपवास भी था, जिसका अन्त 25 जुलाई 1944 की सायंकाल 4.00 बजे श्रीदेव सुमन के प्राणोत्सर्ग के साथ 1944 से आरम्भ हुआ उनका वह 84 दिनों का ऐतिहासिक उपवास भी था, जिसका अन्त 25 जुलाई 1944 की सायंकाल 4.00 बजे श्रीदेव सुमन के प्राणोत्सर्ग के साथ हुआ।

माटी की विशेषता का संदर्भ ले कर फुटबॉल विश्वकप के फाइनल तक क्रोशिया की यात्रा से आरंभ कर अपने देश व राज्य के गर्वोल्लेख के साथ अमर शहीद श्रीदेव सुमन की पुण्यतिथि पर उनके गांव और उनके पढ़ने-बढ़ने के केंद्र चम्मा की चर्चा इसलिए की गई है कि हम उस माटी को नमन करने और चूमने की ओर बढ़ सकें जो ऐसे महान पुरुष राष्ट्र को सौंपकर धन्य हो गई। इन पंक्तियों के लेखक का जन्म चम्मा के पास के एक गाँव में होने के कारण यह बात पुलकित कर देने वाली है। लेखक के दादा और अमर शहीद श्री देव सुमन के पिता का आपसी मित्र एवं संबंधी होना तथा लेखक के पिता का श्रीदेव सुमन का सहयोगी होने के कारण राजदण्ड का भागी बनना भी अपने आप में कृतकृत्य होने का बोध कराने वाला है। अमर शहीद श्री देव सुमन की पुण्यतिथि पर उन्हें शत-शत नमन्।

पर्यटन का बदलता स्वरूप

दो शब्दों, 'शौक व मौज' को रुचि व आनंद के रूप में लेने पर वास्तविक आनन्द रुचि के विषय में ही नजर आता है। पर्यटन भी प्राय: शौक-मौज का विषय बताया जाता रहा है, यद्यपि धार्मिक पर्यटन का आधार आस्था, ऐतिहासिक का जिज्ञासा, साहसिक का जीवट व चुनौती तथा विकास का उत्सुकता तथा प्राकृतिक पर्यटन के लिए रमणीयता को मुख्य कारण माना जाता है। पर्यटन की पहली कड़ी जानकारी होना है, जिसका स्रोत अनुभव प्राप्त व्यक्ति, पुस्तकें व साहित्य तथा समाचार पत्र जैसे संवाद माध्यम होते हैं जो इसमें प्रेरक भूमिका निभाते हैं। जानकारी होने से पर्यटन बढ़ता है और पर्यटन से नई जानकारियां प्राप्त होती हैं, यह विभिन्न क्षेत्रों के बीच बड़े संवाद सेतु का कार्य करता है। पर्यटन से किसी स्थान की भौगोलिक, सामाजिक, ऐतिहासिक एवं आर्थिक स्थिति का ज्ञान होने के साथ ही वहाँ के निवासियों के चिंतन की दिशा और वहां भ्रमण करने वालों की क्षेत्र व लोगों के प्रति धारणा भी बनती है।

किसी भी समाज व क्षेत्र एवं राष्ट्र को गर्व अथवा लज्जा का अनुभव कराने के लिए यह धारणा बहुत महत्व रखती है। स्वयं पर गर्व करने अनुभव करने वाला समाज अन्य की दासता स्वीकार नहीं कर सकता। गर्व करने योग्य अति प्राचीन संस्कृति वाले भारत को अपने आधीन रखने को विदेशी आक्रांताओं ने, इसीलिए मुख्य चोट मान बिंदुओं पर ही की। उनका विध्वंस तो किया ही, इसकी व्यवस्था भी की कि उनके विषय में कोई जानकारी भी न मिले जिससे कोई उन स्थानों पर न जा पाये, इसलिए पर्यटन इसका मुख्य निशाना बना। 1947 में देश के स्वतंत्र हो जाने के बाद भी यह प्रवृत्ति बनी रही। नालंदा, तक्षशिला व विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालय, गणित व खगोल शास्त्र तथा योग व आयुर्वेद के चिकित्सा केंद्र और भारतीय वास्तुकला व स्थापत्य शैली जैसी पहचान को प्रयत्नपूर्वक छिपा कर इतिहास के नाम पर मुगलों का वर्णन व ऐतिहासिक धरोहरों के रूप में पर्यटन की मुख्य पहचान आगरा के ताजमहल, लाल किले, व कुतुब मीनार को बना दिया गया। सामन्ती सोच वाली एकाधिकारवादी राजनीति के द्वारा प्रोत्साहित विकृत इतिहास, पूर्वाग्रही साहित्य व दुराग्रही पत्रकारिता के षडयंत्रकारी चलन से भारत के मुख्य एवं वास्तविक पर्यटन का क्षेत्र लम्बे समय तक उपेक्षित बना रहा।

अपने राष्ट्र एवं संस्कृति के लिए अन्तर्मन में गर्व का भाव बने रहने से भारत में लगभग 1000 वर्षों तक दासता से मुक्ति के लिए निरंतर संघर्ष चलते रहे

और संस्कृति को जीवित रखने की लालसा के कारण शिक्षा के साथ-साथ जन चेतना की जागरण के प्रयास भी हुए। इसका परिणाम स्वतंत्रता प्राप्ति के रूप में तो सामने आया ही, अपने खोए हुए वैभव की पुनः प्राप्ति और गौरव के प्रकटीकरण की आवश्यकता भी अनुभव हुई। भारत की सांपों, मदारियों और भिखारियों वाले देश की छवि से बाहर निकलते हुए राष्ट्र ने इसी भावना से अपनी महान धरोहर और मान बिंदुओं की खोजबीन आरंभ कर उन्हें सामने लाने के प्रयास आरंभ किये, जिससे विश्व को भारत की महान संस्कृति का परिचय मिलने लगा। पर्यटन इस ओर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

भारत में मन्दिर सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्रियाकलापों का केन्द्र रहे हैं, इनके साथ गुफाओं और मठों में भीऐसी गतिविधियों चलती थीं। दासता के कालखण्ड में इनका विध्वंस होने के बावजूद काफी मन्दिर बचे रहे, खासतौर पर दक्षिण भारत में, किन्तु ऐतिहासिक महत्व का होने पर भी, धर्मनिरपेक्षता के नाम पर इन्हें पर्यटन केन्द्रों के रूप में नहीं बढ़ाया गया। शिक्षा के प्रसार और बीसवीं सदी के अन्तिम वर्षों से हिन्दू अस्मिता तथा धार्मिक पुनर्जागरण के प्रयासों के चलते देश के आस्था केन्द्रों और मानबिन्दुओं का गौरव लौटाने के श्रीराम जन्मभूमि आन्दोलन जैसे बड़े अभियानों का जनमानस पर भारी प्रभाव पड़ा। इन प्राचीन धरोहरों के प्रति जनता के बढ़ते हुए आकर्षण के रूप में सामने आने के सकारात्मक परिणाम से बड़ा गुणात्मक परिवर्तन आया है। मुगल विरासतों और मजारों में पर्यटन घटने के समाचार हैं जबकि ऐया की प्राचीन ऐतिहासिक व धार्मिक धरोहरों के प्रति रुचि जाग्रत होती दिख रही है।

जनसामान्य को अब जानकारी होने लगी है कि महाराष्ट्र में यूनेस्को की विश्व विरासत में सम्मिलित हिंदू, बौद्ध व जैन धर्म से सम्बंधित कलाकृतियों वाली गुफायें और मन्दिर परिसर विशाल चट्टानों को काट कर तराशे गये हैं। एलोरा गुफा में हिंदू महाकाव्यों और पौराणिक कथाओं को प्रदर्शित करने वाली मूर्तिया स्थित हैं। इसी प्रकार कर्नाटक में विजय नगर साम्राज्य के वैभव का प्रतीक और 1986 में यूनेस्को की विश्‍व धरोहर में भी शामिल हम्पी शहर विशाल नक्काशीदार मंदिरों खास तौर पर काफी प्रसिद्ध विरुपाक्ष मंदिर हैं। उडुपी में नक्काशीदार मंदिर और शानदार इमारतें प्राचीन ऐतिहासिक धरोहरें हैं। दक्षिण भारत में ही प्रसिद्ध बादामी में ख़ूबसूरत रॉक कट गुफायें, मंदिर और स्मारक हैं। उड़ीसा में कोर्णर्कसूर्य मन्दिर और मध्य प्रदेश में खजुराहो भी ऐसी ऐतिहासिक धरोहरों के केन्द्र हैं। अब

बड़ी संख्या में पर्यटक इन सारे स्थानों पर जा रहे हैं। अनुमानतः 600-1000 ईसवी के दौरान बनी इन ऐतिहासिक धरोहरों को विश्व पर्यटन मानचित्र पर लाने के लिए बहुत समय तक कोई विशेष प्रयास नहीं हुए थे।

भारत में ऐतिहासिक पर्यटन अधिकांशतः धार्मिक रूप से जुड़ा है किंतु धार्मिक पर्यटन का आयाम बहुत विस्तृत है। बहुत सारे पर्यटक देश के चारों धामों, चारों कुंभ क्षेत्रों, भगवान शिव के सभी बारह ज्योतिर्लिंगों, बहुत सारे शक्तिपीठों, श्री राम जन्मभूमि अयोध्या, श्री कृष्ण जन्मस्थान मथुरा के साथ ही अमरनाथ गुफा, तिरुपति बालाजी, श्री काळहस्ति, गोकर्ण महाबलेश्वर, श्री सिद्धिविनायक, करणी देवी (चूहों का मंदिर) और मोक्षतीर्थ गया सहित हजारों तीर्थस्थलों की वर्ष भर यात्रा करते हैं। कई स्थानों, जैसे काशी, वृंदावन और ऋषिकेश के अलावा सिक्ख तीर्थ स्थलों की भी हजारों लोग यात्रा करते हैं वैशाली और पालिताना जैन धर्म के तथा बोधगया और कुशी नगर बौद्ध धर्म के बड़े आस्था केन्द्र है। इन सभी स्थानों पर विदेशी पर्यटक भी अच्छी संख्या में सम्मिलित होते हैं। धर्मनिरपेक्षता के आडम्बर के कारण इन स्थानों पर सरकार की भूमिका कानून व्यवस्था बनाने तक की सीमित रहती आई है, पर्यटकों की सुविधा, आकर्षण एवं प्रोत्साहन के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं किए गए।

2014 के बाद प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की विशेष रुचि के चलते पर्यटन, विशेषकर धार्मिक-सांस्कृतिक आवागमन की स्थिति में काफी परिवर्तन आया है, एक ओर जहाँ अयोध्या में श्रीराम जन्मभूमि का निर्माण कार्य प्रगति पर है, वहीं काशी का भी कायाकल्प हो चुका है। 2013 की त्रासदी के बाद केदारनाथ में निर्माण कार्य पूरे हुए हैं और उज्जैन का महाकाल मंदिर भी संवरने जा रहा है। धार्मिक पर्यटन राष्ट्र को एकसूत्र में बांधने में इतना सहायक है कि दक्षिण के लोग बद्री-केदार की यात्रा पर निकलते हैं, जबकि उत्तरी राज्यों के निवासी दक्षिण की यात्रा पर। पूर्वी राज्यों से यात्री द्वारका दर्शन के लिए आते हैं और पश्चिमी क्षेत्र के लोग जगन्नाथपुरी की यात्रा पर।

सड़कों के विस्तारीकरण और नए हाईवे तथा एक्सप्रेसवे के बनने के साथ ही द्रुत गति की ट्रेनों का संचालन होने से यात्रियों की संख्या में भारी वृद्धि हुई है। अब लंबी यात्राएं पहले की अपेक्षा लगभग आधे समय में संपन्न होने लगी हैं जिससे पर्यटन को भी प्रोत्साहन मिल रहा है। भारत भौगोलिक व प्राकृतिक रूप तथा बोली-भाषा, खान-पान, रहन-सहन एवं तीज-त्यौहारों आदि विविधताओं से

सम्पन्न देश है, जहां एक दूसरे को जानने-समझने से आपसी सम्बन्धों तथा राष्ट्रीय एकता बल मिलता है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी प्राय: कहते हैं कि पर्यटन लोगों को आपस में जोड़ने के साथ आर्थिक संपन्नता भी लाता है। गुजरात का मुख्यमंत्री रहते हुए उन्होंने हिन्दी फिल्मों के सुप्रसिद्ध नायक अभिनेता अमिताभ बच्चन को ब्राण्ड एम्बेसेडर बना 'कभी तो आइये गुजरात' नारे के साथ राज्य को पर्यटन में बहुत ऊपर पहंचा दिया था। 'पधारो म्हारे देश' नारे के साथ राजस्थान भी अपनी संस्कृति को विशेष पहचान दिला चुका है।

केंद्र सरकार द्वारा खेल एवं खिलाड़ियों को प्रोत्साहन देने का परिणाम पिछले दिनों संपन्न हुए राष्ट्रमंडल खेलों में भारत के उत्कृष्ट प्रदर्शन के रूप में सामने आया है। एडवेंचरस स्पोर्ट्स के प्रति आकर्षण होने से पर्वतारोहण, ट्रैकिंग और रिवर राटिंग जैसे साहसिक पर्यटन को बढ़ावा मिल रहा है। पर्वतीय क्षेत्रों में पुराने पर्यटक स्थलों के अलावा अब बड़ी संख्या में नए केन्द्र उभर रहे हैं। पूर्वोत्तर में शांति व्यवस्था स्थापित हो जाने से ये सातों राज्य और सिक्किम भी पर्यटकों को आकर्षित कर रहे हैं। दक्षिणी राज्य केरल पंचकर्म एवं प्राकृतिक चिकित्सा को लोकप्रियता बना स्वास्थ्य पर्यटन में अपना विशेष स्थान बना चुका है। अनेकों स्थानों पर बिना रासायनिक खाद व कीटनाशकों के प्रयोग के अपनाई जा रही खेती, गैर परंपरागत कृषि तथा बेमौसमी सब्जियों व फलों के उत्पादन के प्रयोगों को प्रोत्साहन भी पर्यटन को बढ़ाने में सहायक है। लोगों द्वारा पर्यटन को जीवन शैली का अंग मानने का चलन बढ़ने का भी लाभ होने लगा है तथा नए स्थानों पर जाने व नए लोगों से मिलने की चाहत और धार्मिक एवं मनोरंजक यात्राओं की इच्छा जगने से पर्यटन के प्रति लोगों का रुझान बढ़ रहा है। केवल मुगल विरासत को ही पर्यटन समझने की बात अब लोगों के मन से काफी हद तक उतर चुकी है।

उत्तराखण्ड का भविष्य है फलोद्यान

विकास शब्द को शाब्दिक अर्थ यों तो 'खुलना, खिलना या फैलाव' होता है किन्तु परिवार, समाज, राज्य व राष्ट्र आदि के सन्दर्भ में इसका सामान्य अर्थ 'वृद्धि, विस्तार व उन्नति' होता है। सही मायनों में विकास का अर्थ संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता, उसमें रहने वाले नागरिकों की सम्पन्नता तथा सेवाओं और सुविधाओं का विस्तार माना जाता है। जहाँ तक संसाधनों का प्रश्न है तो ये प्राकृतिक भी हो सकते हैं, जिसका दोहन किया जा सकता है या फिर सृजित किये जा सकते हैं। नागरिकों की सपन्नता का सीधा-साधा सम्बन्ध उनकी आय से है जो रोजगार, सम्पत्ति व सहायता से प्राप्त होती है। सेवायें और सुविधायें राज्य के अपने संसाधनों तथा उसे अन्य सगातों से प्राप्त सहायता पर निर्भर होती हैं।

राज्य के विकास के लिए किसी भी सरकार की पहली आवश्यकता संसाधनों के विकास की होती है जिससे उसका उपयोग व दोहन राज्य के लिए आय के रूप में किया जा सकता है। इसी कड़ी में रोजगार सृजन और इसके अवसरों में वृद्धि राज्य की बड़ी प्राथमिकता बन जाती है जिससे उसके नागरिकों की क्रय शक्ति बढ़ने के साथ-साथ उनकी खुशहाली तो सुनिश्चित होती है। राज्य के संसाधनों में सेवाओं और सुविधाओं के रूप में स्वास्थ्य, शिक्षा, सुरक्षा, सड़कें तथा बिजली-पानी और यातायात जैसी आधारभूत आवश्यकताएं आती हैं, जिनकी व्यवस्था राज्य को करनी होती है। विकास कर यह धुरी धन (अर्थ) पर ही चलती है अत: विकास को यदि आर्थिक उन्नति कहें तो यह अधिक उपयुक्त होगा।

कृषि, व्यापार उद्योग और सेवाएं विकास की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। शहरी विकास, ग्राम्य विकास और पर्यटन आदि से इन्हें जोड़कर केन्द्र और राज्य सरकारें कुछ योजनाऐं चलाती हैं और सहायता प्रदान करती हैं ताकि स्वरोजगार के साथ अन्य रोजगार के अवसर भी बढ़ें लेकिन क्रियान्वयन में शिथिलता और कई बार बेरुखी के चलते ये असफल भी हो जाती हैं। प्रदेश में स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना के हश्र से इसे समझा जा सकता है। सरकारी मशीनरी जहाँ इन योजनाओं को रुटीन के तरीके से लेती है वहीं कई बैंक, अभी भी सरकारी योजनाओं को बोझ जैसा ही मानते हैं और पर्याप्त रुचि नहीं लेते। अपने ऋण की सुरक्षा और उसकी वापसी सुनिश्चित करने के लिए बैंक के जमानत और सम्पत्ति बन्धक रखने के जटिल प्रावधानों के साथ अन्य औपचारिकताऐं भी गरीब लाभार्थी को हतोत्साहित करती हैं। यद्यपि बैंक अपने ऋणों की वृद्धि के लिए निरन्तर प्रयासरत रहते हैं लेकिन उनका वास्तविक लाभ पहले से ही सम्पन्न और सुविधाभोगी लोगों को ही अधिक मिलता है। बैंकों के आवास ऋण और शिक्षा

ऋण का विस्तार मध्यमवर्ग और निम्न मध्यमवर्ग तक अवश्य हुआ है लेकिन जब तक रोजगार सृजन के कार्यक्रमों को बल नहीं मिलता तब तक वास्तविक विकास की कल्पना अधूरी ही कहलायेगी।

संसाधनों के मामले में राज्य की अपनी सीमाएं हैं। प्रदेश में मैदानी क्षेत्र बहुत कम हैं, उस पर पहले से ही जनसंख्या का भारी दबाव है। बड़े उद्योग स्थापित होना काफी कठिन है, कच्चे माल की उपलब्धता भी नहीं के बराबर है और यातायात भी कठिन है, इसलिए कोई उद्योगपति इधर नही देख रहा है। कृषि क्षेत्र सिकुड़ रहा है जो चिन्ता का विषय है। बड़ी व्यापारिक गतिविधियाँ भी बड़े खरीददारों के अभाव में चल नहीं सकती। ले-देकर जंगल और जल ही संसाधनों के नाम पर बचे हैं। अधिकांश वन क्षेत्र संरक्षित है और उसका व्यापारिक दोहन नही हो सकता है। यों भी पर्यावरण की दृष्टि से वनों से किसी प्रकार की छेड़छाड़ ठीक नहीं है। जल की स्थिति भी चिन्ताजनक है, ग्लेशियर पीछे खिसक रहे हैं और नदियों में पानी कम हो रहा है। नदियों पर बनने वाले बांधों में गाद और सिल्ट भरने की समस्या अलग से है, बरसात में यह समस्या बढ़ जाती है और सर्दियों में नदियों में पानी नहीं रहता। नदियों पर बड़े और अधिक बांध पर्यावरण की दृष्टि से प्रतिकूल हैं और विस्थापन के कारण मानवीय दृष्टिकोण से भी अनुचित। संसाधनों में लिए राज्य के पास केन्द्र का मुँह देखने के अलावा कोई रास्ता दिखायी नहीं दे रहा है। केन्द्र सरकार की सहायता जनसंख्या के फार्मूले पर आधारित है और कम घनत्व होने से यह इस प्रदेश में मात्र एक करोड़ बैठती है। बड़ी आशाओं के साथ बने इस नये प्रदेश में हतोत्साहित करने वाले उपरोक्त विवरण के बाद आशा के लिए केवल दो ही क्षेत्र बचे हैं, ये क्षेत्र हैं पर्यटन और बागवानी, जिनके आधार पर पड़ोसी राज्य हिमाचल प्रदेश ने भारी प्रगति की है।

पर्यटन के मामले में प्रदेश काफी सम्पन्न माना जा सकता है। धार्मिक पर्यटन के रूप में श्री बद्रीनाथ धाम, केदारनाथ, गंगोत्री, यमुनोत्री, हरिद्वार व ऋषिकेश के साथ ही हेमकुण्ड साहिब व पिरान कलियर तथा पर्यटक केन्द्रों में मसूरी, नैनीताल, रानीखेत, व कौशानी, साहसिक पर्यटन के लिए औली, हर की दून व कौड़िया सहित अनेकों स्थान यहाँ उपलब्ध हैं जो रोजगार एवं आय के बड़े माध्यम हैं। पर्यटन के लिए सुनियोजित नीति बनाकर और उसे उद्योग का दर्जा देकर इस क्षेत्र मे काफी कुछ किया जा सकता है। प्रदेश की भौगोलिक परिस्थिति और गांवों की संरचना के अनुकूल विकास के लिये एक अन्य क्षेत्र है, बागवानी और कृषि सहायक गतिविधियाँ। जिसके साथ आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था कर पलायन काफी सीमा तक रोका जा सकता है। सहायक कृषि गतिविधियों और फलोद्यान के क्षेत्र में अपार सम्भावनाएं हैं, लेकिन इनमें से कौन-कौन सी इस

पर्वतीय प्रदेश के लिए उपयुक्त हैं और उन्हें किस प्रकार से संचालित किया जा सकता है, इस ओर प्रदेश पर पड़ने वाले वित्तीय भार को से संचालित किया जा सकता है, इस ओर प्रदेश पर पड़ने वाले वित्तीय भार को कम से कम कैसे रखा जाए, अधिकाधिक लोगों को इससे कैसे जोड़ा जाए तथा अन्य गतिविधियों के साथ इनका तालमेल कैसे बिठाया जाए, इन सब बातों पर विचार करने पर जो समाधान सूझता है वह ठीक से अमल मे किये जाने पर कारगर भी सिद्ध हो सकता है। पहाड़ों की सबसे बड़ी आवश्यकता वृक्षों की है जो न केवल मिट्टी को जकड़ कर रखते हैं बल्कि अच्छी वर्षा के भी कारक होते हैं। फराणों में कहा गया है कि 'एक वृक्ष दस फत्र समान' वृक्षों से फल, फूल चारा व ईन्धन तो मिलता ही है, कुछ वृक्षों की गुठलियों और बीज का भी अच्छा उपयोग है। कई के छाल, पत्ते व जड़ भी मसाले व औषधियों के रूप में प्रयोग मे लाये जाते हैं। अलग अलग वृक्ष अलग अलग मौसमों में फल देते हैं और न केवल भूख को शान्त करते हैं बल्कि अच्छे स्वाद का आनन्द भी देते हैं। अच्छे स्वास्थ्य के लिए मौसमी फल सबसे उपयुक्त माने जाते है। वृक्ष वास्तव में प्रकृति का अनमोल उपहार है। प्रदेश में अलग उचाई वाले कई क्षेत्र हैं, उच्च हिमालय, मध्य हिमालय, कम ऊचाई के तराई और मैदानी क्षेत्रों में तापमान अलग अलग होता है। अधिक ऊचाई वाले क्षेत्र जहाँ सेव और नाशपाती जैसे फलों के लिए उपयुक्त है। वहीं मध्य हिमालय क्षेत्र आड़ू, खुमानी, अनार और अखरोट के लिए तथा तराई और मैदानी क्षेत्र आम, लीची, पपीते व अमरूद के लिए अच्छे हैं। वृक्षों को लगाने में न तो बहुत अधिक और न ही निरन्तर श्रम की आवश्यकता है। इसके लिए महंगे उपकरण भी नहीं चाहिए।

पहाड़ों में अम्लीय पादपों के लिए भी अनुकूल वातावरण है। मौसमी, नारंगी व संतरे आदि के पेड़ लगाकर नियमित आय प्राप्त की जा सकती है इसमें भी लागत और श्रम कम लगता है। हिमालय का यह पर्वतीय क्षेत्र औषधि पादपों के लिए भी उपयुक्त है। कई प्रकार की अमूल्य औषधियाँ यहाँ मिलती हैं। इनकी नियोजित खेती और संवर्धन अच्छी आय दिला सकता है। औषधियों वाले वश्क्ष जैसे हरड़, बहेड़ा, आंवला जामुन व नीम आदि भी पर्वतीय और मैदानी क्षेत्रों में लगाये जा सकते हैं। इन औषधियों की बाजार में अच्छी मांग हैं। करेले जैसे बेल पर होने वाले फल सब्जी में तो प्रयुक्त होते ही हैं, सुखा कर औषधियों में भी प्रयुक्त होते हैं इनकी ओर सोचा जा सकता है।

कृषि की अपेक्षा फलोद्यान में खर्च भी काफी कम है तथा इनका लाभ काफी लम्बे समय तक मिलता है। रख-रखाव में भी बहुत अधिक श्रम, साधनों व धन की आवश्यकता नहीं पड़ती। बंजर खेती व बिखरते परिवारों के स्थान पर फलों से लदे पेड़ और लोगों की चहल पहल गांवों की रौनक ही लौटायेगी।

आवश्यकता सामूहिक प्रयासों की है जिस पर हम आगे चर्चा करेंगे। खेती की रक्षा के लिए तो इसे पालतू व जंगली जानवरों आदि से बचाना पड़ता है लेकिन वृक्षों के लिए आरम्भिक अवस्था को छोड़ कर, बाद में इसकी इतनी चिन्ता नहीं करनी पड़ती।

किसी भी कार्य की तरह फलोद्यान के लिए भी कुछ तत्व आवश्यक है, जैसे आधारभूत ढांचा अर्थात भूमि, उपयुक्त कार्ययोजना, काम करने वाले लोग, वित्तीय संसाधन व अन्य आवश्यक सहायतायें आदि। ऐसे बहुत से गाँव हैं जहाँ से लोग बाहर जाकर बस गये हैं, उनके नाम पर पुश्तैनी भूमि है, जिससे उन्हें मोह है लेकिन किसी प्रकार का लाभ नहीं। यह भूमि बंजर पड़ी है, इस भूमि का फलोद्यान्न के लिए अच्छा उपयोग हो सकता है। सरकार उपयुक्त कार्य योजना बना कर भूमि का अधिग्रहण कर सकती है और इसके प्रतिफल के रूप में सहकारी संस्था अथवा स्वयं सहायता समूह बना कर उन्हें अंशदान दे सकती है। इस भूमि को गांव में रहने वाले लोगों को सहकारी संस्था अथवा स्वयं सहायता समूह के माध्यम से फलोद्यान हेतु पट्टे पर देकर उन्हें भी अंशदान दिया जा सकता है। वित्तीय संस्थायें पूरी योजना का आंकलन कर तथा लाभप्रदता की गणना कर उपयुक्त अवधि के लिए दीर्घकालीन, मध्यकालीन व फसली ऋण दे सकती हैं। प्रदेश सरकार के पास वित्तीय संसाधन प्रचुर नही हैं, अत: वित्तीय संस्थाओं की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। वैसे भी ये गतिविधियां कृषि के अन्तर्गत आती हैं जो प्राथमिकता के क्षेत्र में हैं और वित्तीय संस्थाओं के लक्ष्य के अनुरूप है। योजनाओं के वित्तपोषण के लिये सरकार की भूमिका तृतीय पक्ष के जमानतकर्ता के रूप में होनी चाहिए ताकी वित्तीय संस्थाए इस ओर अरुचि न दिखायें। सरकार के विभिन्न विभागों की भूमिका इसमें सहयोगी की होनी चाहिए। तकनीकी सहायता, प्रशिक्षण, उन्नत प्रजाति के बीज और पौधों की व्यवस्था, खाद, कीटनाशक और आवश्यक सहायक उपकरणों की व्यवस्था, भण्डारण और विपणन आदि में सहयोग करने के साथ साथ सिंचाई और वैकल्पिक ऊर्जा के उपाय आदि सरकार को करने होंगे।

योजना की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि मृदा (Soil) की उपयुक्तता तथा भूमि की उपलब्धता आदि का परीक्षण कर क्लस्टर एप्रोच अपनाया जाए, जिससे एक गाँव व उसके आसपास के गाँव एक ही प्रकार के फलों का उत्पादन करें ताकि वे स्थान उस प्रकार के फल के लिए पहचान बना लें और विभिन्न कार्यदायी व सहायक संस्थाओं में तालमेल आसान हो सके। अलग अलग ऊचाँई, तापमान और मृदा प्रकार, सिंचाई व्यवस्था, यातायात सुविधा आदि को देखते हुए इन स्थानों का वर्गीकरण और प्राथमिकता निर्धारण किया जाना चाहिए। एक बार प्रवासी लोग इस गतिविधि से जुड़ जाते हैं तो यह उनका अपनी मिट्टी की

और लौटना होगा। यही नहीं, उनकी आने वाली पीढियाँ भी अपने मूल से जुड़ेंगी। गाँव से पलायन रोकने और वहां की चहल-पहल लौटाने की दिशा में यह एक बड़ा कदम होगा। रोजगार के साथ यदि स्वास्थ्य और शिक्षा की व्यवस्था भी हो जाती है तो छोटी मोटी नौकरियों के लिए शहर की ओर रुख करने वालों को गाँव में रुकने को सोचना ही पड़ेगा। गाँवों में खुशहाली और रौनक लौटने के साथ ही पलायन जैसी विकराल समस्या भी कुछ सीमा तक हल हो जाएगी। यदि ऐसा हो जाता है तो प्रदेश के लिए यह स्थिति निश्चय ही अति सुखद होगी।

भण्डारण और विपणन की समस्या कभी कभी कृषि उद्यमियों को हतोत्साहित करती है लेकिन इस प्रदेश के लिए यह कठिन नही होना चाहिए। प्रदेश में इतने पर्यटक आते हैं और वे इस ओर आकर्षित होगा ही। वैसे भी फल और जूस के क्षेत्र में बड़ी कम्पनियाँ प्रवेश कर रही हैं जो उत्पादन से पहले ही पूरे-पूरे खेतों का सौदा कर लेती हैं। कई फसलों के तो बीमे की भी सुविधा है और कोई प्रकोप आदि होने पर आर्थिक हानि से बचा जा सकता है। भण्डारण की नयी नयी तकनीकें भी प्रयोग में हैं, लेखक को हिमाचल प्रदेश के रोहड़ू जिले में नोमानी ग्रुप का कई करोड़ रूपये का प्रकल्प देखने का अवसर मिला जहाँ भण्डारण के साथ ही रंग, मिठास, आकार आदि के आधार पर कई प्रकार की ग्रेडिंग और पैकिंग आदि सब कुछ आटोमैटिक है। फलोद्यान से पैकिंग और ट्रांसपोर्टेशन के क्षेत्र में भी उद्योग के अवसर पैदा होंगे। जूस, जैली और जैम बनाने के लिए कुटीर उद्योग भी पनप सकते हैं। प्रवासी लोगों का आवागमन बढ़ने से अतिथ्य सम्बन्धी गतिविधियों को भी बल मिलेगा और गाँवों में न केवल सहकारिता व सौहार्द का वातावरण बनेगा बल्कि आय भी बढ़ेगी। भूमि का सदुपयोग होगा चीड़ जैसे हानिकारक वृक्ष नहीं पनपेंगे। जंगली जानवरों से निजात मिलेगी और वर्षा का क्षेत्र भी बढेगा जिसके कई लाभ हैं।

उपरोक्त कथन में हो सकता है कि थोड़ी बहुत अतिशयोक्ति हो गयी हो लेकिन योजना सचमुच महत्वाकांक्षी होने के साथ व्यावहारिक रूप से भी सम्भव है। इसे प्रोयोगिक तौर पर कुछ चुने हुए गाँवों में लागू किया जा सकता है। प्रदेश के योजनाकार ऐसी योजनाओं पर क्या और किस तरह से सोचते हैं, इस पर काफी कुछ निर्भर करता है। प्रदेश में सत्तारूढ़ पार्टी के मार्ग दर्शक के रूप में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने ऐसी विकासात्मक परियोजनाएं आरम्भ करने पर बल दिया है। उसका एक अग्रणी संगठन 'उत्तराँचल उत्थान परिषद' प्रदेश में ग्राम्य विकास की दिशा में पहले से ही कार्यरत है। इस अनुकूल वातावरण में यदि प्रदेश में फल-फूल बढ़ते हैं तो प्रदेश भी पुष्पित पल्लवित और विकसित होगा।

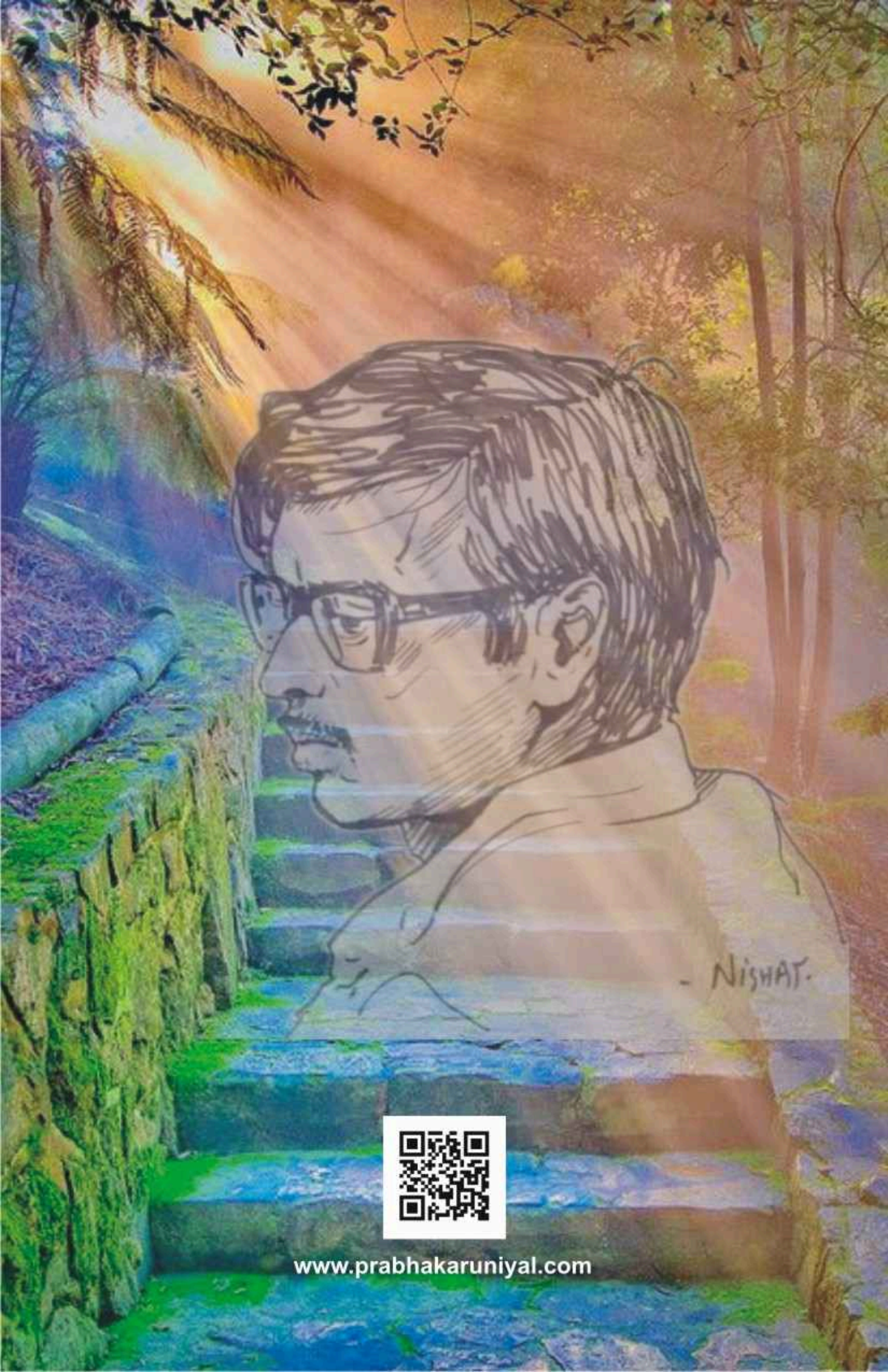

www.prabhakaruniyal.com